यतिकर्त्तव्य प्रबोध संग्रह

— संकलन/सम्पादन :—

परम पूज्य १०८ आचार्य श्री चन्द्रसागर जी महाराज
(मुख्य शिष्य सि च आचार्य श्री सन्मतिसागर जी)

—' भेंटकर्त्ता :—

स्वनाम धन्य श्रावक श्रेष्ठि श्रीमान् मुकेश जी जैन
नवीन भारत ऊलन एण्ड काटन इण्डस्ट्रीज
पो बा ६० रोशन महल स्पातुनवालान स्ट्रीट
पानीपत (हरयाणा)
के सौजन्य एव अर्थ सहयोग से प्रकाशित

— प्रकाशक —

श्री बुन्देलखण्ड स्याद्वाद परिषद (रजि.)
वीतरागवाणी प्रकाशन कार्यालय
सैल सागर टीकमगढ (म प्र)

प्रथमावृत्ति	अक्टूबर	लागत मूल्य
१०००	१९९७	६० ००
		(नि शुल्क भेट)

यतिकर्त्तव्य प्रबोध संग्रह

- **सकलन/सम्पादन**
  प पू १०८ आचार्य श्री चन्द्रसागर जी महाराज

- **प्रथमावृत्ति** १०००

- **अक्टूबर** १९९७

- **लागत मूल्य** ६० ०० (नि शुल्क भेट)

- **ग्रथ प्रकाशन एव सहयोग**
  श्रीमान् मुकेश जी जैन
  नवीन भारत ऊलन एण्ड काटन इन्डस्ट्रीज
  रोशन महल पानीपत (हरयाणा)

- **प्रकाशक**
  श्री बुन्देलखण्ड स्याद्वाद परिषद (रजि)
  वीतरागवाणी प्रकाशन सैल सागर टीकमगढ (म प्र)
  फोन (07683) 32592

- **मुद्रक**
  ब्रजेश कासलीवाल
  ईगल ऑफसेट आर्य समाज रोड कोटा – 324006
  फोन (0744) 329006

जिनके पावन सान्निध्य मे ग्रथ का विमोचन हुआ



परम पूज्य आचार्य श्री पुष्पदत सागर जी महाराज

जिनकी प्रेरणा एव आशीर्वाद से इस ग्रथ का प्रकाशन सम्भव हुआ



प पू. मुनि श्री सौरभसागर जी महाराज



प पू. मुनि श्री पुण्यसागर जी महाराज



श्री मुकेश कुमार जैन सपरिवार

श्रीमान मुकेश कुमार जी जैन सुपुत्र श्रीमान् पदम सेन जी गौहर धर्मपत्नि श्रीमति आशा जैन पुत्री कु दिव्या जैन एव पुत्र चि मयूर जैन, पानीपत (हरयाणा)

फर्म :

नवीन भारत ऊलन एवं कॉटन इन्डस्ट्रीज

रोशन महल, पानीपत (हरयाणा)

श्रीमान भाई मुकेश जैन पानीपत जैन समाज के प्रतिभाशाली प्रतिष्ठित उद्योगपति है। जैन धर्म–समाज–साहित्य के लिए समर्पित विनम्रता की प्रतिमूर्ति है। आपके मिल का निर्मित माल विदेशो मे एक्सपोर्ट होता है। सत्यनिष्ठा माल की गुणवत्ता की छवि विदेशो मे है। भारत सरकार में आपको सफल सत्यनिष्ठ उद्योगपति के रूप मे सम्मानित किया है। इस ग्रथ के प्रकाशन का व्यय भार आपने स्वीकार किया है। जिनवाणी का मत महान कार्य आपके समृद्ध यशस्वी उन्नतिशील दीर्घा जीवी धर्ममय जीवन का हेतु बने इस मगल भावनाओ के साथ हमारी सद्भावनाऐ आपके साथ है।

प्रतिष्ठाचार्य प विमल कुमार जैन सोरया
महामंत्री – परिषद

प्राक्कथन

(सामायिक विधि)

जीविय मरणे लाहा लाहे सजोगाविप्प जोरोय
वधुरिसुह दुवरवादो समदा सामाइयणाम ।।

जीवन मरण लाभ अलाभ सयोग वियोग शत्रु मित्र सुख दुख मे समता परिणाम को सामायिक कहते है।

सामायिक का प्रयोजन -

मनुष्य मुनी पद ग्रहण करते समय प्रतिज्ञा करता है और कहता है कि मै सपूर्ण पापो से विरक्तरुप चारित्र को स्वीकार करता हूँ। "तत्पश्चात आहार विहार उपदेशादि मे प्रवृत्ति करता हूँ। उस समय छेदोपस्थापना चारित्र होता है। ऐसा व्यवहार है जो गृहस्थ अवस्था मे सम्पूर्ण पाप रुप प्रवृत्ति थी उससे विरक्त होकर सर्व पापो का त्याग किया, परन्तु जितने सरागभाव है वे पुण्य रुप प्रवृत्ति का आश्रय है। परम वीतराग चारित्र के उदय मे है। उसके लिये तीन सध्या (प्रभात, मध्यान्ह, अपरान्ह) मे उत्कृष्ट छह छह घडी का नियम करता है। नीति सार मे बताया है कि प्रभात चार घडी रहने पर कृति कर्म प्रारम्भ करे और सूर्योदय पर्यन्त करे। और मध्यान्ह मे दो घडी कृति कर्म करे तथा अपरान्ह मे चार घडी दिन से प्रारम्भ करे और नक्षत्र दर्शन पर्यन्त करे। आहार विहार उपदेशादि क्रिया से निर्वृत्य हो कर एकान्त स्थान मे बैठकर अपने शुद्ध आत्म स्वरुप के सन्मुख होकर पर से भिन्न शुद्ध आत्म स्वरुप अरहन्त सिद्ध तथा शुद्ध आत्मा का ध्याता आचार्य उपाध्याय साधु इन पच परमेष्ठी का स्मरण ध्यान पूर्वक पाठ या अपनी प्रवृत्ति मे लगे दोषो का पाठ पढे। उसका अनुक्रम यह आवश्यक है। वह साधु कृति कर्म करता है। उसमे बत्तीस दोषो मे से एक भी दोष लगता है तो कृति कर्म का फल निर्जरा को प्राप्त नहीं होता इसलिये सपूर्ण दोषो को दूर करने पर शुद्धि होती है तब यथार्थ फल प्राप्त होता है।

सपूर्ण जीवो मे क्षमा होने पर तप वृत कहलाता है। शुभ भाव की वृद्धि अथवा आर्त रौद्र भाव से रहित सामायिक कहा गया है। तात्पर्य यह है कि पाच स्थावरो मे पृथ्वी को खोदना नहीं, जल का अलोडन नहीं, अग्नि को जलाना बुझाना नहीं, पखा आदि से वायु काय को नष्ट नहीं करना, बनस्पति का छेदन भैदन नहीं करना। यह पाच स्थावर है ये एकेन्द्री जीव है, इनके

प्रति समता भाव करके दया पूर्वक अभयदान देता है। घात नहीं करता तथा दो इन्दीय आदि त्रस स्थावर को समान जान कर त्रस हिंसा का त्याग करने वाला सबका घात नहीं करता है। अपने समान समझ कर सब के साथ समता भाव रखकर अपनी तरफ से सब को सुखी चाहने वाला त्रस स्थावर जीवो को अभय दान देने की परिणति रखता हुआ अतरग और बहिरग बारह बारह प्रकार का सयम पालता है। उसकी वृद्धि करता है। तत्पश्चात् आर्त रौद्र भाव का त्यागी होता है। इस प्रकार की सामायिक मे पाच अतिचार होते है। (१) मन (२) वचन (३) काय (४) विस्मरण (५) अनादर। सामायिक करते समय समता भावो को छोडकर प्रमाद से अनेक आर्त्त रौद्र भाव का विकल्प करना मन अतिचार कहलाता है। सामायिक करते समय पच परमेष्ठी की स्तुति आलोचना तत्व विचार वैराग्य भाव चितवन ध्यान, अध्ययन इत्यादि, शुभ क्रिया को छोडकर प्रमाद के वशीभूत होकर दुष्ट बचन बोलना वचन अतिचार कहलाता है। समायिक करते समय सुखासन छोडकर प्रमाद से आसन चलायमान करना काय अतिचार कहलाता है। सामायिक करते समय पाठ का भूल जाना या भ्रम इस पाठ को पढा या नहीं इस प्रकर का होना विस्मरण अतिचार कहलाता है। आदर रहित जल्दी-जल्दी पाठ पढना अनादर अतिचार कहलाता है। इनको दूर करने पर सामायिक व्रत शुद्ध कहलाता है।

इसी प्रकार सामायिक के ३२ दोष और होते है। इनको वृतधारी धर्मात्मा दूर कर निर्दोष सामायिक करते है।

(१) अनादर (२) ततधू (३) प्रतिष्ठा (४) प्रतिपीडित (५) दोलायत (६) अकुश (७) कच्छप (८) मच्छोवृत्ति (९) मनोदुष्ट (१०) वध (११) भय (१२) विभ्य (१३) गौरवसिद्धि (१४) गोरव (१५) अन्यति (१६) प्रत्यनि (१७) प्रदुष्ट (१८) तर्जित (१९) शब्ददोष (२०) हीलित (२१) त्रिवलित (२२) कुचित (२३) दृष्टि (२४) अदृष्ट (२५) करमोचन (२६) लब्धि (२७) अलब्धि (२८) हीन (२९) उवरति चूल (३०) मूक (३१) दुर्दर (३२) चूलित।

(१) सामायक नमस्कारादि क्रिया प्रमाद पूर्वक और विनय रहित करना अनादर दोष है।

(२) सामायक करते समय विद्या पूर्वक उद्धततासे अशुद्ध क्रिया करना ततधू दोष है।

(३) प्रतिमा के अति निकट सामने सामायिक करना प्रतिष्ठा दोष है।

(४) दोनो हाथो से जघा को दबाकर नमस्कार करना प्रतिपीडित दोष है।

(५) सामायिक पाठ भूल जाना तथा शुद्ध पढने पर सशय होना यह पाठ पढा या नहीं ऐसी मन की चचलता और शरीर को हिलाना दोलायता दोष है।

(६) हाथ की अगुली अकुशाकार करके मस्तक से लगाकर नमस्कार करना अकुश दोष है।

(७) सामायिक करते समय कटि को हाथ लगाकर शरीर को कछुये के आकार करना कच्छप दोष है।

(८) सामायिक करते समय कटि (कमर) को हिलाना चचल करना मच्छो वृत्ति दोष है।

(९) सामायिक करता हुआ सूर्य के ताप को सहने मे असमर्थ होकर क्लेश पूर्वक नमस्कार करना मनोदुष्ट दोष है।

(१०) सामायिक करता हुआ शरीर को हाथ से दाब कर बाधना बध दोष है।

(११) सामायिक करते समय कोई देव मनुष्य सिह, सर्पादि जीवो के डर से कायोत्सर्ग करना भय दोष है।

(१२) सामायिक करते समय स्थिरता नहीं रखना धर्म फल की इच्छा नहीं करता परन्तु गुरु तथा सिह आदि के भय से परमार्थ रहित सामायिक करना विम्य दोष है।

(१३) चतुर्विद्य सघ को प्रसन्न करने के लिये तथा अपनी महिमा सुनने के लिए सभा मे सामायिक करना गौरवसिद्ध दोष है।

(१४) अपनी प्रसिद्धि के लिए इन्द्रिय सुख के लिए, मान बडाई के लिए सामायिक करना गौरव दोष है।

(१५) प्रमाद प्रगट के कारण गुरु के पास सामायिक न करके एकान्त मे छिपकर सामायिक करना अन्यति दोष है।

(१६) गुरु आज्ञा बिना और गुरु के प्रति कूल होकर सामायिक करना प्रत्यनि दोष है।

(१७) सामायिक करते समय द्वेष भाव रखना युद्ध करने का कलह करने का अभिप्राय प्रदुष्ट भाव है।

(१८) गुरु से ताडित होकर सामायिक करना तर्जित दोष है।

(१९) सामायिक करते समय मान छोडकर बोलना शब्द दोष है।

(२०) गुरु के प्रति अविनय, स्वय के मोन खडन के मायाचारी के भाव से होना हीलित दोष है।

(२१) सामायिक करते समय ऊचा होकर त्रिवली भग करना तथा ललाट पर त्रिवली करना त्रिवलित दोष है।

(२२) शिर को हाथ से कर शरीर को सकुचित करना कुचित दोष है।

(२३) गुरु या अन्य के देखते हुये सविनय खडे होकर शरीर शुद्ध करके विधि पूर्वक करना और नही देखने पर प्रमाद सहित स्वेच्छाचारी होकर चारो तरफ देखता हुआ शरीर और मन की चचलता पूर्वक सामायिक करना टिष्ट दोष है।

(२४) गुरु से रुष्ट होकर सघ और वृद्धि मुनियो से छिपकर अपने शरीर की सुन्दरता देखकर तनमन को चचल रखना अदृष्ट दोष है।

(२५) चतुर्विद्य सघ और अन्य जनो को प्रसन्न करने के लिये सामायिक करना करमोचन दोष है।

(२६) पीछी आदि उपकरण प्राप्ति के हेतु से सामायिक करना लब्धि दोष है।

(२७) भावकोचित उपकरण की प्राप्ति हेतु सामायिक करना अलब्धि दोष है।

(२८) समय का उल्लघन करना ज्ञान प्राप्ति हीन भाव पूर्वक सामायिक करना हीन दोष है।

(२९) जल्दी जल्दी क्रिया करके अल्प समय मे सामायिक करना पाठ को बार बार भूलना उवरति चूलदोष है।

(३०) सामायिक पाठ करते हुए गूगे की तरह सकेत करना मूक दोष है।

(३१) सामायिक करते समय जोर जोर से पढना दुर्दर दोष है।

(३२) सामायिक करते समय एकासन से एक क्षेत्र मे बैठा हुआ सभी देवगुरु की स्तुति करना नमस्कार करना पाठ मीठे स्वर से पढना अन्य जनो को रजाय मान करना चूलित दोष है। इन दोषों से रहित शुद्ध सामायिक होती है।

सामायिक मे जो कायोत्सर्ग किया जाता है। उसके २२ दोष होते हैं। (१) घ्योटिक (२) लता (३) स्तभ (४) कुडया (५) माला (६) बधू (७) लम्बोत्तर (८) तनदृष्टि (९) वायस (१०) पालन (११) जुग (१२) कपित्थ (१३) सिरकपिता (१४) मूक (१५) अगुल (१६) भूविकार (१७) सुरापायी

(१८) दिशावलोकन (१९) ग्रीवा (२०) परिनिमन (२१) निष्ठीवन (२२) अग स्पर्श।

(१) एक पैर के घोटू को आगे करके कायोत्सर्ग करना घोटिक दोष है।

(२) शरीर को बार बार टेढ़ा करना लता दोष है।

(३) खंभे का सहारा लेना स्तम्भ दोष है।

(४) भीत का आश्रय कर शास्त्रार्थ चितन से शून्य और महल गुफा गृह कुटी मडपादि की इच्छा करना कुडया दोष है।

(५) कायोत्सर्ग करते समय ऊचा सिहासन पाटा चौकी पर खडा होना माला दोष है।

(६) लज्जा सहित स्त्री के समान हाथ से अग दबाकर खडे होना वधू दोष है।

(७) कायोत्सर्ग करते समय लम्बा हाथ करके आधा नमस्कार करना लम्बोत्तर दोष है।

(८) कायोत्सर्ग करते समय अपने शरीर को अच्छा कोमल सुन्दर स्वभाव देखकर हर्षित होना इससे विपरीत लक्षण दुखी होना तनदृष्टि दोष है।

(९) कायोत्सर्ग करते समय कौआ की तरह नेत्र चचल करना चारों दिशाये देखना वायस दोष है।

(१०) कायोत्सर्ग करते समय दातो के कटकटा या गर्दन शरीर कठोर रखना पालन दोष है।

(११) कायोत्सर्ग करते समय गर्दन ऊची नीची करना जुग दोष है।

(१२) कायोत्सर्ग करते समय मुट्ठी बाधना कपित्थ दोष है।

(१३) शिर को हिलाना शिर कपित दोष है।

(१४) मुख नाक नेत्र विकृत करना मूक दोष है।

(१५) हाथ पैर की अगुलिया हिलाना अगुल दोष है।

(१६) नेत्र विकृत करना भौह धनुष के आकार करना भ्रू विकार दोष है।

(१७) मदिरा पीने के समान शरीर घुमाना सुरापायी दोष है।

(१८) नीचा और दशों दिशाओं में देखना दिशावलोकन दोष है।

(१९) गर्दन को इधर उधर हिलाना ग्रीवा दोष है।

(२०) ध्यान को छोडकर अन्य क्रिया करना परिनमन दोष है।

(२१) कायोत्सर्ग करते समय मुख से थूकना, नाक कान का मल निकालना, शरीरागोपाग को मरदन कर मल निकालना मुख मे जीभ हिलावे दातों को होठ पर्यंत चलावे पघासन से बैठा पाव तलवे छूना या मसलना निष्ठीवन दोष है।

(२२) कायोत्सर्ग करते समय मूत्र करने का स्थान लिग मल निकालने के स्थान गुदा के स्पर्श करना अग स्पर्श दोष है। इन दोषो से रहित शुद्ध कायोत्सर्ग होता है।

सामायिक के स्थान

सूना महल, घर, मन्दिर, स्वामित्व रहित मडप, सिहादि की गुफा तथा वन, स्मशान, वृक्ष की कोटर जिन मन्दिर इत्यादि एकात स्थान शुद्ध देखकर सामायिक करना वहा पर अतिशीलतम् अति उष्णता दसमशकादि से रहित हो कोलाहल से रहित, युद्ध से रहित, कटु शब्दो से रहित इत्यादि। शुद्ध प्रासुक जीव रहित वैराग्य वर्धक निर्जन स्थान मे बैठकर मन वचन काय की, एकाग्रता कर शुद्धि करके सब जीवो से दया भाव कोमल भावना से सामायिक करना चाहिये सामायिक की प्रतिज्ञा करने वाला उत्तम श्रावक कहलाता है। सामायिक करते समय लगोट मात्र आदि अल्प परिग्रही होना चाहिये अथवा अपरिग्रही मुनि अथवा मुनि के समान निर्मल परिणाम बनाना चाहिये। अपने मन से ममता परिणाम को छोडकर वैराग्य भावना पूर्वक मोक्ष मार्ग का इच्छुक धर्मी श्रावक या मुनि जो चारो गति के शुभाशुभ शरीर को नहीं चाहता हुआ अपने पद मे स्थिर होता हुआ ऊपर चढने का इच्छुक ससार सुख से उदासीन होता है। सामायिक व्रत का धारण करने वाला होता है।

सामायिक विधि

चर्तुदिशावदना - पूर्व दिशा मे सर्व प्रथम नौ बार णमोकार मत्र का जाप करके पूर्व दिशा विदिशा मे केवली, जिन, सिद्ध, साधु, गण, देव, समस्त ऋद्धियो से समृद्ध योगीगणो को नमस्कार करता हूँ।

दक्षिण दिशा में नौ बार णमोकार मत्र का जाप करके दक्षिण दिशा विदिशा मे केवली, जिन, सिद्ध, साधु गण, देव, समस्त ऋद्धियो से समृद्धि योगियो को नमस्कार करता हूँ।

पश्चिम दिशा मे नौ बार णमोकार मत्र का जाप करके - पश्चिम दिशा

विदिशा मे केवली, जिन, सिद्ध, साधु गण, देव, समस्त ऋद्धियो से समृद्ध योगि गणो को नमस्कार करता हूँ।

उत्तर दिशा मे नौ बार णमोकार मत्र का जाप करके - पश्चिम दिशा विदिशा मे केवली, जिन, सिद्ध, साधु गण, देव, समस्त ऋद्धियो से समृद्ध योगि गणो को नमस्कार करता हूँ।

दोनो हाथो को मुकुलित कर उनकी कुहनियो को उदर पर रख कर यथा स्थान मस्तक झुकते हुये प्रतिवदन करना चाहिये।

तीर्थकर केवली, सामान्य केवली, समुद्घात केवली, उपसर्ग केवली, मूक केवली, अतकृत केवली को नमस्कार हो, तीर्थकरोपदिष्ट श्रुत ज्ञान के लिये नमस्कार हो सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र धारी आचार्य उपाध्याय साधुओ को नमस्कार हो।

सामयिक विधि एव दीक्षा विधि मे यह प्रशस्ति देना।

मूल सघ मे कुन्द कुन्दाचार्य की आम्नाम मे बलात्कार गण मे सेनगच्छ मे नही सघ की परम्परा मे मुनि कुजर कालिकाल तीर्थकर आचार्य शिरोमणि श्री आदिसागर अकलीकर के शिष्य आचार्य महावीर कीर्ति के शिष्य आचार्य विमल सागर के शिष्य आचार्य सन्मति सागर के शिष्य आचार्य रयणसागर के शिष्य आचार्य चन्द्रसागर मे भरत क्षेत्र मे आर्यखण्ड मे भारत देश मे प्रान्त मे नगर मे जिन चैत्यालय मे आज वीर निर्वाण स मासोत्तम मे पक्ष मे शुभ तिथि वार प्रात काल। मध्यान्हकाल। सायकाल मे घटिका पर्यत सर्व सवाद्य से विरक्त होता है।

सामायिक मे बठने के पश्चात पहली प्रवर्ति मे दोष लगे हो उसको मिथ्या करने रुप प्रति क्रमण पाठ है। उसके बाद समस्त राग द्वेष रहित समता भाव रुप सामायिक पाठ है। तत्पश्चात् चतुर्विशति तीर्थकर रुप स्तवन पाठ है। बाद मे एक तीर्थकर के गुणानुवाद रुप वदना पाठ है। उसके बाद पाप क्रिया का त्याग रुप प्रत्यावान पाठ है। तदनन्तर कायोत्सर्ग पाठ रुप मुनिराज नियम पूर्वक सदा प्रवर्ती करते है। इसको वाचकर मद बुद्धि भव्य जीव सामायिक की विधि तथा स्वरुप जानकर एक मात्र कर्मो का क्षय करना ही प्रयोजन है।

इस ग्रथ को भव्यो के कल्याणार्थ आचार्य प्रणीत ग्रथो से सग्रहीत किया

है। इस ग्रथ से यति जनो को दैनिक पाठ मे भी सुलभता प्राप्त होगी। मै उन समस्त परम्परागत आगम आचार्यो को नमस्कार करता हूँ जिन्होने भव्यो के कल्याण के लिए यह सब कुछ लिखा है। इस ग्रथ के प्रकाशन मे जिनागम प्रेमी श्रीमान् मुकेश कुमार जी जैन नवीन भारत ऊलन एण्ड काटन इन्डस्ट्रीज रोशन महल पानीपत (हरयाणा) ने सद्दान देकर महान कार्य किया। अत उन्हे एव उनके परिवार को हमारा कल्याणकारी आशीर्वाद है।

भारतीय जैन समाज के सुप्रसिद्ध प्रतिष्ठाचार्य एव साहित्यकार विद्वान श्रीमान् प विमल कुमार जी जैन सोरया टीकमगढ (म प्र) महामत्री श्री बुन्देलखण्ड स्याद्वाद परिषद को मेरा आशीर्वाद है। जिन्होने इस ग्रथ को अपनी सस्था से प्रकाशित कराने मे पूरा योग दिया। श्री ब्रजेश कासलीवाल मालिक ईगल ऑफसेट प्रेस कोटा को मेरा आशीर्वाद है जिन्होने अल्प समय मे इस ग्रथ का शीघ्र मुद्रण कर प्रदान किया। इति शुभ।

दिनाक
३१ १० ९७

आचार्य १०८ श्री चन्द्रसागर जी महाराज
(मुख्य शिष्य सिद्धान्त चक्रवर्ती १०८ आचार्य
श्री सन्मतिसागर जी महाराज)

प्रकाशकीय

देवाधिदेव भगवान महावीर स्वामी ने ससार के जीवो को जन्म मरण की कथा से मुक्त होने के लिए ज्ञानपूर्वक सयमाचारन की बात को अपनी अलौकिक वाणी द्वारा प्रतिबोधित किया है। सयम ही सद्गति और उत्कृष्ट गति अर्थात् मोक्ष का हेतु है। मिथ्या दृष्टि का सयम भी नौग्रेवेयक तक ले जाता है। परन्तु बिना सयम के अगपूर्व ज्ञान भी सद्गति का कारण हो यह आवश्यक नहीं है। महाव्रतीजनो के सयम को निर्दोष बनाये रखने के लिए आलोचना-प्राश्चित-प्रतिक्रमण-सामायिक एव जिनेन्द्र भक्तियो की आराधना का उपदेश भगवत गणधरा परमेष्ठी ने दिया है। प्रस्तुत ग्रथ मे यतीजनो एव महाव्रती जनो के लिए मुख्यत आवश्यक दैनिक-पाक्षिक-मासिक आदि क्रियाओं के सम्पादन हेतु पाठो का समाहार किया है। इस ग्रथ के सम्पादन मे जहा अनेक अन्य ग्रथो का सहयोग लिया है तो दूसरी और विमल भक्ति सग्रह एव हुम्भुज *पाठावलि जैसे उत्तम ग्रथो की सामग्री को चयनित करने मे पूरा पूरा* सहयोग रहा। उन महामगलमय परम्पराचार्यो के प्रति नतमस्तक है जिन्होने भक्तो के कल्याण के लिए यह सब कुछ लिखा है। उन ग्रथ सम्पादको के प्रति भी अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करते है जिनके सम्पादक ग्रथो से सहजता से सामग्री प्राप्त हो सकी। आशा है प्रत्येक भव्य-व्रती-महाव्रती इस लोकोत्तर ग्रथ से अपना कल्याण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

परमपूज्य प्रथमाचार्य श्री १०८ आदिसागर जी अकलीकर महाराज की मगल परम्परा के तृतीय पट्टाचार्य सिद्धान्त चक्रवर्ती १०८ आचार्य श्री सन्मति सागर जी महाराज के श्री चरणो मे नमोस्तु करता हूँ। जिनकी पावन प्रेरणा आशीर्वाद एव निर्देशन मे इस ग्रथ का यह दुर्लभ प्रकाशन सभव हो सका। परमपूज्य गुरु आज्ञानुवर्ती ज्ञान ध्यानतप युक्त आचार्य श्री १०८ चन्द्र सागर जी महाराज के श्री चरणो मे विनम्रतापूर्वक नमोस्तु करता हुआ कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके अथक श्रम से इस लोकोक्तर विशाल ग्रथ का सम्पादन सभव होकर प्रकाश मे आ सका।

स्व नाम धन्य श्रावक श्रेष्ठि श्रीमान मुकेश जी जैन नवीन भारत ऊलन एण्ड काटन इण्डस्ट्रीज पानीपत (हरयाणा) के विशेष आभारी है जिनके पवित्र दान से प्रदत्त सद्द्रव्य से इस महान ग्रथ का प्रकाशन सभव हो सका। श्री मुकेश जी का यह सद्दान अवश्य उन्हे केवल ज्ञान की प्राप्ति में सहकारी

होगा। दिगम्बर जैन समाज कोटा के भी आभारी है जिनके सद्दान सहयोग से इस ग्रथ की अतिरिक्त प्रतियो का प्रकाशन हो सका।

श्री बुन्देल खण्ड स्याद्वाद परिषद टीकमगढ (म प्र) जैसी समाज, धर्म, सस्कृति एव साहित्य सेवी सस्था से इस ग्रथ का प्रकाशन होने से सस्था का गौरव बढा है। अब तक लगभग ७० प्रकार के ग्रथो पुस्तको का लाखो की सख्या मे इस सस्था द्वारा प्रकाशन होना इस सस्था की अपनी यश गरिमा है। निकट भविष्य मे इस सस्था द्वारा अनेक दुर्लभ ग्रथो का प्रकाशन साकार होने जा रहा है। आशा है उनसे जहा अनेक भक्तो का उपकार तो होगा ही मा जिनवाणी का भण्डार भी भरेगा। इस ग्रथ को वर्तमान सभी दिगम्बर जैन आचार्य परमेष्ठीयो, मुनीराजो एव आर्यिका माताओ तथा समस्त व्रती-महाव्रती जनो के करकमलो मे भेट करते हुए अपार प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूँ। आशा है, प्रत्येक भक्त के हित मे यह ग्रथ कल्याण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

इस ग्रथ के सम्पादन मे परमपूज्य आचार्य श्री १०८ चन्द्रसागर जी महाराज ने अपना अथक श्रम किया यतियो के उपकार मे आचार्य श्री का श्रम वन्दनीय है।

श्रीमान ब्रजेश कासलीवाल मालिक ईगल ऑफसेट कोटा के आभारी है जिन्होने दिन रात श्रम कर चन्द दिनो मे इसका सुन्दर मुद्रण किया। आशा है भक्तो के लिए यह ग्रथ कल्याण का मार्ग प्रशस्त करेगा।

दीपावली
३१ १० ६७

प्रतिष्ठाचार्य सहिता सूरि प विमलकुमार जैन सोरया
महामत्री श्री बुन्देलखण्ड स्याद्वाद परिषद, टीकमगढ

आशीर्वाद

"आप्त वचनादि निबन्धनमर्थमागम"

अर्थात् सर्वज्ञ के वचनादि ज्ञान को आगम या परमागम कहते हैं। इसको सिद्धांत शास्त्र तत्त्वार्थ शासन आदि के नाम से कहा जा सकता हैं। स्मरणशक्ति के प्रबलता से गुरुपरम्परा से मौखिक ज्ञान चलता आया। पश्चात् धरसेन आचार्य के ज्ञान को पुष्पदंत भूतवली ने प्राप्तकर लिपीबद्ध किया। क्योंकि स्मरणशक्ति का पतन होता आया, तब लिपीबद्ध का क्रम चला आया। उससे अधिक भक्तआत्माऐं लाभान्वित नहीं हो सकी। उत्थानपतन होता रहा। लुप्तज्ञान को आदातीय आचार्यों ने अपने रत्नत्रय के तेज से भव्यों को दिशा प्रदान की। सभी भव्य प्राणियों को यथावसर ज्ञान प्राप्त हो इसी दृष्टिकोण से छपवाने को अपनाया गया।

अज्ञानांधकार के कूप से निकलकर सन्मार्ग मुक्ति मार्ग पद की ओर लगाने वाले भगवान महावीर के अनुयायी, अहिंसा के पुजारी प्रशांत मूर्ति परमाराध्य दक्षिणी भारत के वयोवृद्ध दिगम्बर संत आदर्श तपस्वी अप्रतिम उपसर्ग विजेता महामुनि, चारित्र चक्रवर्ती मुनिकुंजर समाधि सम्राट धर्मप्रर्वतक, देवाधिदेव दिगम्बराचार्य श्री १०८ श्री,श्री श्री आदिसागर जी महाराज अंकलीकर कहते थे कि ' मनुष्य भव का सार तप है" वह बाह्य और अभ्यंतर के भेद से दो प्रकार का हैं। उनके छह छह भेद हैं अंतरंग तप में स्वाध्याय उत्कृष्ट तप हैं। वाचने से, प्रश्नोत्तर से वस्तु के स्वाभाविक ज्ञान से बार बार याद करने से तत्त्वोपदेश से होता हैं। शुद्धात्मस्वरुप बनने का सरल उपाय है। समता परिणामों से परमात्मा के गुणों को पृथक पृथक विचारता हैं और फिर उन गुणों के समूह रुप परमात्मा को गुणगुणी में अभेद करके चिंतन करता हैं। पश्चात् किसी अन्य की शरण से रहित होकर परमात्मा में लीन होता हैं।

प्रस्तुत "यति कर्त्तव्य प्रबोधसंग्रह" नाम का ग्रंथ आचार्य चन्द्रसागर महाराज ने संपादित करके महावृत्तियों के लिये उत्तम कार्य किया हैं। इस ग्रंथ से यतिजन दैनिक कर्त्तव्य निर्वाह करने में सुगमता प्राप्त करेंगे।

इस संग्रह में सभी प्रकार की प्रतिक्रमणादि की सामग्री संग्रहीत की गई हैं। उन्होंने अपने अमूल्य समय का सदुपयोग किया हैं। भव्य प्राणी इसको पढ़कर सुनकर सुनाकर स्वात्मबोध को प्राप्त होगी।

इस प्रशस्त कार्य के लिए आचार्य चन्द्रसागर महाराज को मेरा आशीर्वाद हैं। तथा जिन्होंने शारीरिक प्रतिश्रम से वाचानिक श्रम के द्वारा, प्रतिष्ठाचार्य पं विमलकुमार जी जैन सौंरया टीकमगढ़ को जिन्होने बुन्देलखण्ड स्याद्वाद परिषद से इसके प्रकाशन दायित्व का निर्वाह किया है। एवं श्री मुकेश कुमार जी जैन पानीपत ने अपनी सत् द्रव्य दान से इस ग्रंथ को प्रकाशित कराया। उनका तन् मन् धन् का सदुपयोग हुआ, पवित्र हुआ, विशुद्ध हुआ यह जिनवाणी का प्रकाशन कार्य अच्छा हैं। अज्ञानांधकार को दूर करता हैं अतएव उन सभी महानुभावों को मेरा आशीर्वाद हैं।

आचार्य सन्मतिसागर अष्टान्हिकापर्व १९९७ -

अपनी बात

परमपूज्य आचार्य श्री चन्द्रसागर जी महाराज ने यतिकर्त्तव्य प्रबोध सग्रह नामक ग्रथ का सग्रह सम्पादन कर व्रतीजनों के लिए बहुत बड़ा कल्याणकारी कार्य किया है। देशव्रती से महाव्रती जनों तक के लिए दैनिक पाठ एव स्वाध्याय की परिपूर्ण जानकारी इस ग्रथ से सम्भव हो सकी है। आचार्य श्री ने दैनिक-पाक्षिक-चौमासा-वार्षिक आदि समयों में की जानेवाली समस्त पाठावलियो का इसमें समाहार कर दिया जिससे अनेक ग्रथों की अपेक्षा एक ही ग्रथ में सब कुछ सामग्री सुलभ हो गई।

जैन समाज के उन सभी श्रेष्ठि जनों तथा भाई श्री मुकेश जैन, पानीपत को भी मेरा आशीर्वाद है जिनकी सद् द्रव्यदान से इस महान ग्रथ का प्रकाशन सम्भव हो सका। श्री बुन्देलखण्ड स्याद्वाद परिषद के महामत्री प्रतिष्ठाचार्य प श्री विमल कुमार सोंरया टीकमगढ (म प्र) को भी मेरा बहुत-बहुत आशीर्वाद है। जिन्होने ऐसे लोकोत्तर ग्रथ को इस परिषद से प्रकाशित करने का सुयोग साकार किया। श्री ब्रजेश कासलीवाल मालिक ईगल ऑफसेट, कोटा को मेरा आशीर्वाद है जिन्होंने ग्रंथ को सुन्दर मुद्रण के साथ बहुत थोडे समय में छापकर दिया। आशा है भक्तों के कल्याण का मार्ग यह ग्रथ प्रशस्त करेगा।

टीकमगढ चातुर्मास
दिनाक
३१ १० ९७

ब्र. मैनाबाई जैन सघ सचालिका
(सिद्धान्त चक्रवर्ती आचार्य
श्री सन्मति सागर जी महाराज सघ)

विषयानुक्रमणिका

प्रथम अध्याय

द्वितीय अध्याय

तृतीय अध्याय

चतुर्थ अध्याय

पंचम अध्याय

■■■■

ॐ

णमोकार मंत्र

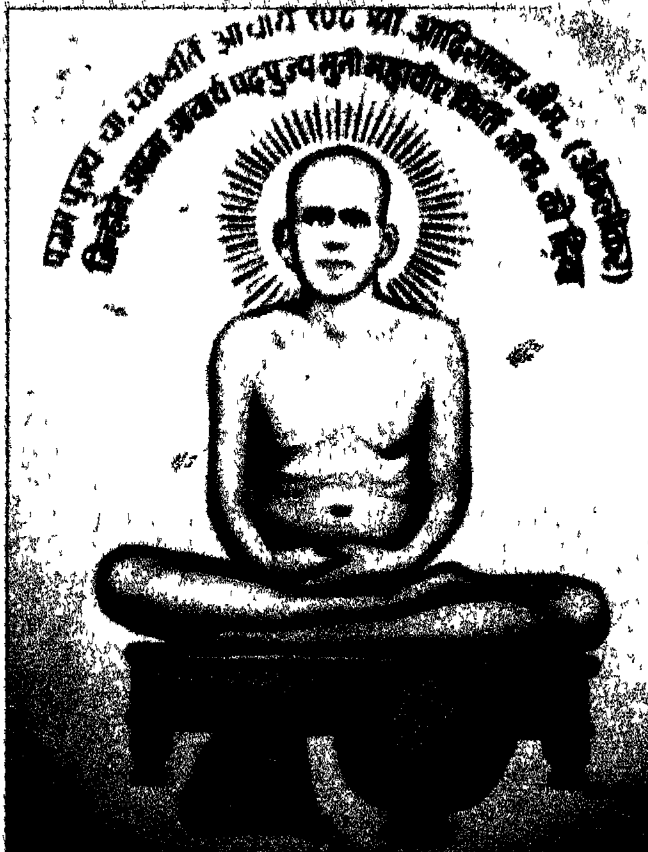
णमो अरहंताणं

णमो सिद्धाणं

णमो आइरियाणं

णमो उवज्झायाणं

णमो लोए सव्वसाहूणं



परम पूज्य आचार्य श्री १०८ आदिसागर जी (अंकलीकर) जी महाराज
जिन्होंने अपना आचार्य पद पूज्य मुनि महावीरकीर्तिजी महाराज को दिया



परम पूज्य समाधि सम्राटतीर्थ भक्तिशिरोमणि १०८
परम्पराचार्य परमेष्ठि भगवान श्री महावीरकीर्तिजी महाराज
जिन्होने अपना आचार्य पद मुनि श्री 108
सन्मति सागर जी महाराज को दिया



सिद्धान्त चक्रवर्ती प. पूज्य आचार्य
श्री १०८ सन्मतिसागर जी महाराज



परम पूज्य आचार्य
१०८ श्री चन्द्रसागर जी महाराज

प्रथम अध्याय

पंच नमस्कार मन्त्रः

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ।।१।।
मन्त्रं संसारसारं, त्रिजगदनुपमं सर्वपापारिमन्त्रम्,
संसारोच्छेदमन्त्रं, विषमविषहरं कर्मनिर्मूलमन्त्रम्।
मन्त्रं सिद्धि प्रदानं, शिवसुखजननं केवलज्ञानमन्त्रम्,
मन्त्रं श्री जैनमन्त्रं, जपजप जपितं जन्म निर्वाणमन्त्रम्।।२।।
आकृष्टिं सुरसंपदां, विदधते मुक्तिश्रियोवश्यता,
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम्।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति, प्रयततो मोहस्य संमोहनम्,
पायात्पञ्चनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ।।३।।

अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् ।
जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ।।४।।
अन्यथा शरण नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ।।५।।
न हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ।।६।।
जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ।।७।।

श्री भूत, वर्तमान, भविष्यत्, विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकराः

भूतकाल तीर्थंकराः

१-श्रीनिर्वाण	२-सागर	३-महासाधु
४-विमलप्रभ	५-श्रीधर	६-सुदत्त
७-अमलप्रभ	८-उद्धर	९-अंगिर
१०-सन्मति	११-सिंधु	१२-कुसुमांजलि
१३-शिवगण	१४-उत्साह	१५-ज्ञानेश्वर
१६-परमेश्वर	१७-विमलेश्वर	१८-यशोधर
१९-कृष्णमति	२०-ज्ञानमति	२१-शुद्धमति
२२-श्रीभद्र	२३-अतिक्रांत	२४-शांताश्चेति

भूत-काल-सम्बन्धी चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

वर्तमानकाल तीर्थंकरा.

१-ऋषभनाथ	२-अजित	३-संभव	४-अभिनन्दन
५-सुमति	६-पद्मप्रभ	७-सुपार्श्व	८-चन्द्रप्रभ
९-पुष्पदन्त	१०-शीतल	११-श्रेयान् (श्रेयांस)	
१२-वासुपूज्य	१३-विमल	१४-अनन्त	१५-धर्म
१६-शान्ति	१७-कुन्थु	१८-अर	१९-मल्लि
२०-मुनिसुव्रत	२१-नमि	२२-नेमि	२३-पार्श्व

२४-वर्द्धमानश्चेति वर्तमानकालसम्बन्धी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

भविष्यत्काल तीर्थंकरा:

१-श्री महापद्म	२-सुरदेव	३-सुपार्श्व
४-स्वयंप्रभ	५-सर्वात्मभूत	६-देवपुत्र
७-कुलपुत्र	८-उदंक	९-प्रोष्ठिल
१०-जयकीर्ति	११-मुनिसुव्रत	१२-अर
१३-निष्पाप	१४-निष्कषाय	१५-विपुल (अमम)
१६-निर्मल	१७-चित्रगुप्त	१८-समाधिगुप्त
१९-स्वयंभू	२०-अनिवर्तक	२१-जय
२२-विमल	२३-देवपाल	२४-अनन्तवीर्याश्चेति

भविष्यत्कालसम्बन्धी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

विदेहक्षेत्रस्थ विंशति तीर्थंकरा:

१-सीमंधर	२-युगमंधर	३-बाहु
४-सुबाहु	५-सुजात	६-स्वयंप्रभु
७-वृषभानन	८-अनन्तवीर्य	९-सूरप्रभ
१०-विशालकीर्ति	११-वज्रधर	१२-चन्द्रानन
१३-भद्रबाहु	१४-भुजंगम	१५-ईश्वर
१६-नेमप्रभ (नेमि)	१७-वीरसेन	१८-महाभद्र

१९-देवयश २०-अजितवीर्यांश्चेति विदेहक्षेत्रस्थविंशति-तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

संघ सामूहिक पाठ

सुप्रभात स्तोत्रम्

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्दीक्षा ग्रहणोत्सवे यदखिल, ज्ञानप्रकाशोत्सवे ।
यन्निर्वाणगमतोत्सवे जिनपतेः, पूजाद्भुतं तद्भवैः,
संगीत स्तुति मंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ।।१।।

श्रीमन्नतामर किरीट मणिप्रभाभि-
रालीढपाद युग, दुर्द्धर कर्मदूर ।
श्रीनाभिनन्दन ! जिनाजित ! शम्भवाख्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।२।।

छत्रत्रय प्रचल चामर वीज्यमान,
देवाभिनन्दनमुने ! सुमते ! जिनेन्द्र ।
पद्मप्रभा रुणपणि द्युतिभासुरांग,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सनतं मम सुप्रभातम् ।।३।।

अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्ण गात्र,
प्रालेयतारगिरि मौक्तिक वर्णगौर ।
चन्द्रप्रभ स्फटिक पाण्डुर पुष्पदन्त !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सतत मम सुप्रभातम् ।।४।।

सन्तप्त कांचनरुचे जिनशीतलाख्य,
श्रेयान्विनष्ट दुरिताष्ट कलंक पंक ।

बंधूकबंधुररुचे जिनवासुपूज्य,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।५।।
उद्दण्डदर्प करिपो विमलामलांग,
स्थेमन्ननन्तजिदनन्त सुखाम्बुराशे ।
दुष्कर्मकल्मषविवर्जितधर्मनाथ,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।६।।
देवामरीकुसुमसन्निभशान्तिनाथ,
कुन्थो ! दयागुण विभूषण भूषितांग ।
देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।७।।
यन्मोह मल्लमदभञ्जनमल्लिनाथ,
क्षेमंकरावितथशासन सुव्रताख्य ।
सत्सम्पदा प्रशमितो नमि नामधेय,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।८।।
तापिच्छ गुच्छरुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ,
घोरोपसर्ग-विजयिन् जिनपार्श्वनाथ ।
स्याद्वाद सूक्ति मणिदर्पण वर्द्धमान,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।९।।
प्रालेयनील हरितारुण पीतभासं,
यन्मूर्तिमव्यय सुखावसथं मुनीन्द्राः ।
ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिनवल्लभानां,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।१०।।

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, मांगल्यं परिकीर्तितम् ।
चतुर्विंशति तीर्थाणां, सुप्रभातं दिने दिने ।।११।।
सुप्रभातं सुनक्षत्रं, श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् ।
देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने ।।१२।।
सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः !
येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्त्व सुखावहम् ।।१३।।
सुप्रभातं जिनेंन्द्राणां, ज्ञानोन्मीलित चक्षुषाम् ।
अज्ञान तिमिरांधानां, नित्यमस्तमितो रविः ।।१४।।
सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य, वीरः कमललोचनः ।
येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्र वह्निना ।।१५।।
सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमंगलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्त्तृणां, जिनानामेव शासनम् ।।१६।।

।। इति सुप्रभातं स्तोत्रम् ।।

महावीराष्टक स्तोत्रम्

शिखरिणी छन्द

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः,
समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।१।।
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं,
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।

स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥२॥
नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणि भाजालजटिलं,
लसत्पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनुभृतां।
भवज्वाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥३॥
यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह,
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः।
लभंतेसद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमुतदा,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥४॥
कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो,
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः।
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुत गतिः,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥५॥
यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला,
वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति।
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥६॥
अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभटः,
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येनविजितः।
स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपद राज्याय स जिनः,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ॥७॥

महामोहातंकप्रशमनपरा-कस्मिकभिषङ्,
निरापेक्षो बन्धुर्विदित महिमा मंगलकरः ।
शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।८।।

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतं ।
यः पठेच्छ्रूणुयाच्चापि, स याति परमां गतिम् ।।९।।

।। इति महावीराष्टक स्तोत्रम् ।।

भक्तामर स्तोत्रम्

युगादिकर्त्ता को नमन

भक्तामर प्रणतमौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित पाप तमोवितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भव-जले पततां जनानाम् ।।१।।

यः संस्तुतः सकल वाङ्मय तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरै-रुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ।।२।।

असमर्थता प्रकट

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ,
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जल संस्थितमिन्दु-बिम्ब,
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ।।३।।

अल्पज्ञता ज्ञापन

वक्तुं गुणान्-गुण समुद्र शशांक-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरु प्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त-काल पवनोद्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतु-मलमम्बुनिधिं भुजाभ्यां ।।४।।

भक्ति और शक्ति

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश,
कर्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्यात्म-वीर्य-मविचार्य मृगो मृगेन्द्रम्,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ।।५।।

लघुता प्रदर्शन

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरी कुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र चारु कलिकानिकरैकहेतु ।।६।।

स्तुति का फल

त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ।।७।।

स्वाभिमानता

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद,
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ताफल-द्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ।।८।।

जिननाम भी पाप-नाशक

आस्तां तव स्तवन-मस्त-समस्त-दोषम्,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्र-किरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकास-भाञ्जि ।।९।।

जिनशासन मे भक्ति का उदार फल, भक्त का आह्वान

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूत-नाथ,
भूतै-र्गुणै-र्भुवि भवन्त-मभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्म-समं करोति ।।१०।।

भावपूर्वक जिन दर्शन की महिमा

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेष विलोकनीयम्,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्धसिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे-रसितुं क-इच्छेत् ।।११।

अद्वितीय सुन्दररूप

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वम्,
निर्मापित-स्त्रिभुवनैक-ललामभूत ।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
यत्ते समान-मपरं नहि रूप-मस्ति ।।१२।।

अनुपम रूप

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि,
निःशेष-निर्जित जगत्-त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ।।१३।।

जिनाश्रय की महिमा

सम्पूर्ण-मण्डल-शशांक कला-कलाप,
शुभ्रा गुणा-स्त्रिभुवनं तव लंघयन्ति ।
ये संश्रिता-स्त्रिजगदीश्वर ! नाथमेकम्,
कस्तान् निवारयति संचरतो यथेष्टम् ? ।।१४।।

मेरुवत् अचल

चित्र किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित् ।।१५।।

अपूर्व दीपक

निर्धूम-वर्ति-रपवर्जित-तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत् त्रय-मिदं प्रकटी-करोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानाम्,
दीपोऽपरस्त्व-मसिनाथ ! जगत् प्रकाशः ॥१६॥

अपूर्व सूर्य

नास्तं कदाचि-दुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टी-करोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र ! लोके ॥१७॥

अपूर्व चन्द्रमा

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारम्,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्ज-मनल्प-कान्ति,
विद्योतयज्जग-दपूर्व-शशांक-बिम्बम् ॥१८॥

अन्धकार-नाशक

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा ?
युष्मन् मुखेन्दु-दलितेषु तमः सु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्जलधरै-र्जलभार-नम्रैः ॥१९॥

अनुपम ज्ञानी

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशम्,
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजो स्फुरन्-मणिषु याति यथा महत्त्वम्,
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ।।२०।।

संतोषप्रदाता

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोष-मेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन् मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ।।२१।।

अनुपम जननी-सुत

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्र रश्मिम्,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुर-दंशु-जालम् ।।२२।।

मार्गदर्शक

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्ण-ममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिव-पदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ।।२३।।

सहस्रनाम से स्तुति

त्वा-मव्ययं विभु-मचिन्त्य मसंख्य-माद्यम्,
ब्रह्माण-मीश्वर-मनन्त-मनंग-केतुम् ।
योगीश्वरं विदित-योग-मनेक-मेकम्,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति सन्तः ।।२४।।

जिन ही बुद्ध, शंकर, ब्रह्मा

बुद्धस्त्व-मेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रय-शंकरत्वात् ।
धातासि धीर ! शिव-मार्ग-विधे-र्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ।।२५।।

नमस्कार

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल भूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय ।।२६।।

पूर्ण निर्दोष

को विस्मयोऽत्र यदि नामगुणै-रशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाश-तया मुनीश ।
दोषै-रुपात्त-विविधाश्रय-जात गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ।।२७।।

अशोकवृक्ष

उच्चैरशोक-तरु-संश्रित-मुन्मयूख-
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत् किरण-मस्त-तमो-वितानम्,
बिम्बं रवे-रिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ।।२८।।

सिंहासन

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्-विलसदंशु-लता-वितानम्,
तुंगोदयाद्रि-शिरसीव सहस्त्ररश्मेः ।।२९।।

चामर

कुन्दावदात-चलचामर चारु शोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम् ।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारिधार-
मुच्चै-स्तटं-सुरगिरे-रिव शातकौम्भम् ।।३०।।

छत्रत्रय

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांककान्त-
मुच्चै स्थितं स्थगित-भानुकर-प्रतापम् ।
मुक्ताफल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभम्,
प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ।।३१।।

अग्नि भय

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि कल्पम्,
दावानलं ज्वलित-मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिंगम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख मापतन्तम्,
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्यशेषम् ।।४०।।

सर्पभय

रक्तेक्षणं समद-कोकिल कण्ठ-नीलम्,
क्रोधोद्धतं फणिन-मुत्फण-मापतन्तम् ।
आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त-शंक-
स्त्वन्नाम-नागदमनी-हृदि यस्य पुंसः ।।४१।।

युद्धभय

वल्गत्तुरंग-गज-गर्जित-भीमनाद-
माजौ बलं बलवता-मपि भूपतीनाम्।
उद्यद् दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धम्,
त्वत् कीर्तनात्तम इवाशु भिदा-मुपैति ।।४२।।

कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित वारिवाह-
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे ।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा-
स्त्वत्पाद-पंकज-वनाश्रयिणो लभन्ते ।।४३।।

समुद्र-भय

अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण- वाडवाग्नौ ।
रंगत्तरंग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा-
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ॥४४॥

रोग-भय

उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः
शोच्यां दशा-मुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पंकज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्य-रूपाः ॥४५॥

बन्धन-भय

आपादकण्ठ-मुरु-शृंखल-वेष्टितांगा,
गाढं बृहन्-निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघा ।
त्वन्नाम-मन्त्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति ॥४६॥

स्तुति से अष्टभय-मुक्ति

मत्त-द्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
संग्राम-वारिधि-महोदर-बन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥

जिन-स्तुति के कंठस्थ करने का फल

स्तोत्रस्त्रजं तव जिनेन्द्र ! गुणै-र्निबद्धाम्,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगता-मजस्त्रम् ,
तं मानतुंग-मवशा समुपैति लक्ष्मीः ।।४८।।

।। इति श्री मानतुगाचार्य विरचित भक्तामर (आदिनाथ) स्तोत्र समाप्तम् ।।

प्रबोधाष्टक

(रचयिता आचार्य महावीर कीर्ति)

श्री केवलज्ञान स्वरूपोऽह, सिद्धोऽह शुद्धोऽह।
स्वरवरूपोऽह शुभ शुक्ल ध्यान स्वरूपोऽह।।
अनतज्ञानानन्त दर्शनानन्त सुखानन्त वीर्य स्वरूपोऽह।
परम सूक्ष्म स्वरूपोऽह, अव्यावाध स्वरूपोऽह ।।१।।
क्षुत्तृष्णामयशोक मोह, जननात कस्मै र्वर्जित ।
देवेद्रैरभिपूजितोऽह समो, राजेद्र सपूजित ।।
सिद्धोऽह निज शुद्ध भावसहितो श्री केवलज्ञानभाक्।
स्यात्मानन्त सुख करो, वलमयो सद्वैर्य सच्छील भाक् ।।२।।
शुद्धोऽह परमात्मरूपरचित शुभ्रै र्गुणैरर्जित ।
दृष्टा सर्वभुवि प्रसिद्ध महिमा, योगींद्र वृदर्चित·।।
सिद्धानन्त चतुष्टयान्वित विभु , श्री सिद्धशैल स्थितो।
घ्यात्वा श्री मुनि आदिसागर रवि शान्त्या समाधिश्रित।।३।।

संन्यासं दिवसाञ्चतुर्दशबुधः, हर्षादग्रहीत्वा स्वयं।
रात्रौचापि सुधर्मचिन्तन परः, ध्यानचकृत्वा ध्रुवं।।
आयाते समये समाधिमरणे, आर्षाक्रिया संचरन्।
शिष्टात्मा शुचिरादिसागर मुनिः शांति समाधिश्रित।।४।।
श्री चैत्यं जिननायकस्य विमलं, लोकोत्तरं मगलं।
श्री शुक्ल दृशदैवकल्पितविभुं, श्री पार्श्वनाथंजिनं।।
भालेहस्त युग निधायशिरसा दृष्टवा चनत्वा मुहुः।
ध्यात्वा श्री बुध आदिसागर मुनि , शात्या समाधिश्रित।।५।।
मत्रपचनमस्क्रियात्मकमल, सर्वेपठन्ति स्यवै।
श्रुत्वाहर्षभर· प्रसन्नवदन·, ध्यानेदृढो भावतः।।
पाय पायमहो विशुद्धमनसा, धर्म्य शिवं मंगलं।
श्रीयोगीश्वर आदिसागर मुनिः, सिद्धा समाधिश्रित।।६।।
चिन्ताशोक भयान्तकादि रहितां, क्लेशादिभि वर्जिता।
हिक्कशाति करीं प्रबोध जननीं, धीरां गंभीरां शुभां।।
आयातेनि कटे समाधिमरणे, सौभाग्य संसाधिकां।
पुण्यात्मावर आदिसागर मुनिः, पूता समाधिंश्रितः।।७।।
स्वाद्यंरवाधमथन्नं चसकल, लेह्यंचपेयादिकं।
सर्व हेयमसाररूयकमिदं, आजन्महित्वा जगत्।।
एकत्रयादिभवेषु मोक्ष जननीं, संसार रोगापहां।
श्रीचिंतामणिरादिसागर यतिः, चिन्त्यां समाधिश्रितः।।८।।
पचाचार परायणः सुविमलः, स्वर्मोक्षसंदेशकाः।

आत्मध्यानरतः प्रशान्त वदनः, नृपसुरेंद्राहर्चितः।।
वाह्याम्यतर संगमोहरहितः, मुनिकुजरःनिस्पृहः।
दत्वासूरिपद मयिसुविधिना, निश्चिन्त्य समाधिश्रितः।।६।।

प्रबोधाष्टक

पद्यानुवाद-प० पू० गणिनी आर्यिका विजयमति माताजी
(प्रभाविका आचार्य महावीर कीर्ति)

सिद्ध शुद्धनिजभव स्वरूपी, केवलज्ञान विभूषित हूँ।।१।।
शुक्ल ध्यान पैनी छैनी से, निज स्वरुप पा सकता हूँ।
ज्ञान अनन्त बल सुख, दर्शन अनन्त का धारी हूँ।।
परम सूक्ष्म अबगाहन गुण युत, अव्यावाध सुख भोगी हूँ।
रागद्वेषमद मोहरहित हूँ, जन्ममरण आश्चर्य नहीं।
क्षुधातृषाविस्मययनहि मेरा, रोगशोक का नाम नहीं।।
इन्द्र चन्द्र अहमिन्द्र पूजते, क्या नरेंद्र क्या असुरपति।
सिद्धस्वरूपीस्वय आत्मा, केवल ज्ञानी जगतपति।।
अनन्तसुखो का आकर हंसा, धैर्यवीर्य सच्छीलमयी।
समझो आत्मनित्य निरजन, ध्यान योग्य यह सकलमयी।।२।।
शुद्धस्वरूपी परमानन्दी, शुभ्रगुणों से राजित है।
द्रष्टा सर्वजगत के स्वामी, योगींद्रों से अर्चित हैं।
अनन्तचुतुष्टय गुण से राजित, सिद्धशिला अधिवासी हैं।
आदिसागर सूरि ने ध्याकर, शात समाधि धारी है।।३।।
सन्यास धारकर दिवस चतुर्दश, हर्षित होकर वितादिये।
रात्रिकाल मे धर्मध्यानयुत, आत्मध्यान में सजग रहे।।

समयसमाधिनिकर समझकर, आर्षमार्ग का शरण लिया।
शिष्टशुद्ध की आदि सिन्धुमुनि, शांतसमाधि मरण किया।।४।।
प्रतिमा शुभ्र फटिक समनिर्मल, लोकोत्तर मंगलकारी।
जिनवर कल्पित पार्श्वप्रभु की, छवि लखी तब सुखकारी।।
हस्त युगल रखकर मस्तक पर, नमन किया बारम्बारा।
आदि गुरु ध्यान लगाकर, मरण समाधि को धारा।।५।।
अपराजित यह महामंत्र, मुनियों ने इसका ध्यान किया।
सुनकर हर्षित चित्त हुए, गुरुवर ने दृढ हो ध्यान धरा।।
मंगलकारी शिव सुखदायी, धर्मामृत को श्रवण किया।
योगिराज श्री आदि सूरीने, सकल समाधि मरण किया।।६।।
चिताशोक भयादिक हारे, क्लेश ताप संकट सारे।
श्वांस काश का लेश न व्यापे, याद दिलावे निजगुण के।।
धीर वीर गंभीर बनावें, मरण निकट जिस क्षण आवे।
पुण्य पुरुष श्री आदिसूरि, सौभाग्यकारी वह दिन माने।।७।।
खाद्य स्वाद्य और लेह्यपेयसव, जीवनभर को त्याग दिया।
ससार भोग अरु देह गेह की, क्षणभंगुरता समझ लिया।
एक तीन या दोभव अंदर, मोक्षपुरी पहुचाती है।
चिंतामणि श्री आदि सिंधु यति, बद्धी समाधि धारी है।।८।।
सुरनर मुनि जन चर्चा करते, पंचाचार परायण की।
बाह्यम्यंतर संगतज, जिनभेष दिगम्बरधारी की।।
आत्मध्यान में लीन हर्षयुत, मुनि कुंजर सम्राट हुए।
महावीर कीर्ति को निजपद देकर, सिद्ध समाधि प्राप्त किये।।६।।

सर्वदोषप्रायश्चित्तविधिः

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा त्रयस्त्रिंशदऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१।।

ॐ ह्रीं अर्हं अहिंसामहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२।।

ॐ ह्रीं अर्हं सत्यमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३।।

ॐ ह्री अर्हं अचौर्यमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।४।।

ॐ ह्रीं अर्ह ब्रह्मचर्यमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।५।।

ॐ ह्री अर्ह अपरिग्रहमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।६।।

ॐ ह्री अर्ह ईर्यासमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।७।।

ॐ ह्रीं अर्ह भाषासमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।८।।

ॐ ह्रीं अर्हं एषणासमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।९।।

ॐ ह्रीं अर्हं आदाननिक्षेपणसमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१०।।

ॐ ह्रीं अर्हं उत्सर्गसमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।११।।

ॐ ह्रीं अर्हं मनोगुप्तेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१२।।

ॐ ह्रीं अर्हं वचोगुप्तेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१३।।

ॐ ह्रीं अर्हं कायगुप्तेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१४।।

ॐ ह्रीं अर्हं जीवास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१५।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुद्‌गलास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१६।।

ॐ ह्रीं अर्हं धर्मास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१७।।

ॐ ह्रीं अर्हं अधर्मास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१८।।

ॐ ह्रीं अर्हं आकाशास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१९।।

ॐ ह्रीं अर्हं पृथिविकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२०।।

ॐ ह्रीं अर्हं अप्कायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं तेजःकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२२।।

ॐ ह्रीं अर्हं वायुकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२३।।

ॐ ह्रीं अर्हं वनस्पतिकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२४।।

ॐ ह्रीं अर्हं त्रसकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२५।।

ॐ ह्रीं अर्हं जीवपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२६।।

ॐ ह्रीं अर्हं अजीवपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२७।।

ॐ ह्रीं अर्हं आस्रवपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२८।।

ॐ ह्रीं अर्हं बन्धपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२९।।

ॐ ह्रीं अर्हं संवरपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३०।।

ॐ ह्रीं अर्हं निर्जरापदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३१।।

ॐ ह्री अर्हं मोक्षपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३२।।

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३३।।

ॐ ह्रीं अर्हं पापपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३४।।

ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्ज्ञानाय नमः ।।३५।।

ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्दर्शनाय नमः ।।३६।।

ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक्चारित्राय नमः ।।३७।।

।। इति सर्व दोषप्रायश्चित्तविधिः ।।

स्वाध्याय समाप्त करने के बाद साधु गण-रात्रि में प्रमाद बश लगे हुए दोषो का परिमार्जन करने के लिये रात्रिक प्रतिक्रमण करे।

रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण

प्रतिज्ञा सूत्र

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।
तस्मात्-तदर्थ-ममलं मुनि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम् ।।१।।

उद्देश्य सूत्र

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया मायाविना-लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्-निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र । भवतः श्री-पाद-मूलेऽधुना,
निन्दा-पूर्वमह जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे ।।२।।

सकल्प सूत्र

खम्मामि सव्व-जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु वैरं मज्झं ण केण वि ।।३।।

राग परित्याग सूत्र

राग-बन्ध-पदोसं च हरिसं दीण-भावयं ।
उस्सुगत्तं भय सोगं रदि-मरदिं च वोस्सरे ।।४।।

पश्चात्ताप सूत्र

हा ! दुट्ट-कयं हा ! दुट्ट-चिंतियं भासियं च हा ! दुट्ट
अंतो-अतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेदंतो ।।५।।

दव्वे खेत्ते काले भावे च कदावराह-सोहणयं ।
णिंदण-गरहण-जुत्तो मण-वच-कायेण पडिक्कमणं ।।६।।

ए-इंदिया, बे-इंदिया, ते-इंदिया, चतुरिंदिया, पंचिंदिया, पुढवि-काइया-आउ-काइया, तेउ-काइया, वाउ-काइया, वणप्फदि-काइया, तस-काइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूल-गुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

पंचमहाव्रत - पंचसमिति - पंचेन्द्रिय - रोध - षडावश्यक-क्रियालोचादयो अष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव - शौच - सत्य - संयम - तपस् - त्यागाकिंचन्य - ब्रह्मचर्याणि, दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-लक्षगुणाः, त्रयोदश-विधं चारित्रं, द्वादश-विधं तपश्चेति सकलं सम्पूर्ण अर्हत्-सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं, सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़-व्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष निराकरणार्थं पूर्वाचार्या-

नुक्रमेण, सकल कर्म क्षयार्थं भाव पूजा-वंदना-स्तवसमेतं आलोचना सिद्धभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(यहाँ नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं । करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (जावन्नियमं) तिविहेण मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि,

णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें। पश्चात् नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति कर चतुर्विंशति स्तव पढ़ें।)

जीवे मरणे लाह लाहे सजोग्ना जोगेय।
बधुर सुह दु'सादो समदा सामाइअणाम्।

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमल-मणंत भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वदाम्यरि-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित मुख्य मगल पढ़ें।)

मुख्य मगल

श्रीमते वर्धमानाय नमो नमित-विद्-विषे ।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते ।।१।।

सिद्ध-भक्ति

तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मच रित्तजुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णम सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहिमरणं जिन-गुण संपत्ति होउ मज्झं ।

आलोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो तेरस-विहो,परिविहा-विदो, पच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे, पाणा-दिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया-जीवा - असंखेज्जासंखेज्जा, आउ - काइया - जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउ-काइयाजीवा-असंखेज्जा-संखेज्जा, वाउ-काइया-जीवा-असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया-जीवा-अणंताणंता, हरिया, वीआ, अंकुरा, छिण्णा-भिण्णा

एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय, वराडय, अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि, पुलवि-काइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुन्थूद्देहिय-विंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर, गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिम., अवि-चउरासीदिजोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

प्रतिक्रमण पीठिका-दण्डक

गद्य

इच्छामि भंते ! राइयम्मि (देवसियम्मि) आलोचेउं, पंच-महव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, विदियं महव्वदं मुसावादादो वेरमणं तिदियं महव्वदं अदिण्णा दाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइ-भोयणादो वेरमणं। इरिया-समिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए, आदाण-निक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्स-वण खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणिया समिदीए। मणगुत्तीए, वचि-गुत्तीए, काय-गुत्तीए। णाणेसु, दसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाय-परीसहेसु, पणवीसाय-भावणासु, पणवीसाय-किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुणसय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाण, बारसण्हं अंगाणं, चोदसण्हं पुव्वाण, दसण्हं मुंडाणं, दसण्हं समण-धम्माणं, दसण्ह धम्मज्झाणाणं, णव्वहं बभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णोकसायाणं, सोलसण्हंकसायाणं, अट्ठण्ह कम्माण, अट्ठण्हं पवयण-माउयाण, अट्ठण्ह सुद्धीणं, सत्तण्ह भयाणं, सत्तविह संसाराण, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पचण्ह इदियाण, पंचण्ह महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाण, चउण्ह उवसग्गाण, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं,

दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परदावग्गियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासादणाए, तिण्हं दण्डाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, दोण्हं अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणं, मिच्छा-णाण, मिच्छा-दंसण, मिच्छा-चरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंयम-पाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोग-पाउग्गं, अपाउग्ग-सेवणदाए, पाउग्-गरहणदाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (दैवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो । तस्स भंते ! पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहि-लाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिन-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णात्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादे णियत्तोहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अत्र सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्या-

नुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री प्रतिक्रमण-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि स्पर्श करते हुए नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताण णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरण पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्म सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताण, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि, किरियम्मं, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जोवं तिविहेण मणासा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि

अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें। पश्चात् नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित निषिद्धिका दण्डक पढे ।)

णमो अरहंताण णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

णमो जिणाणं ! णमो जिणाण ! णमो जिणाण ! णमो णिस्सिहीए ! णमो णिस्सिहीए ! णमो णिस्सिहीए ! णमोत्थु दे ! णमोत्थु दे ! णमोत्थु दे ! अरहत ! सिद्ध! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सम-मण ! सुभमण ! सुसमत्थ! समजोग! सम-भाव ! सल्लघट्टाण सल्लघत्ताण ! णिब्भय! णीराय ! णिद्दोस ! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग, णिस्सल्ल! माण-माय-मोस-मूरण ! तवप्पहाण ! गुण-रयण-सील-सायर ! अणंत ! अप्पमेय ! महदि-महावीर-वड्ढमाण ! बुद्धि-रिसिणो ! चेदि ! णमोत्थु ए ! णमोत्थु ए ! णमोत्थु ए !

मम मंगलं-अरहंता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जवणाणिणो, चउदस-पुव्व-गामिणो, सुद-समिदि-समिद्धा य, तवो य, बारह-विहो तवस्सी, गुणा य, गुणवंतो य, महरिसी, तित्थं,

तित्थंकरा य, पवयणं, पवयणी य, णाणं, णाणी य, दसणं, दंसणी य, संजमो, संजदा य, विणओ, विणदा य, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ चेव, गुत्ति-मंतो य, मुत्तीओ चेव, मुत्तिमंतो य, समिदीओ चेव, समिदि-मंतो य, सुसमय-परसमय-विदु, खंति, खंतिवंतो य, खवगाय, खीण-मोहाय, खीणवंतो य, बोहिय-बुद्धा य, बुद्धिमंतो य, चेइय-रुक्खा-य, चेइयाणि ।

उड्ढ-मह-तिरिय-लोए, सिद्धायदणाणी-णमस्सामि, सिद्ध-णिसीहियाओ, अट्ठावय-पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ काओ वि-णिसीहियाओ, जीव-लोयम्मि, इसिपब्भार-तल-गयाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, कम्म-चक्क-मुक्काणं, णीरयाणं, णिम्मलाणं, गुरु-आइरिय-उवज्झायाणं, पव्व-तित्थेर-कुलयराणं, चउवण्णो य, समण-संघो य, दससु भरहेरावएसु, पंचसु महाविदेहेसु, जे लोए संति-साहवो-संजदा, तवसी एदे, मम मंगल, पवित्तं, एदेहं मंगलं करेमि, भावदो विसुद्धो सिरसा अहि-वंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थयम्मि, तिविहं तियरण सुद्धो ।

।। इति निषिद्धिका दण्डका ।।

अथ रात्रि-दिवस दोषालोचना

पडिक्कमामि भंते ! राइयस्स (देवसियस्स) अइचारस्स, अणाचारस्स, मण-दुच्चरियस्स, वचि-दुच्चरियस्स, काय

दुच्चरियस्स, णाणाइचारस्स, दंसणाइचारस्स, तवाइचारस्स, वीरियाइचारस्स, चारित्ताइचारस्स, पंचण्हं-महव्वयाणं, पंचण्हं-समिदीणं, तिण्हं-गुत्तीणं, छण्हं-आवासयाणं, छण्हं-जीवणिकायाणं, विराहणाए, पील-कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चकमणे, उवत्तणे, आउट्टणे, पसारणे, आमासे, परिमासे, कुइदे, कक्कराइदे, चलिदे, णिसण्णे, सयणे, उव्वट्टणे, परियट्टणे, एइंदियाण, बेइंदियाणं, तेइंदियाणं, चउरिंदियाण, पंचिंदियाणं, जीवाण, संघट्टणाए, संघादणाए, उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए, एत्थ मे जो कोई राइयो (देवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए, विराहणाए, उड्ढमुह चरंतेण वा, अहोमुहं चरंतेण वा, विदिसिमुहं चरंतेण वा, दिसिमुह चरंतेण वा, विदिसिमुहं चरंतेण वा, पाणचंकमणदाए, वीयचंकमणदाए, हरिय चंकमणदाए, उत्तिंग-पणय-दय-मट्टिय-मक्कडय-तन्तु-सत्ताणु-चंकमणदाए, पुढवि-काइय-संघट्टणाए, आउ-काइय-संघट्टणाए, तेऊ-काइय-सघट्टणाए, वाउ काइय-संघट्टणाए, वणप्फदि-काइय-सघट्टणाए, तसकाइय-सघट्टणाए उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए,

इत्थ मे जो कोई इरियावहियाए, अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, पइट्ठावंतेण जो कोई पाणा वा, भूदा वा, जीवा वा, सत्ता वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

पडिक्कमामि भंते ! अणेस-णाए, पाण-भोयणाए, पणय-भोयणाए, बीय भोयणाए, हरिय-भोयणाए, आहा-कम्मेण वा, पच्छा-कम्मेण वा, पुराकम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठयडेण वा, दयसंसिट्ठयडेण वा, रस-संसिट्ठयडेण वा, परिसादणियाए, पइट्ठावणियाए, उद्देसियाए, णिद्देसियाए, कीदयडे, मिस्से, जादे, ठविदे, रइदे, अणसिट्ठे, बलिपाहुडदे, पाहुडदे, घट्टिदे, मुच्छिदे, अइमत्त-भोयणाए इत्थ मे जो कोई गोयरिस्स अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! सुमणिंदियाए, विराहणाए, इत्थि-विप्परियासियाए, दिट्ठिविप्परियासियाए, मणिविप्परियासियाए, वचि-विप्परियासियाए, काय-विप्परियासियाए, भोयण-विप्परियासियाए, उच्चावयाए, सुमण-दंसण-विप्परियासियाए, पुव्वरए, पुव्वखेलिए, णाणा-चिंतासु, विसोतियासु इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसियो) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! इत्थी-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, पर-पासड-कहाए, देस-कहाए, भास-कहाए, अ-कहाए, वि-कहाए, निठुल्ल-कहाए, पर-पेसुण्ण-कहाए, कन्द-प्पियाए, कुक्कुच्चियाए, डंबरियाए, मोक्खरियाए, अप्प-पसंणदाए, पर-परिवादणाए, पर-दुगछणदाए, पर-पीडा-कराए, सावज्जा-णुमोयणियाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

पडिक्कमामि भंते ! अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, कोह-सल्लाए, माण-सल्लाए, माया-सल्लाए, लोह-सल्लाए, पेम्म-सल्लाए, पिवास सल्लाए, णियाण सल्लाए, मिच्छा-दसण-सल्लाए, कोह-कसाए, माण-कसाए, माया-कसाए, लोह-कसाए, किण्ह-लेस्स-परिणामे, णील-लेस्स-परिणामे, काउ-लेस्स-परिणामे, आरम्भ-परिणामे, परिग्गह-परिणामे, पडिसयाहिलास-परिणामे, मिच्छादसण-परिणामे, असजम-परिणामे, पाव-जोग-परिणामे, काय-सुहाहिलास-परिणामे, सद्देसु, रूवेसु, गधेसु, रसेसु, फासेसु, काइयाहिकरणियाए, पदोसियाए, परदावणियाए, पाणाइवाइयासु, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।

पडिक्कमामि भंते ! एक्के भावे अणाचारे, दोसु राय-दोसेसु, तीसु दंडेसु, तोसु गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु कसाएसु, चउसु सण्णासु, पंचसु महव्वएसु, पंचसु समिदीसु, छसुजीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दसविहेसु समण-धम्मेसु, एयारस-विहेसु, उवासयपडिमासु, बारह-विहेसु भिक्खु-पडिमासु, तेरस-विहेसु किरिया-ट्ठाणेसु, चउदस-विहेसु भूदगामेसु, पणरस-विहेसु पमाय-ठाणेसु, सोलह-विहेसु पवयणेसु, सत्तारस-विहेसु असजमेसु, अट्ठा-रस-विहेसु असंपराएसु, उणवीसाय णाहज्झाणेसु, वीसाए असमाहि-ट्ठाणेसु, एक्कवीसाए, सवलेसु, बावीसाए परीसहेसु, तेवीसाय सुद्दयडज्झाणेसु, चउवीसाए अरहंतेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियाट्ठाणेसु, छव्वीसाए पुढवीसु, सत्तावी-साए अणगार-गुणेसु, अट्ठावीसाए आयार-कप्पेसु, एउणतीसाए पाव-सुत्त-पसंगेसु, तीसाए मोहणी-ठाणेसु, एकत्तीसाए कम्म-विवाएसु, बत्तीसाए जिणो-वएसेसु, तेतीसाए अच्चासणदाए, संखेवेण जीवाण-अच्चासणदाए, अजीवाण अच्चासणदाए, णाणस्स अच्चासणदाए, दंसणस्स अच्चासणदाए, चरित्तस्स अच्चासणदाए, तवस्स अच्चासणदाए, वीरियस्स अच्चासणदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि, आगामेसीएसु पच्चुप्पण्ण इक्कतं पडिक्कमामि, अणागय पच्चक्खामि, अगरहियं गरहामि, अणिंदिय णिंदामि, अणालोचियं आलोचेमि, आराहण-

मब्भुट्ठेमि, विराहणं पडिक्कमामि, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

निर्ग्रन्थ पद को मैं स्वेच्छा से ग्रहण करता हूँ-

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइय, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं, सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्खपरिहाणि-मग्ग, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, अवित्तहं, अविसति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, त फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झति, बुज्झंति, मुच्चंति, परि-णिव्वाण-यति, सव्व-दुक्खाण मतं-करेति, पडि-वियाणंति, समणोमि, सजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माय-मोस-मिच्छाणाण-मिच्छा-दसण-मिच्छाचरित्त च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त च रोचमि, ज जिणवरेहिं पण्णत्त, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

सार्वकालिक दोषो की आलोचना

पडिक्कमामि भंते ! सव्वस्स, सव्वकालियाए, इरियासमिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए, आदाण-

निक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिहाणय-वियडि-पइ-ट्ठावणि-समिदीए, मण-गुत्तीए, वचि-गुत्तीए, काय-गुत्तीए, पाणा दिवादादो-वेरमणाए, मुसावादादो-वेरमणाए, अदिण्ण-दाणादो-वेरमणाए, मेहुणादो-वेरमणाए, परिग्गहादो-वेरमणाए, राइभोयणादो-वेरमणाए, सव्व-विराहणाए, सव्व-धम्म-अइक्कमणदाए, सव्व-मिच्छा-चरियाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वीर-भक्ति कायोत्सर्ग की आलोचना

इच्छामि भंते ! वीर भक्ति काउस्सग्गो जो मे राइओ (देवसिओ) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, काइओ, वाइओ, माणसिओ, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्समणीओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, पचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, तिण्हं गुत्तीण, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, विराहणाए, अट्ठ-विहस्स कम्मस्स-णिग्घादणाए, अण्णहा उस्सासिएण वा, णिस्सासिएण वा, उम्मिसिएण वा, णिम्मि-सिएण वा, खासिएण वा, छिक्किएण वा, जंभाइएण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठी-चलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं [1]आयरेहिं, अ समाहिं-पत्तेहिं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं,

---

१ धर्मध्यान दीपको में "एदेहि सव्वेहि असमाहि पत्तेहि आयरेहिं" पाठ छपा हुआ है, किन्तु "प्रतिक्रमण ग्रन्थत्रयी" में एदेहि सव्वेहि (एतै प्रागुक्तै सर्वै) आयारेहिं (आचारैर्व्यापारैर्य कश्चिद्दोषो जात) पाठ है जो प्रसगानुसार होने से ठीक मालूम होता है ।

पज्जुवासं करेमि, ताव काल पाव कम्म दुच्चरिय वोस्सरामि ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोह ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थ पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेत श्री निष्ठितकरण-वीर भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि-स्पर्श करते हुए नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढे ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरण पव्वज्जामि-अरहंते सरण पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरण पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताण, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्म, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाण, जाव अरहंताण, भयवंताण पज्जुवासं करेमि, तावकाल पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके रात्रिक प्रतिक्रमण में ५४ उच्छ्वास पूर्वक दो कायोत्सर्ग और दैवसिक प्रतिक्रमण मे १०८ उच्छ्वास पूर्वक चार कायोत्सर्ग करे पश्चात् नमस्कार करके पुन तीन आवर्त और एक शिरोनति करे, पश्चात् निम्नलिखित चतुर्विंशति स्तव पढे।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए विहुय-रय मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौवीस चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वंदे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्ज च ।
विमल-मणंतं भयव धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पास वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाह दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् वीरभक्ति पढे ।)

वीरभक्ति

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

यः सर्वाणि चराचराणि विधि-वद्, द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवितः सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत्-प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ।।१।।

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो वीरं बुधाः संश्रिता,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो, हे वीर ! भद्रं त्वयि ।।२।।

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यम्,
ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः ।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके,
संसार-दुर्गं विषमं तरन्ति ।।३।।

व्रत-समुदय-मूलः संयम-स्कंध-बंधो,
यम-नियम-पयोभि-र्वर्धितः शील-शाखः ।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगंधिः सत्-तपश्चित्र-पत्रः ।।४।।

शिव-सुख-फल-दायी यो दया-छाय-योद्धः,
शुभ-जन-पथिकानां खेद-नोदे समर्थः ।
दुरित-रविज-तापं प्रापयन्नन्तभावम्,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः ।।५।।

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय ।।६।।

धर्मः सर्व-सुखाकरो हित-करो, धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान्-नास्त्य-परः सुहृद्-भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्त-महं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ।।७।।

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो ।
[1]देवा वि तं णमंसंति जस्स धम्मे सया मणो ।।८।।

---

१ " देवा वि तस्स पणमंति" पाठ में एक अक्षर अधिक है ।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणादिचार-मालोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मचारित्त-तव-वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्व-मइचारं सावज्ज-जोगं पडिविरदोमि, असंखेज्ज-लोग-अज्झव-साय-ठाणाणि, अप्पसत्थ-जोग-सण्णा-णिंदिय-कसाय-गारव-किरियासु, मण-वयण-काय-करण-दुप्पणिहा-णाणी, परि-चिंतियाणि, किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ, विकहा-पालिकुंचिएण, उम्मग-हस्स-रदि-अरदि-सोय-भय-दुगंछ-वेयण-विज्झंभ-जम्भाइ-आणि, अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणि-परिणामदाणि, अणिहुद-कर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-पराय-णेण, अपडि-पुण्णेण वा सरक्खरावच-परिसंघाय-पडिवत्तिएण, अच्छा-कारिदं मिच्छा-मेलिद, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्णं, अण्णहा-पडिच्छिद, आवास-एसु-परिहीणदाए, कदो वा, कारिदो वा, कीरतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा से दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूल-गुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक)

प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष-निराकरणार्थ पूर्वाचार्या-नुक्रमेण, सकल कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि स्पर्श पूर्वक नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं । करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (जावन्नियमं) तिविहेण मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि, ण क.रेमि,

ण अण्णं करतं पि समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचार पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वासो मे एक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् भूमि नमस्कार करके पुन: तीन आवर्त और एक शिरोनति करे, पश्चात् चतुर्विंशति स्तव पढे ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइ च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।
सुविहिं च पुप्फयंत सीयल सेयं च वासुपुज्ज च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिण वरिंदं अर च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति पढे ।)

'चउवीसं तित्थयरे उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे ।
सव्वे सगण-गण-हरे सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।१।।
ये लोकेऽष्ट-सहस्त्र लक्षण-धरा, ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथनाश्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्चितास्,
तान् देवान् वृषभादि-वीर-चरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम् ।।
नाभेयं देवपूज्यं, जिनवर-मजितं सर्व-लोक-प्रदीपम् ।
सर्वज्ञं सभवाख्यं, मुनि-गण-वृषभं नन्दनं देवदेवम् ।।
कर्मारिध्न सुबुद्धिं, वर-कमल-निभं पद्म-पुष्पाभि-गंधम् ।
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं, सकल-शशि-निभं चंद्रनामान-मीडे
विख्यातं पुष्पदन्तं, भव-भय-मथनं शीतलं लोक-नाथम्
श्रेयांसं शील-कोशं, प्रवर-नर-गुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।।
मुक्तं दान्तेंद्रियाश्वं, विमल-मृषि-पतिं सैंहसेन्यं मुनींद्रम्
धर्मं सद् धर्म-केतुं, शम-दम-निलयं स्तौमि शांति शरण्यम्
कुन्थुं सिद्धालयस्थं, श्रमण-पतिमरं त्यक्त-भोगेषु चक्रम् ।
मल्लिं विख्यात-गोत्रं, खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य-राशिम्
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं, हरि-कुल-तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्
पार्श्वं नागेंद्र-वंद्यं, शरण-मह-मितो वर्धमानं च भक्त्या।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीस-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंच-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-सयाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणि-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोव-गूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं-उस-हाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महा-पुरिसाणं, णिच्च-कालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो,लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाण जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावण होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थ पूर्वाचार्या-नुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव समेतं श्री सिद्धभक्ति, प्रतिक्रमणभक्ति, निष्ठित-करण-वीर-भक्ति, चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्तिः कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्ध्यर्थ, आत्म-पवित्री-करणार्थ समाधिभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(इति विज्ञाप्य-णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्ग कुर्यात् । थोस्सामीत्यादि स्तवं पठेत्)

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्-वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावनाचात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावद्देतेऽपवर्गः ।।१।।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्-यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।२।।

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणियम् ।
तं खमउ णाण-देव ! य मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ।।३।।

आलोचना

इच्छामि भंते ! समाहि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-झाणलक्खण-समाहि-भत्तीए णिच्च कालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ गमण, समाहि-मरणम्, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

।। इति रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण समाप्तम् ।।

श्री सिद्ध भक्ति

सिद्धा-नुद्धूत-कर्म-प्रकृति-
समुदयान् साधितात्म-स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्धयै तदनुपम-
गुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः,
प्रगुण-गुण-गणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान-युक्त्या दृषद्,
इह यथा हेम-भावोपलब्धिः ।।१।।

नाभावः सिद्धि-रिष्टा न,
निज-गुण-हतिस्तत् तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादि-बद्धः,
स्व-कृतज-फल-भुक्-तत्-क्षयान् मोक्षभागी ।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-
रुपसमाहार-विस्तार-धर्मा,
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा,
स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्य-सिद्धिः ।।२।।

स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-प्रभव-
विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-क्षत-
दुरित-तया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।
कैवल्यज्ञान-दृष्टि-प्रवर-
सुख-महावीर्य सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति-र्वातायनादि-स्थिर-
परम-गुणै-रद्भुतै-र्भासमानः ।।३।।

जानन् पश्यन् समस्तं,
सम-मनुपरतं संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं,
निचित-मनुपमं प्रीणयन्नीशभावम् ।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-मपर-
मभिभवन् ज्योति-रात्मानमात्मा,
आत्मन्येवात्मनासौ क्षण-
मुपजनयन्-सत्-स्वयंभूः प्रवृत्तः ।।४।।

छिन्दन् शेषानशेषान्-निगल-
बल-कलीं-स्तैरनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुक-गुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यै-श्चान्य-व्यपोह-प्रवण-
विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-

रूर्ध्व-व्रज्या स्वभावात्,
समय-मुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये ।।५।।
अन्याकाराप्ति-हेतु-र्न च,
भवति परो येन तेनाल्प-हीनः ।
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-
कृति-रुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जरानिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-प्रभव-
भव-हतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ।।६।।
आत्मोपादान-सिद्धं स्वय-
मतिशय-वद्-वीत-बाधं विशालम् ।
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं,
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं,
निरुपमममितं शाश्वतं सर्व-कालम् ।
उत्कृष्टानन्त-सारं,
परम-सुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ।।७।।
नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्,
विविध-रस-युतै-रन्न-पानै-रशुच्या ।
नास्पृष्टे-र्गन्ध-माल्यै-र्नहि,
मृदु-शयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।

आतंकार्ते रभावे,

तदुपशमन-सद्भेषजानर्थतावद् ।

दीपा-नर्थक्य-वद् वा,

व्यपगत-तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ।।८।।

तादृक्-सम्पत्-समेता,

विविध-नय-तपः-संयम-ज्ञान-दृष्टि-

चर्या-सिद्धाः समन्तात्,

प्रवितत्-यशसो विश्व-देवाधि-देवाः ।

भूता भव्या भवन्तः,

सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टै-

स्तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्,

निजिग-मिषु-ररं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ।।९।।

कृत्वा कायोत्सर्गं, चतुरष्टदोष विरहितं सु परिशुद्धं ।
अतिभक्ति संप्रयुक्तो, यो वन्दते सो लघु लभते परम सुखम्।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-दम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं ।

श्री चैत्य भक्ति

श्री गौतमादिपदमद्‌भुतपुण्यबन्ध मुद्योतिताखिल ममौघमघप्रणाशम्।
वक्ष्ये जिनेश्वरमह प्रणिपत्य तथ्यं निर्वाणकारणमशेषजगद्धितार्थम् ।

जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुटच्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ ।
कलुष-हृदया मानोद्‌भ्रांताः परस्पर-वैरिणः,
विगत-कलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः ।।१।।

तदनु जयति श्रेयान्-धर्मः प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशा-द्योसौ विपाशयति प्रजाः ।
परिणत-नयस्यांगी-भावाद्-विविक्त-विकल्पितम्,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्र-वचोऽमृतम् ।।२।।

तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभंग-तरंगिणी,
प्रभव-विगम ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी ।
निरुपम-सुखस्येदं द्वारं विघट्य निरर्गलम्,
विगत-रजसं मोक्षं देयान् निरत्यय-मव्ययम् ।।३।।

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः ।
सर्व-जगद्-वन्द्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ।।४।।

मोहादि-सर्व-दोषारि-घातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः,
विरहित-रहस्-कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्‌भ्यः ।।५।।

क्षांत्यार्जवादि-गुण गण-सुसाधनं सकल-लोक-हित-हेतुम् ।
शुभ-धामनि धातारं वन्दे धर्म जिनेन्द्रोक्तम् ।।६।।

मिथ्याज्ञान-तमोवृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गमयोगि ।
सांगोपांग-मजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे ।।७।।

भवन-विमान-ज्योति-र्व्यन्तर-नरलोक विश्व-चैत्यानि ।
त्रिजग-दभिवन्दितानां त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम् ।।८।।

भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्यचर्य-तीर्थ-कर्तृणाम् ।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै विभवाना-मालयालीस्ताः ।।९।।

इति पञ्च-महापुरुषाः प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुध-जनेष्टाम् ।।१०।।

अकृतानि कृतानि-चाप्रमेय-
द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु ।
मनुजामर-पूजितानि वन्दे,
प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम् ।।११।।

द्युति-मण्डल-भासुरांग-यष्टीः,
प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम् ।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता,
वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः ।।१२।।

विगतायुध-विक्रिया-विभूषाः,
प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम् ।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु कान्त्याऽ-
प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिवन्दे ।।१३।।

कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं,
परया शान्ततया भवान्तकानाम्।
प्रणमाम्यभिरूप-मूर्तिमन्ति,
प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम्॥१४॥
यदिदं मम सिद्धभक्ति-नीतं,
सुकृतं दुष्कृत-वर्त्म-रोधि तेन।
पटुना जिनधर्म एव भक्ति-र्भव-
ताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे॥१५॥
अर्हतां सर्वभावानां दर्शन-ज्ञान-सम्पदाम्।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये॥१६॥
श्रीमद्-भवन-वासस्था स्वयं भासुर-मूर्तयः।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम्॥१७॥
यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये॥१८॥
ये व्यन्तर-विमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः।
ते च संख्या-मतिक्रान्ताः सन्तु नो दोष-विच्छिदे॥१९॥
ज्योतिषा-मथ लोकस्य भूतयेऽद्भुत-सम्पदः।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान्॥२०॥
वन्दे सुर-किरीटाग्र-मणिच्छायाभिषेचनम्।
याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्च्चाः सिद्धि-लब्धये॥२१॥
इति स्तुति पथातीत-श्रीभृता-मर्हतां मम।
चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वास्रव-निरोधिनी॥२२॥

अर्हन्-महा-नदस्य-त्रिभुवन-
भव्यजन-तीर्थ-यात्रिक-दुरित-
प्रक्षालनैक-कारणमति-लौकिक-
कुहक-तीर्थ-मुत्तम-तीर्थम् ।।२३।।

लोकालोक-सुतत्त्व-प्रत्यव-
बोधन-समर्थ-दिव्यज्ञान-
प्रत्यह-वहत्प्रवाहं व्रत-
शीलामल-विशाल-कूल-द्वितयम् ।।२४।।

शुक्लध्यान-स्तिमित स्थित-
राज-द्राजहंस-राजित मसकृत् ।
स्वाध्याय-मन्द्रघोषं नाना-गुण-
समिति-गुप्ति-सिकता-सुभगम् ।।२५।।

क्षान्त्यावर्त-सहस्रं सर्व-दया-
विकच-कुसुम-विलसल्लतिकम् ।
दुःसह-परीषहाख्य-द्रुततर-
रंग-त्तरंग-भङ्गुर-निकरम् ।।२६।।

व्यपगत-कषाय-फेनं राग-
द्वेषादि-दोष-शैवल-रहितम् ।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-मतिदूर-
निरस्त-मरण-मकर-प्रकरम् ।।२७।।

ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-
निर्घोष-विविध-विहग-ध्वानम् ।

विविध-तपोनिधि-पुलिनं सास्रव-
संवरण-निर्जरा-निःस्रवणम् ।।२८।।
गणधर-चक्र-धरेन्द्र-प्रभृति-
महा-भव्य-पुण्डरीकैः पुरुषैः ।
बहुभिः स्नातं भक्त्या कलि-
कलुष-मलापकर्षणार्थ-ममेयम् ।।२९।।
अवतीर्णवतः स्नातुं ममापि,
दुस्तर-समस्त-दुरितं दूरम् ।
व्यपहरतु परम-पावन-मनन्य,
जय्य-स्वभाव-भाव-गम्भीरम् ।।३०।।

अताम्र-नयनोत्पलं सकल-कोप-वह्ने-र्जयात्,
कटाक्ष-शर-मोक्ष-हीन-मविकारतोद्रेकतः ।
विषाद-मद-हानितः प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदय-शुद्धि-मात्यन्तिकीम् ।।३१।।
निराभरण-भासुरं विगत-राग-वेगोदयात्,
निरम्बर-मनोहरं प्रकृति-रूप-निर्दोषतः ।
निरायुध-सुनिर्भयं विगत-हिंस्य-हिंसा-क्रमात्,
निरामिष-सुतृप्ति-मद्-विविध-वेदनानां क्षयात् ।।३२।।
मितस्थिति-नखागजं गत-रजोमल-स्पर्शनम्,
नवाम्बुरुह-चन्दन-प्रतिम-दिव्य-गन्धोदयम् ।
रवीन्दु-कुलिशादि-दिव्य-बहु लक्षणालङ्कृतम्,
दिवाकर-सहस्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम् ।।३३।।

हितार्थ-परिपन्थिभिः प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलंकितमना जनो यदभिवीक्ष्यशो शुद्धयते ।
सदाभिमुख-मेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद्-विमल-चन्द्र-मण्डल-मिवोत्थितं दृश्यते ।।३४।।
तदेत-दमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि,
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणारविन्द-द्वयम् ।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र तव रूप-मन्धीकृतम्,
जगत्-सकल-मन्यतीर्थ-गुरु-रूप-दोषोदयैः ।।३५।।

क्षेपक श्लोका·

मानस्तम्भा. सरांसि प्रविमलजल, सत्खातिका पुष्पवाटी ।
प्राकारो नाट्यशाला द्वितयमुपवनं, वेदिकांत र्ध्वजाद्याः ।।
शालः कल्पद्रुमाणां सुपरिवृत्तवनं, स्तूपहर्म्यावली च ।
प्राकारः स्फाटिकोन्तनृसुरमुनिसभा, पीठिकाग्रे स्वयंभूः।।१।।
वर्षेषु वर्षान्तर पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु,
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम्।।२।।

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणाम्,
वनभवनगतानां दिव्य वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां देव राजार्चितानाम्,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ।।३।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवा ।
श्चंद्राम्भोज शिखण्डि कण्ठ-कनक-प्रावृंघनाभाजिनाः।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा , दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः ।
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।।४।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजदतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे ,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषांके ।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके ,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले,यानि चैत्यालयानि ।।५।

देवा सुरेन्द्र नरनागसमर्चितेभ्यः,
पापप्रणाशकर भव्य मनोहरेभ्यः ।
घंटाध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो,
नित्यं नमो जगति सर्व जिनालयेभ्यः ।।६।।

कायोत्सर्ग

इच्छामि भंते ! चेइय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि, किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकाल अंचंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति अहमवि इह सतो तत्थ संताइं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमण, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ-मज्झं ।

।। इति चैत्य भक्तिः ।।

श्री श्रुतभक्ति

स्तोष्ये संज्ञानानि परोक्ष-प्रत्यक्ष-भेद-भिन्नानि ।
लोकालोक-विलोकन-लोलित-सल्लोक-लोचनानि सदा ।।१।।

मतिज्ञान की स्तुति

अभिमुख-नियमित-बोधन-
माभिनिबोधिक-मनिन्द्रियेन्द्रियजम् ।
बह्वाद्यवग्रहादिक-कृत-
षट्त्रिंशत्-त्रिशत-भेदम् ।।२।।

विविधर्द्धि-बुद्धि-कोष्ठ-स्फुट-
बीज-पदानुसारि-बुद्ध्यधिकम् ।
संभिन्न-श्रोतृ-तया,
सार्धं श्रुतभाजनं वन्दे ।।३।।

श्रुतज्ञान की स्तुति

श्रुतमपि-जिनवर-विहितं गणधर-रचितं द्व्यनेक-भेदस्थम् ।
अंगांगबाह्य-भावित-मनन्त-विषयं नमस्यामि ।।४।।

भावश्रुतज्ञान

पर्यायाक्षर-पद-सघात-प्रतिपत्तिकानुयेग-विधीन् ।
प्राभृतक-प्राभृतकं प्राभृतकं वस्तु-पूर्वं च ।।५।।

तेषां समासतोऽपि च विंशति-भेदान् समश्नुवानं तत् ।
वन्दे द्वादशधोक्तं गम्भीर-वर-शास्त्र-पद्धत्या ।।६।।

श्रुतज्ञान के बारह भेद

आचारं सूत्रकृतं स्थानं समवाय-नामधेयं च।
व्याख्या-प्रज्ञप्तिं च ज्ञातृकथोपासकाध्ययने ॥७॥

वन्देऽन्तकृद्दश-मनुत्तरोपपादिकदश दशावस्थम्।
प्रश्नव्याकरण हि विपाकसूत्रं च विनमामि ॥८॥

दृष्टिवाद (बारहवे) अग की स्तुति

परिकर्म च सूत्रं च स्तौमि प्रथमानुयोग-पूर्वगते।
सार्द्ध चूलिकयापि च पंचविध दृष्टिवाद च ॥९॥

पूर्वगत तु चतुर्दशधोदित-मुत्पादपूर्व-माद्यमहम्।
आग्रा यणीय-मीडे पुरु-वीर्यानुप्रवादं च ॥१०॥

सततमहमभिवन्दे तथास्ति-नास्ति प्रवादपूर्व च।
ज्ञानप्रवाद-सत्यप्रवाद-मात्मप्रवाद च ॥११॥

कर्मप्रवाद-मीडेऽथ प्रत्याख्यान-नामधेयं च।
दशमं विद्याधार पृथुविद्यानुप्रवादं च ॥१२॥

कल्याण-नामधेयं प्राणावायं क्रियाविशाल च।
अथ लोकबिदुसारं वन्दे लोकाग्रसारपदम् ॥१३॥

दश च चतुर्दश चाष्टावष्टादश च द्वयो-र्द्विषट्क च।
षोडश च विशति च त्रिशतमपि पञ्चदश च तथा ॥१४॥

वस्तूनि दश दशान्येष्वनुपूर्व भाषितानि पूर्वाणाम्।
प्रतिवस्तु प्राभृतकानि विंशति विंशति नौमि ॥१५॥

आग्रायणीय पूर्व के १४ अधिकारो के नाम

पूर्वान्तं ह्यपरान्तं ध्रुव-मध्रुव-च्यवनलब्धि-नामानि ।
अध्रुव-सम्प्रणिधिं चाप्यर्थ भौमावयाद्यं च ।।१६।।

सर्वार्थ-कल्पनीयं ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालम् ।
सिद्धि-मुपाध्यं च तथा चतुर्दश-वस्तूनि द्वितीयस्य ।।१७।।

कर्म प्रकृति के २४ अनुयोगो के नाम

पञ्चमवस्तु-चतुथ-प्राभृतकस्यानुयोग-नामानि ।
कृतिवेदने तथैव स्पर्शन-कर्मप्रकृतिमेव ।।१८।।

बन्धन-निबन्धन-प्रक्रमानुपक्रम-मथाभ्युदय-मोक्षौ ।
सङ्क्रमलेश्ये च तथा लेश्यायाः कर्म-परिणामौ ।।१९।।

सात-मसातं दीर्घं ह्रस्वं भवधारणीय-संज्ञं च ।
पुरुपुद्गलात्मनाम च निधत्त-मनिधत्त-मभिनौमि ।।२०।।

सनिकाचित-मनिकाचित-मथ-कर्मस्थितिकपश्चिमस्कधौ ।
अल्पबहुत्वं च यजे तद्द्वाराणां चतुर्विंशम् ।।२१।।

द्वादशांग श्रुतज्ञान की पद संख्या

कोटीनां द्वादशशत-मष्टापञ्चाशतं सहस्त्राणाम् ।
लक्षत्र्यशीति-मेव च पञ्च च वन्दे श्रुतपदानि ।।२२।।

एक एक पद के अक्षरो की संख्या

षोडशशतं चतुस्त्रिंशत् कोटीनां त्र्यशीति-लक्षाणि ।
शतसख्याष्टा सप्तति-मष्टाशीतिं च पद-वर्णान् ।।२३।।

अगबाह्य के भेदो की स्तुति

सामायिकं चतुर्विंशति-स्तवं वन्दना प्रतिक्रमणम् ।
वैनयिकं कृतिकर्म च पृथु-दशवैकालिकं च तथा ।।२४।।

वर-मुत्तराध्ययन-मपि कल्पव्यवहार-मेव-मभिवन्दे ।
कल्पाकल्पं स्तौमि महाकल्पं पुण्डरीकं च ।।२५।।

परिपाट्या प्रणिपतितोऽस्म्यहं महापुण्डरीकनामैव ।
निपुणान्यशीतिकं च प्रकीर्णकान्यंग-बाह्यानि ।।२६।।

अवधिज्ञान की स्तुति

पुद्गल-मर्यादोक्तं प्रत्यक्षं सप्रभेद-मवधिं च ।
देशावधि-परमावधि-सर्वावधि-भेद-मभिवन्दे।।२७।।

मन.पर्ययज्ञान की स्तुति

परमनसि स्थितमर्थं मनसा परिविद्य मन्त्रि-महित-गुणम् ।
ऋजु-विपुलमति-विकल्पं स्तौमि मनःपर्ययज्ञानम् ।।२८।।

केवलज्ञान की स्तुति

क्षायिक-मनन्त-मेकं त्रिकाल-सर्वार्थ-युगपदवभासम् ।
सकल-सुख-धाम सतत वंन्देऽहं केवलज्ञानम् ।।२९।।

स्तुति के फल की प्रार्थना

एवमभिष्टुवतो मे ज्ञानानि समस्त-लोक-चक्षूंषि ।
लघु भवताज्ज्ञानर्द्धि-र्ज्ञानफलं सौख्य-मच्यवनम् ।।३०।।

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अंगोवंग-पइण्णए पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

श्री चारित्र भक्ति

येनेन्द्रान् भुवन-त्रयस्य विलसत्-केयूर-हारांगदान्,
भास्वन्-मौलि-मणिप्रभा-प्रविसरोत्-तुंगोत्तमांगान्नतान् ।
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनय-श्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्-नाचार-मभ्यर्चितम् ।।१।।

ज्ञानाचार का स्वरूप

अर्थ-व्यञ्जन-तदद्वया-विकलता-कालोपधा-प्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहु-मति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।
श्रीमज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचार-महं त्रिधा प्रणिपताभ्युद्धूतये कर्मणाम् ।।२।।

दर्शनाचार का स्वरूप

शंका-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षणविधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धताम्,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं धर्मोपबृंह-क्रियाम् ।
शक्त्या शासन-दीपनं हित-पथाद् भ्रष्टस्य संस्थापनम्,
वन्दे दर्शन-गोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् ।।३।।

तप आचार (बाह्य तप) का स्वरूप

एकान्ते शयनोपवेशन-कृतिः संतापनं तानवम्,
संख्या-वृत्ति-निबन्धना-मनशनं विष्वाण-मर्द्धोदरम् ।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्,
षोढ़ा बाह्य-महं स्तुवे शिव गति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः ।।४।।

अन्तरग तपो का वर्णन

स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ, वृद्धे च बाले यतौ ।
कायोत्सर्जन सत्क्रिया विनय-इत्येवं तपः षड्विधं,
वंदेऽभ्यन्तरमन्तरंग बलवद्विद्वेषि विध्वंसनम् ।।५।।

वीर्याचार का वर्णन

सम्यग्ज्ञान विलोचनस्य दधतः, श्रद्धानमर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि, स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।
या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा, लध्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं, वन्दे सतामर्चितम् ।।६।।

चारित्राचार का वर्णन

तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनुमनो, भाषानिमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः पञ्चव्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं, पूर्व न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते, वीर नमामो वयम् ।।७।।

पञ्चाचार पालने वालो की वन्दना

आचार सह-पञ्चभेदमुदितं, तीर्थ परंमंगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्रमहतो, वंदे समग्रान्यतीन्।
आत्माधीन सुखोदया मनुपमां, लक्ष्मीमविध्वंसिनीम्,
इच्छन्केवलदर्शनावगमन, प्राज्य प्रकाशोज्वलाम् ।।८।।

चारित्र पालन मे दोषो की आलोचना

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्नर्जितमस्यति प्रतिनवं, चैनो निराकुर्वति।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृत भवतु मे, स्वंनिंदितो निंदितम् ।।९।।

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदय प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतय., शान्तैनसः प्राणिनः।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुल, सोपानमुच्चैस्तराम्,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिद, जैनेन्द्र-मोजस्विनः ।।१०।।

इच्छामि भंते ! चारित्त भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्स आलोचउं सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्वपहाणस्स, णिव्वाणमग्गस्स, कम्मणिज्जरफलस्स, खमाहारस्स, पञ्चमहव्वयसंपण्णस्स, तिगुत्तिगुत्तस्स, पञ्चसमिदिजुत्तस्स, णाणज्झाण साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्म-चारित्तस्स णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

।। इति श्री चारित्रभक्ति ।।

श्री योगि भक्ति

दुबई छन्द

कैसे साधु वन का आश्रय लेते है ?

जातिजरोरुरोग मरणातुर, शोक सहस्त्रदीपिताः,
दुःसहनरकपतन सन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्धचेतसः ।
जीवितमंबु बिंदुचपलं, तडिदभ्रसमा विभूतयः,
सकलमिदंविचिन्त्यमुनयः, प्रशमायवनान्तमाश्रिताः ।।१।।

भद्रिका छन्द

वन मे जाकर साधु क्या करता है ?

व्रतसमिति गुप्ति संयुताः,
शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।
ध्यानाध्ययनवशंगताः,
विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ।।२।।

दुबई छन्द

ग्रीष्म ऋतु मे मुनिराज क्या करते हैं ?

दिनकर किरणनिकरसंतप्त, शिलानिचयेषु निष्पृहाः,
मलपटलावलिप्त तनवः, शिथिली कृतकर्म बंधनाः ।
व्यपगतमदनदर्प रतिदोष, कषाय विरक्त मत्सराः,
गिरिशिखरेषुचंडकिरणाभि, मुखस्थितयो दिगम्बरा· ।।३।।

भद्रिका छन्द

मुनिराज भयंकर आतप की वेदना कैसे सहते हैं ?

सज्ज्ञानामृतपायिभिः, क्षान्तिपयः सिञ्च्यमानपुण्यकायै· ।
धृतसंतोषच्छत्रकैः, तापस्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः ।।४।।

वर्षा ऋतु मे मुनिराज क्या करते हैं ?

शिखिगल कज्जलालिमलिनै, र्विबुधाधिपचाप चित्रितैः,
भीमरवैर्विसृष्टचण्डा शनि, शीतल वायु वृष्टिभिः ।
गगनतलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु, निशासु विशंकमासते ।।५।।
जलधाराशरताडिता,न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः ।
संसार दुःख भीरवः, परीषहा राति-घातिनःप्रवीराः ।।६।।

दुबई छन्द

शीतकाल मे वे मुनिराज क्या करते हैं ?

अविरतबहल तुहिनकण, वारिभिरंघ्रिपपत्र पातनै-
रनवरतमुक्तसात्काररवैः, पुरुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः।
इह श्रमणा धृतिकंबलावृताः शिशिरनिशां,
तुषार विषमां गमयन्ति, चतुःपथे स्थिताः ।।७।।

स्तुति फल की याचना

इति योगत्रयधारिणः, सकलतपशालिनःप्रवृद्धपुण्यकायाः ।
परमानन्दसुखैषिणः, समाधिमग्र्यं दिशंतु नो भदन्ताः ।।८।।

क्षेपकश्लोकानि

योगीश्वरान् जिनान्सर्वान्योगनिर्धूत कल्मषान् ।
योगैस्त्रिभिरहं वंदे, योगस्कध प्रतिष्ठितान् ।।१।।
प्रावृट्कालेसविद्युत्प्रपतितसलिले वृक्षमूलाधिवासाः ।
हेमंते रात्रिमध्ये, प्रतिविगतभयाकाष्ठवत् त्यक्तदेहाः ।।१।।

ग्रीष्मे सूर्यासुतप्ता, गिरिशिखरगताः स्थानकूटान्तरस्थाः ।
ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगणवृषभा मोक्षनि·श्रेणिभूताः ।।२।।
गिम्हे गिरिसिहरत्था, वरिसायालेरुक्खमूलरयणीसु ।
सिसिरे वारिसयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।३।।
गिरिकंदरदुर्गेषु, ये वसंति दिगंबराः ।
पाणिपात्र पुटाहारास्ते यांति परमां गतिम् ।।४।।

कायोत्सर्ग.

इच्छामि भंते ! योगि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्ढाइज्जदीवदोसमुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, आदावणरुक्खमूलअब्भोवासठाणमोण-विरासणेक्कपास कुक्कुडासण चउछपक्खखवणादि जोगजुत्ताण, सव्वसाहूण, णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमण, समाहिमरण, जिणगुणसपत्ति होउ मज्झ ।

।। इति श्रीयोगिभक्ति ।।

आचार्य भक्ति

स्कन्दच्छन्द.

सिद्ध-गुण-स्तुति निरता, नुद्धूत-रुषाग्नि-जालबहुलविशेषान्।
गुप्तिभिरभिसंपूर्णान् मुक्ति युतःसत्यवचनलक्षितभावान् ।।
मुनिमाहात्म्य विशेषान्, जिनशासनसत्प्रदीपभासुरमूर्तीन् ।
सिद्धिं प्रपित्सुमनसो, बद्धरजोविपुलमूलघातनकुशलान् ।।

गुणमणिविरचितवपुषः,षड्द्रव्यविनिश्चितस्यधातृन्सततम् ।
रहितप्रमादचर्यान्, दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टि करान् ।।
मोहच्छिदुग्रतपसः, प्रशस्तपरिशुद्धहृदयशोभन व्यवहारान् ।
प्रासुकनिलया ननघानाशा विध्वंसिचेतसो हतकुपथान् ।।
धारितविलसन्मुण्डान्वर्जितबहु दण्डपिण्डमण्डल निकरान् ।
सकलपरीषहजयिनः, क्रियाभिरनिशंप्रमादतः परिरहितान् ।।
अचलान्व्यपेतनिद्रान्, स्थानयुतान्कष्टदुष्टलेश्या हीनान् ।
विधिनानाश्रितवासा, नलिप्तदेहान्विनिर्जितेन्द्रियकरिणः ।।
अतुलानुत्कुटिकासान्विविक्त चित्तानखंडितस्वाध्यायान् ।
दक्षिणभावसमग्रान्, व्यपगतमदरागलोभशठमात्सर्यान् ।।
भिन्नार्तरौद्रपक्षान्संभावित, धर्मशुक्लनिर्मल हृदयान् ।
नित्यंपिनद्धकुगतीन्,पुण्यान्गण्योदयान्विलीनगारवचर्यान् ।।

स्कन्दच्छन्दः

तरुमूलयोगयुक्ता,
नवकाशा तापयोगराग सनाथान् ।
बहुजन हितकर चर्या-
नभयाननघान्महानुभाव विधानान् ।।९।।

ईदृशगुणसंपन्नान्,
युष्मान्भक्त्या विशालया स्थिरयोगान् ।
विधिनानारत मग्रयान्-
मुकुलीकृतहस्तकमल शोभित शिरसा ।।१०।।

अभिनौमि सकलकलुष,
प्रभवोदय जन्म जरामरण बंधन मुक्तान् ।
शिवमचल मनघमक्षय-
मव्याहत मुक्ति सौख्यमस्त्विति सततम् ।।११।।

क्षेपकश्लोकानि

श्रुतजलधिपारगेभ्यः, स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।
सुचरित तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ।।

छत्तीसगुणसमग्गे, पंचविहाचारकरण संदरिसे ।
सिस्साणुग्गहकुसले, धम्माइरिये सदा वंदे ।।

गुरुभत्ति संजमेण य, तरंति संसारसायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठकम्मं, जम्मणमरणं ण पावेंति ।।

ये नित्यं व्रतमंत्रहोमनिरता, ध्यानाग्नि होत्राकुलाः ।
षट्कर्माभिरतास्तपोधन धनाः, साधुक्रियाः साधवः ।।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चंद्रार्क तेजोऽधिकाः ।
मोक्षद्वार कपाट पाटनभटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शन नायकाः ।
चारित्रार्णव गंभीरा, मोक्षमार्गोपदेशकाः ।।

प्राज्ञः प्राप्तसमस्त शास्त्र हृदय, प्रव्यक्तलोकस्थितिः ।
प्रस्ताशः प्रतिभापर प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः ।।

प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनो, हारी परानिन्दया ।
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः, प्रस्पष्ट मिष्टाक्षरः ।।

श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने।
परिणतिरुरुद्योगो मार्ग प्रवर्तन सद्विधौ ॥
बुधनुतिरनुत्सेको, लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा।
यतिपतिगुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम् ॥

विशुद्धवंशः परमाभिरूपो जितेन्द्रियोधर्मकथाप्रसक्तः ।
सुखर्द्धिलाभेष्वविसक्तचित्तो बुधैः सदाचार्य इति प्रशस्तः॥

विजितमदनकेतुं निर्मलं निर्विकारं,
रहितसकलसंगं संयमासक्त चित्तं।
सुनयनिपुणभावं ज्ञाततत्वप्रपञ्चम्,
जननमरणभीतं सद्गुरु नौमि नित्यम् ॥

सम्यग्दर्शन मूलं, ज्ञानस्कंधं चरित्रशाखाढ्यम्।
मुनिगणविहगाकीर्णं, माचार्य महाद्रुमम् वन्दे ॥

कायोत्सर्गः

इच्छामि भंते ! आइरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण, सम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं, उवज्झायाणं, तिरयणगुणपालणरयाणं, सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमण, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ-मज्झं ।

॥ इत्याचार्यभक्ति. ॥

श्री पञ्च गुरु भक्ति

श्रीमदमरेन्द्र-मुकुट-प्रघटित-
मणि-किरण-वारि-धाराभिः ।
प्रक्षालित-पद-युगलान्,
प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या ।।१।।
अष्टगुणैः समुपेतान्,
प्रणष्ट-दुष्टाष्ट-कर्मरिपु-समितीन् ।
सिद्धान सतत-मनन्तान्-
नमस्करो मीष्ट तुष्टि संसिद्ध्यै ।।२।।

साचार-श्रुत-जलधीन्-
प्रतीर्य शुद्धोरुचरण-निरतानाम् ।
आचार्याणां पदयुग-
कमलानि दधे शिरसि मेऽहम् ।।३।।

मिथ्या-वादि-मद्रोग्र-ध्वान्त-प्रध्वन्सि-वचन-सदर्भान् ।
उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारि-प्रणाशाय ।।४।।

सम्यग्दर्शन-दीप-प्रकाशका-मेय-बोध-सम्भूताः ।
भूरि-चरित्र-पताकास्ते साधु-गणास्तु मां पान्तु ।।५।।

जिन-सिद्ध-सूरि-देशक-साधु-वरानमल गुण गणोपेतान् ।
पञ्चनमस्कार-पदै-स्त्रि-सन्ध्य-मभिनौमि मोक्ष-लाभाय ।।६।।

एषः पञ्चनमस्कारः, सर्वपापप्रणाशनः ।
मगलाना च सर्वेषां, प्रथम मंगल भवेत् ।।७।।

अर्हत्सिद्धाचार्यो-पाध्यायाः सर्वसाधवः ।
कुर्वन्तु मंगलाः सर्वे, निर्वाण परमश्रियम् ।।८।।

सर्वान् जिनेन्द्र चंद्रान्, सिद्धानाचार्य पाठकान् साधून् ।
रत्नत्रयं च वंदे, रत्नत्रयसिद्धये भक्त्या ।।९।।

पांतु श्रीपादपद्मानि, पञ्चानां परमेष्ठिनां ।
लालितानि सुराधीश, चूडामणि मरीचिभिः ।।१०।।

प्रतिहार्यैर्जिनान् सिद्धान्, गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः ।
पाठकान् विनयैः साधून्, योगांगैरष्टभिः स्तुवे ।।११।।

कायोत्सर्ग

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरु-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउ, अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं, अरहंताणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, सिद्धाणं, अट्ठ-पवय-णमउ संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणोवदेसयाण उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण पालणरदाणं सव्वसाहूणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं ।

।। इति पञ्च गुरु भक्ति. ।।

श्री शांति भक्ति

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् ! पादद्वयं ते प्रजाः,
हेतुस्तत्र विचित्र दुःख निचयः संसार घोरार्णवः।
अत्यन्त स्फुरदुग्र रश्मि निकर व्याकीर्ण भूमण्डलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दु पाद सलिल च्छायानुरागं रविः ।।१।।

प्रणाम करने का ऐहिक फल

क्रुद्धाशीर्विष दष्ट दुर्जय विष ज्वालावली विक्रमो,
विद्या भेषज मन्त्र तोय हवनै र्याति प्रशान्तिं यथा ।
तद् वत्ते चरणारुणाम्बुज युग स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्,
विघ्नाःकायविनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः ।।२।।

प्रणाम करने का फल

सन्तप्तोत्तम काञ्चन क्षितिधर श्री स्पर्द्धि गौरद्युते,
पुंसां त्वच्चरणप्रणाम करणात्पीडा· प्रयान्तिक्षयं ।
उद्यद्भास्कर विस्फुरंत्कर शतव्याघात निष्कासिता,
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ।।३।।

मुक्ति का कारण जिन स्तुति

त्रैलोक्येश्वर भग लब्ध विजयादत्यन्त रौद्रात्मकान्,
नाना जन्म शतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद पद्म युगल स्तुत्यापगा वारणम् ।।४।।

स्तुति से असाध्य रोगो का नाश

लोकालोक निरन्तर प्रविततत् ज्ञानैक मूर्त्ते विभो !
नाना रत्न पिनद्ध दण्ड रुचिर श्वेतातपत्रत्रय।
त्वत्पाद द्वय पूत गीत रवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीम निनदाद् वन्या यथा कुञ्जराः ॥५॥

स्तुति से अनन्त सुख

दिव्य स्त्री नयनाभिराम विपुल श्री मेरु चूडामणे,
भास्वद् बाल दिवाकर-द्युतिहर प्राणीष्ट भामण्डल।
अव्याबाध मचिन्त्यसार मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्,
सौख्यं त्वच्चरणारविन्द युगल स्तुत्यैव सम्प्राप्यते ॥६॥

भगवान् के चरण-कमल प्रसाद से पापो का नाश

यावन्नोदयते प्रभा परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् धारयतीह पंकज वनं निद्रातिभार श्रमम्।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन् ! न स्यात् प्रसादोदय-
स्तावज्जीव निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ॥७॥

स्तुति फल याचना

शान्तिं शान्ति जिनेन्द्र शान्त,
मनसस्त्वत्पाद पद्माश्रयात्।
संप्राप्ताः पृथिवी तलेषु बहवः,
शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ॥

कारुण्यान् मम भाक्तिकस्य च विभो !
दृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।
त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः,
शान्त्यष्टकं भक्तितः ।।८।।

शान्ति जिनं शशि निर्मल वक्त्रं,
शीलगुण व्रत संयम पात्रम् ।
अष्टशतार्चित लक्षण गात्रं,
नौमि जिनोत्तम मम्बुज नेत्रम् ।।९।।

पञ्चम मीप्सित-चक्रधराणां,
पूजित मिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च ।
शान्तिकरं गण-शान्ति-मभीप्सुः,
षोडश-तीर्थकरं-प्रणमामि ।।१०।।

दिव्यतरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टि-
र्दुन्दुभिरासन-योजन घोषौ ।
आतप-वारण-चामर-युग्मे,
यस्य विभाति च मण्डलतेजः ।।११।।

तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्र,
शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्व गणाय तु यच्छतु शान्तिं,
मह्यमरं पठते परमां च ।।१२।।

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैःस्तुत-पादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु ।।१३।।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्तिं भगवान्-जिनेन्द्रः ।।१४।।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु,
बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग् वितरतु मघवा,
व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां,
मास्मभूज्जीव-लोके ।
जैनेन्द्र धर्मचक्रं प्रभवतु सततं,
सर्व-सौख्य-प्रदायि ।।१५।।

तद् द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभ स देशः,
संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः ।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण,
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षवर्गे ।।१६।।

प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवलज्ञान भास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ।।१७।।

क्षेपक श्लोकानि

शांति शिरोधृत जिनेश्बर शासनानां,
शान्तिः निरन्तर तपोभव भावितानां ।
शान्तिः कषाय जय जृम्भित वैभवानां,
शान्ति· स्वभाव महिमानमुपागतानाम् ।।१।।

जीवन्तु संयम सुधारस पान तृप्ता,
नंदतु शुद्ध सहसोदय सुप्रसन्ना. ।
सिद्धयतु सिद्धि सुख संगकृताभियोगाः,
तीव्र तपन्तु जगतां त्रितयेऽर्हदाज्ञा ।।२।।

शान्तिः शतनुता समस्त जगतः, सगच्छतां धार्मिकै· ।
श्रेयः श्री परिवर्धतां नयधरा, धुर्यो धरित्री पतिः ।।२।।

सद्विद्यारसमुद्गिरन्तु कवयो, नामाप्य धस्यास्तु मा ।
प्रार्थ्य वा कियदेक एव, शिवकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ।।३।।

इच्छामि भते । संतिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउ, पञ्च-महा-कल्लाण-सपण्णाण, अट्ठमहापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेद-मणिमय मउड मत्थय महियाणं बलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि-मुणि-जदि-अणगारोव गूढ़ाण, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाण, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मगल-महापुरिसाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइमगणं, समाहि-मरणं जिण-गुण सम्पत्ति होदु मज्झं ।

श्री समाधि भक्ति

स्वात्माभिमुख-संवित्ति, लक्षणं श्रुत-चक्षुषा,
पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञान-चक्षुषा ।।१।।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः, संगति सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगण-कथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ।।२।।

जैनमार्गरुचिरन्यमार्ग निर्वेगता, जिनगुणस्तुतौ मतिः ।
निष्कलक विमलोक्ति भावनाः, सभवन्तु मम जन्म-जन्मनि।।३।।

गुरुमूले यति-निचिते-चैत्यासिद्धान्त वार्धिसद्घोषे,
मम भवतु जन्म जन्मनि, सन्यसन समन्वितं मरणम् ।
जन्मजन्मकृतं पापं, जन्मकोटि समार्जितम्,
जन्ममृत्युजरामूलं, हन्यते जिनवंदनात् ।।५।।

आबाल्याज्जिनदेवदेव ! भवतः, श्री पादयोः सेवया,
सेवासक्तविनेयकल्पलतया, कालोऽद्ययावद्गतः ।
त्वा तस्याः फलमर्थये तदधुना, प्राणप्रयाणक्षणे,
त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने, कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम ।।६।।

तवपादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाण संप्राप्तिः ।।७।।

एकापि समर्थेयं, जिनभक्ति-दुर्गतिं निवारयितुम् ।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ।।८।।

पञ्चअरिंजयणामे पञ्च, य मदि-सायरे जिणेवन्दे।
पञ्च जसोयरणामे, पञ्चय सीमंदरे वन्दे ।।९।।

रयणत्तयं च वंदे, चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे।
पञ्चगुरूणां वदे, चारणचरण सदावदे ।।१०।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वत· प्रणिदध्महे ।।११।।

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेत, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ।।१२।।

आकृष्टिं सुरसंपदा विदधते, मुक्तिश्रियो वश्यताम्,
उच्चाट विपदा चतुर्गतिभुवां, विद्वेषमात्मैनसाम्।
स्तम्भ दुर्गमनं प्रति प्रयततो, मोहस्य सम्मोहनम्,
पायात्पञ्च नमस्क्रियाक्षरमयी, साराधना देवता ।।१३।।

अनन्तानन्त ससार, सततिच्छेद कारणम्।
जिनराजपदाम्भोज, स्मरणं शरणं मम ।।१४।।

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरण मम।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष-रक्ष जिनेश्वर ! ।।१५।।

नहित्राता नहित्राता, नहित्राता जगत्त्रये।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ।।१६।।

जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति, र्जिनेभक्ति र्दिने दिने।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे ।।१७।।

याचेऽहं याचेऽहं, जिन ! तव चरणारविंदयोर्भक्तिम् ।
याचेऽहं याचेऽहं, पुनरपि तामेव तामेव ।।१८।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत पन्नगाः ।
विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ।।१९।।

कायोत्सर्गः

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, रयणत्तयसरूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहिभत्तीये णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ, मज्झं ।

।। इति-समाधिभक्ति ।।

श्री निर्वाण भक्ति

आर्या छन्द

विबुधपति-खगपतिनरपतिधनदोरगभूतयक्ष पतिमहितम् ।
अतुलसुखविमलनिरुपमशिवमचलमनामयं हि संप्राप्तम् ।।१।।

कल्याणैः-संस्तोष्ये पञ्चभिरनघं त्रिलोक परमगुरुम् ।
भव्यजनतुष्टिजननैर्दुरवापैः सन्मतिं भक्त्या ।।२।।

आषाढसुसितषष्ठ्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रितेशशिनि ।
आयातः स्वर्गसुखं भुक्त्वापुष्पोत्तराधीशः ।।३।।

सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे ।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान् संप्रदर्श्य विभुः ।।४।।

चैत्रसितपक्षफाल्गुनि शशांकयोगे दिने त्रयोदश्याम् ।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ।।५।।

हस्ताश्रिते शशांके चैत्र ज्योत्स्ने चतुर्दशीदिवसे ।
पूर्वाह्णे रत्नघटैर्विबुधेन्द्राश्चक्रुरभिषेकम् ।।६।।

भुक्त्वा कुमारकाले त्रिंशद्वर्षाण्यनंत गुणराशिः ।
अमरोपनीतभोगान्सहसाभिनिबोधितोऽन्येद्यु· ।।७।।

नानाविधरूपचितां विचित्रकूटोच्छ्रिता मणिविभूषाम् ।
चन्द्रप्रभाख्यशिविकामारुह्य पुराद्विनि. क्रान्त· ।।८।।

मार्गशिरकृष्णदशमी हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते सोमे ।
षष्ठेन त्वपराह्णे भक्तेन जिनः प्रवव्राज ।।९।।

ग्रामपुर खेटकर्वटमटंब घोषाकरान्प्रविजहार ।
उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादशवर्षाण्यमर पूज्य. ।।१०।।

ऋजुकूलायास्तीरे शाल्मद्रुम संश्रिते शिलापट्टे ।
अपराह्णे षष्ठेनास्थितस्य खलु जृंभिकाग्रामे ।।११।।

वैशाखसितदशम्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते चन्द्रे ।
क्षपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम् ।।१२।।

अथ भगवान् संप्रापद्-दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम् ।
चातुर्वर्ण्य सुसंघस्तत्राभूद् गौतमप्रभृति ।।१३।।

छत्राशोकौ घोष सिंहासन दुंदुभि कुसुमवृष्टिम्।
वरचामर भामण्डलदिव्यान्यन्यानि चावापत् ॥१४॥

दसविधमनगाराणामेकादशधोत्तरं तथा धर्मम्।
देशयमानो व्यवहरंस्त्रिंशद्वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः ॥१५॥

पद्मवनदीर्घिकाकुल विविध द्रुमखण्ड मण्डिते रम्ये।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः ॥१६॥

कार्तिककृष्ण स्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्यकर्मरजः।
अवशेषं संप्रापद्व्यजरामरमक्षयं सौख्यम् ॥१७॥

परिनिर्वृत्तं जिनेन्द्रं ज्ञात्वा विबुधाह्यथासु चागम्य।
देवतरुरक्तचन्दन कालागरु सुरभिगो शीर्षैः ॥१८॥

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभि धूपवरमाल्यैः।
अभ्यर्च्य गणधरानपि गतादिवं खं च वनभवने ॥१९॥

इत्येवं भगवति वर्धमान चन्द्रे,
यः स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि।
सोऽनन्तं परमसुखं नृदेवलोके,
भुक्त्वान्ते शिवपदमक्षयं प्रयाति ॥२०॥

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां,
निर्वाणभूमिरिह भारतवर्षजानाम्।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः,
संस्तोतुमुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ॥२१॥

कैलाश शैलशिखरे परिनिर्वृतोऽसौ,
शैलेशिभावमुपपद्य वृषो महात्मा ।
चम्पापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान्,
सिद्धिं परामुपगतो गतरागबन्धः ।।२२।।

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः,
पाखण्डिभिश्च परमार्थगवेष शीलैः ।
नष्टाष्ट कर्म समये तदरिष्टनेमिः,
संप्राप्तवान् क्षितिधरे वृहदूर्जयन्ते ।।२३।।

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे,
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्री वर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा ।।२४।।

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्ला,
ज्ञानार्क भूरि किरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं पर निरवधारित सौख्यनिष्ठं,
सम्मेद पर्वततले समवापुरीशाः ।।२५।।

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्त योगः,
षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिन वर्द्धमानः ।
शेषाविधूत घनकर्म निबद्धपाशाः,
मासेन ते यतिवरांस्त्वभवन्वियोगाः ।।२६।।

माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धा-
न्यादाय मानसकरैरभितः किरन्तः ।

पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः,
संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ।।२७।।
शत्रुञ्जये नगवरे दमितारिपक्षाः,
पण्डोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः ।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा,
नद्यास्तटे जिनरिपुश्च सुवर्णभद्रः ।।२८।।
द्रोणीमति प्रबलकुण्डल मेढ्रके च,
वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे ।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च,
विन्ध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च ।।२९।।
सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे,
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः,
स्थानानि तानि जगति प्रथितान्य भूवन् ।।३०।।
इक्षोर्विकार रसपृक्त गुणेन लोके,
पिष्टोऽधिकं मधुरतामुपयाति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषै रुषितानि नित्यं,
स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ।।३१।।
इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां,
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति भूमि देशाः ।
तेमे जिना जितभया मुनयश्च शांताः,
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्यसौख्याम् ।।३२।।

क्षेपक श्लोकानि

कैलाशाद्रौ मुनीन्द्रः पुरुरपदुरितो मुक्तिमाप प्रणूतः ।
चंपायां वासुपूज्यस्त्रिदशपतिनुतो नेमिरप्यूर्जयंते ।।१।।
पावायां वर्धमानस्त्रिभुवनगुरवो विंशतिस्तीर्थनाथाः ।
सम्मेदाग्रे प्रजग्मुर्ददतु विनमतां निर्वृत्तिं नो जिनेन्द्राः ।।२।।
गोर्गजोश्वः कपिः कोकः सरोजः स्वस्तिकः शशी ।
मकरः श्रीयुतो वृक्षो गंडो महिष सूकरौ ।।३।।
सेधा वज्रमृगच्छागाः पाठीनः कलशस्तथा ।
कच्छपश्चोत्पलं शंखो नागराजश्च केसरी ।।४।।
शान्ति कुन्थवर कौरव्या यादवौ नेमिसुव्रतौ ।
उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा इक्ष्वाकुवंशजाः ।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, इमम्मि, अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए, आउट्ठमासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि, पावाए णयरीए कत्तिय मासस्स किण्ह चउदसिए रत्तीए सादीए, णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो । तिसुवि लोएसु, भवणवासिय-वाणविंतर जोयिसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण

दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अच्चंति, पूजंति, वंदंति, णमंसंति परिणिव्वाण महाकल्लाण पुज्जं करंति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहि-मरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

।। इति निर्वाण भक्तिः ।।

श्री नन्दीश्वर भक्ति

त्रिदशपतिमुकुट तट गतमणि,
गणकर निकर सलिलधाराधौत।
क्रमकमलयुगलजिनपति रुचिर,
प्रतिबिम्बविलय विरहितनिलयान् ।।१।।
निलयानहमिह महसां सहसा,
प्रणिपतन पूर्वमवनौम्यवनौ।
त्रय्यां त्रय्या शुद्धया निसर्ग,
शुद्धान्विशुद्धये घनरजसाम् ।।२।।

भवनवासियो के विमानो के अकृत्रिम चैत्यालयो का वर्णन

भावनसुर-भवनेषु,
द्वासप्तति-शत-सहस्त्र-संख्याभ्यधिकाः ।
कोट्यः सप्त प्रोक्ता,
भवनानां भूरि-तेजसां भुवनानाम् ।।३।।

व्यन्तर देवो के अकृत्रिम चैत्यालयो का वर्णन

त्रिभुवन-भूत-विभूनां,
संख्यातीतान्यसख्य-गुण-युक्तानि ।
त्रिभुवन-जन-नयन-मनः,
प्रियाणिभवनानि भौम-विबुध-नुतानि ।।४।।

ज्योतिष्क तथा वैमानिक देवो के अकृत्रिम चैत्यालयो का वर्णन

यावन्ति सन्ति कान्त-ज्योति-र्लोकाधिदेवताभिनुतानि ।
कल्पेऽनेक-विकल्पे, कल्पातीतेऽहमिन्द्र-कल्पानल्पे ।।५।।

विंशतिरथ त्रिसहिता, सहस्र-गुणिता च सप्तनवतिः प्रोक्ता ।
चतुरधिकाशीतिरतः, पञ्चक-शून्येन विनिहतान्यनघानि।।६।।

मनुष्य क्षेत्र के अकृत्रिम चैत्यालयो की सख्या

अष्टापञ्चाशदतश्-चतुःशतानीह मानुषे च क्षेत्रे ।
लोकालोक-विभाग-प्रलोकनाऽऽलोक-संयुजां जय-भाजाम्।।७।।

तीनो लोको के अकृत्रिम चैत्यालयो की सख्या

नव-नव-चतुःशतानि च,
सप्त च नवतिः सहस्र-गुणिताः षट् च ।
पञ्चाशत्पञ्च-वियत्,
प्रहताः पुनरत्र कोटयोऽष्टौ प्रोक्ताः ।।८।।

एतावन्त्येव सता-मकृत्रि-
माण्यथ जिनेशिना भवनानि ।

भुवन-त्रितये त्रिभुवन-सुर-
समिति-समर्च्यमान-सप्रतिमानि ।।९।।

मध्यलोक के ४५८ चैत्यालय

वक्षार-रुचक-कुण्डल-
रौप्य-नगोत्तर-कुलेषुकारनगेषु ।
कुरुषु च जिनभवनानि,
त्रिशतान्यधिकानि तानि षड्विंशत्या ।।१०।।

नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालय

नन्दीश्वर-सद्द्वीपे,
नन्दीश्वर-जलधि-परिवृते धृत-शोभे ।
चन्द्र-कर-निकर-सन्निभ-
रुन्द्र-यशो वितत-दिङ्-मही-मण्डलके ।।११।।
तत्रत्याञ्जन-दधिमुख-
रतिकर-पुरु-नग-वराख्य-पर्वत-मुख्याः ।
प्रतिदिश-मेषा-मुपरि,
त्रयो-दशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि ।।१२।।
आषाढ़-कार्तिकाख्ये,
फाल्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः ।
आरभ्याष्ट-दिनेषु च,
सौधर्म-प्रमुख-विबुधपतयो भक्त्या ।।१३।।
तेषु महामह-मुचितं
प्रचुराक्षत-गन्ध-पुष्प-धूपै-र्दिव्यैः ।

सर्वज्ञ-प्रतिमाना-
मप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्व-हितम् ।।१४।।
भेदेन वर्णना का,
सौधर्मः स्नपन-कर्तृता मापन्नः ।
परिचारक-भावमिताः,
शेषेन्द्रा-रुन्द्र-चन्द्र-निर्मल-यशसः ।।१५।।
मंगल-पात्राणि पुनस्तद्-
देव्यो बिभ्रतिस्म शुभ्र-गुणाढ्याः ।
अप्सरसो नर्तक्यः,
शेष-सुरास्तत्र लोकनाव्यग्रधियः ।।१६।।
वाचस्पति-वाचामपि,
गोचरतां संव्यतीत्य यत्-क्रममाणम् ।
विबुधपति-विहित-विभवं,
मानुष-मात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम् ।।१७।।
निष्ठापित-जिनपूजाश्-
चूर्ण-स्नपनेन दृष्टविकृतविशेषाः ।
सुरपतयो नन्दीश्वर-
जिनभवनानि प्रदक्षिणीकृत्य पुनः ।।१८।।
पञ्चसु मंदरगिरिषु,
श्रीभद्रशालनन्दन-सौमनसम् ।
पाण्डुवनमिति तेषु,
प्रत्येकं जिनगृहाणि चत्वार्येव ।।१९।।

तान्यथ परीत्य तानि च,
नमसित्वा कृतसुपूजनास्तत्रापि ।
स्वास्पदमीयुः सर्वे,
स्वास्पदमूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य ।।२०।।

नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालयो की विभूति

सहतोरणसद्वेदी-
परीत,वनयाग-वृक्ष-मानस्तम्भः ।
ध्वजपंक्तिदशकगोपुर,
चतुष्टयत्रितय-शाल-मण्डप-वर्यैः ।।२१।।

अभिषेकप्रेक्षणिका,
क्रीडनसंगीतनाटकालोकगृहैः ।
शिल्पिविकल्पित-कल्पन-
संकल्पातीत-कल्पनै· समुपेतैः ।।२२।।

वापी सत्पुष्करिणी,
सुदीर्घिकाद्यम्बुसंसृतैः समुपेतैः ।
विकसितजलरुहकुसुमै-
र्नभस्यमानैः शशिग्रहर्क्षैः शरदि ।।२३।।

भृंगाराब्दक-कलशा,
द्युपकरणैष्टशतक-परिसख्यानैः ।
प्रत्येकं चित्रगुणै;,
कृतझणझणनिनद-वितत-घटाजालैः ।।२४।।

प्राविभाजंते नित्यं,
हिरण्मयानीश्चरेशिनां भवनानि ।
गंधकुटीगतमृगपति,
विष्टर-रुचिराणि-विविध-विभव-युतानि ।।२५।।

नन्दीश्वर के चैत्यालयों मे स्थित प्रतिमाओ का वर्णन

येषु-जिनानां प्रतिमाः,
पञ्चशत-शरासनोच्छ्रिताः सत्प्रतिमाः ।
मणिकनक-रजतविकृता,
दिनकरकोटि-प्रभाधिक-प्रभदेहाः ।।२६।।

तानि सदा वंदेऽहं,
भानुप्रतिमानि यानि कानि च तानि ।
यशसां सहसा प्रतिदिश-
मतिशय-शोभा-विभाञ्जि पापविभाञ्जि ।।२७।।

तीर्थङ्करो की स्तुति

सप्तत्यधिक-शतप्रिय,
धर्मक्षेत्रगत-तीर्थकर-वर-वृषभान् ।
भूतभविष्यत्सप्रति-
काल-भवान् भवविहानये विनतोऽस्मि ।।२८।।

भगवान् वृषभदेव की स्तुति

अस्यामवसर्पिण्या,
वृषभाजिनः प्रथमतीर्थकर्ता भर्ता ।

अष्टापदगिरिमस्तक,
गतस्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्तः ।।२९।।

भगवान वासुपूज्य की स्तुति

श्रीवासुपूज्यभगवान्,
शिवासु पूजासु पजितस्त्रिदशानाम् ।
चम्पायां दुरित-हरः,
पर मपदं प्रापदापदा-मन्तगतः ।।३०।।

नेमिनाथ स्वामी की स्तुति

मुदितमतिबलमुरारि-
प्रपूजितो जित कषायरिपुरथ जातः ।
वृहदूर्जयन्त-शिखरे,
शिखामणिस्त्रिभुवनस्य-नेमिर्भगवान् ।।३१।।

श्री महावीर स्वामी की स्तुति

पावापुरवरसरसां,
मध्यगतः सिद्धिवृद्धितपसां महसाम् ।
वीरो नीरदनादो,
भूरि-गुणश्चारु शोभमास्पद-मगमत् ।।३२।।

अवशेष बीस तीर्थङ्करों की स्तुति

सम्मदकरिवन-परिवृत-
सम्मेदगिरीन्द्रमस्तके विस्तीर्णे ।
शेषा ये तीर्थकराः,
कीर्तिभृतः प्रार्थितार्थसिद्धिमवापन् ।।३३।।

अन्य सिद्ध स्थानो से मगल प्रार्थना

शेषाणां केवलिना-
मशेषमतवेदिगणभृतां साधूनां ।
गिरितलविवरदरीसरि-
दुरुवनतरु-विटपिजलधि-दहनशिखासु ।।३४।।

मोक्षगतिहेतु-भूत-
स्थानानि सुरेन्द्ररुन्द्र-भक्तिनुतानि ।
मंगलभूतान्येता-
न्यंगीकृत-धर्मकर्मणामस्माकम् ।।३५।।

जिनपतयथस्तत्-प्रतिमा-
स्तदालयास्तन्निषद्यका स्थानानि ।
ते ताश्च ते च तानि च,
भवन्तु भव-घात-हेतवो भव्यानाम् ।।३६।।

तीनो समय नन्दीश्वर भक्ति करने का फल

सन्ध्यासु तिसृषु नित्यं,
पठेद्यदि स्तोत्र-मेतदुत्तम-यशसाम् ।
सर्वज्ञानां सार्वं,
लघु लभते श्रुतधरेडितं पद-ममितम् ।।३७।।

अरहंतो के शरीर सम्बन्धी दश अतिशय

नित्यं निःस्वेदत्वं,
निर्मलता क्षीर-गौर-रुधिरत्वं च ।

स्वाद्याकृति-संहनने,
सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्यम् ।।३८।।

अप्रमित-वीर्यता च,
प्रिय-हित वादित्व-मन्यदमित-गुणस्य ।
प्रथिता दश-विख्याता,
स्वतिशय-धर्मा स्वयं-भुवो देहस्य ।।३९।।

केवलज्ञान के दश अतिशय

गव्यूति-शत-चतुष्टय-
सुभिक्षता-गगन-गमन-मप्राणिवधः ।
भुक्त्युपसर्गाभाव-
श्चतुरास्यत्वं च सर्व-विद्येश्वरता ।।४०।।

अच्छायत्व-मपक्ष्म-
स्पन्दश्च सम-प्रसिद्ध-नख-केशत्वम्।
स्वतिशय-गुणा भगवतो,
घाति-क्षयजा भवन्ति तेऽपि दशैव ।।४१।।

देवकृत चौदह अतिशय

सार्वार्ध-मागधीया,
भाषा मैत्री च सर्व-जनता-विषया ।
सर्वर्तु-फल-स्तबक-
प्रवाल-कुसुमोपशोभित-तरु-परिणामाः ।।४२।।

आदर्शतल-प्रतिमा,
रत्नमयी जायते मही च मनोज्ञा ।
विहरण-मन्वेत्यनिलः,
परमानन्दश्च भवति सर्व-जनस्य ॥४३॥

मरुतोऽपि सुरभि-गन्ध-
व्यामिश्रा योजनान्तरं भूभागम् ।
व्युपशमित-धूलि-कण्टक-
तृण-कीटक-शर्करोपलं प्रकुर्वन्ति ॥४४॥

तदनु स्तनितकुमारा,
विद्युन्माला-विलास-हास-विभूषाः ।
प्रकिरन्ति सुरभि-गन्धिं,
गन्धोदक-वृष्टि-माज्ञया त्रिदशपतेः ॥४५॥

वर-पद्मराग-केसर-मतुल-
सुख-स्पर्श-हेम-मय-दल-निचयम् ।
पादन्यासे पद्मं सप्त,
पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवन्ति ॥४६॥

फलभार-नम्र-शालि-
व्रीह्यादि-समस्त-सस्य-धृत-रोमाञ्चा ।
परिहृषितेव च भूमि-
स्त्रिभुवननाथस्य वैभव पश्यन्ती ॥४७॥

शरदुदय-विमल-सलिलं,
सर इव गगनं विराजते विगतमलम् ।
जहति च दिशस्तिमिरिकां,
विगतरजः प्रभृति जिह्मताभावं सद्यः ।।४८।।

एतेतेति त्वरितं ज्योति-
र्व्यन्तर-दिवौकसा-ममृतभुजः ।
कुलिशभृदाज्ञापनया,
कुर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम् ।।४९।।

स्फुर-दरसहस्त्र-रुचिरं,
विमल-महारत्न-किरण-निकर-परीतम् ।
प्रहसित-किरण-सहस्त्र-
द्युति-मण्डल-मग्रगामि-धर्म-सुचक्रम् ।।५०।।
इत्यष्ट-मंगलं च,
स्वादर्श-प्रभृति-भक्ति-राग-परीतैः ।
उपकल्प्यन्ते त्रिदशै-
रेतेऽपि-निरुपमातिशयाः ।।५१।।

आठ प्रातिहार्यो का वर्णन

अशोक वृक्ष

वैडूर्य-रुचिर-विटप-प्रवाल-
मृदु-पल्लवोपशोभित-शाखः ।
श्रीमानशोक-वृक्षो वर-मरकत-
पत्र-गहन-बहलच्छायः ।।५२।।

मन्दार-कुन्द-कुवलय-
नीलोत्पल-कमल-मालती-बकुलाद्यैः ।
समद-भ्रमर-परीतै-
र्व्यामिश्रा पतति कुसुम-वृष्टि-र्नभसः ।।५३।।

चामर

कटक-कटि-सूत्र-कुण्डल-
केयूर-प्रभृति-भूषितांगौ स्वंगौ ।
यक्षौ कमल-दलाक्षौ,
परि-निक्षिपतःसलील-चामर-युगलम्।।५४।।

भामण्डल

आकस्मिक-मिव युगपद्-
दिवसकर-सहस्त्र-मपगत-व्यवधानम् ।
भामण्डल-मविभावित-
रात्रिञ्दिव-भेद-मतितरामाभाति ।।५५।।

दुन्दुभिवाद्य

प्रबल-पवनाभिघात-
प्रक्षुभित-समुद्र-घोष-मन्द्र-ध्वानम् ।
दन्ध्वन्यते सुवीणा-
वंशादि-सुवाद्य-दुन्दुभिस्तालसमम् ।।५६।।

तीन छत्र

त्रिभुवन-पतिता-लाञ्छन-
मिन्दुत्रय-तुल्य-मतुल-मुक्ता-जालम् ।

छत्रत्रयं च सुबृहद्-
वैडूर्य-विक्लृप्त-दण्ड-मधिक-मनोज्ञम् ।।५७।।

दिव्यध्वनि

ध्वनिरपि योजनमेकं,
प्रजायते श्रोतृ-हृदयहारि-गम्भीरः ।
ससलिल-जलधर-पटल-
ध्वनितमिव प्रवितताान्त-राशावलयम् ।।५८।।

सिंहासन

स्फुरितांशु-रत्न-दीधिति-
परिविच्छुरिताऽमरेन्द्र-चापच्छायम् ।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः-
स्फटिक-शिला-घटित-सिंह-विष्टर-मतुलम् ।।५९।।

यस्येह चतुस्त्रिंशत्-
प्रवर-गुणा प्रातिहार्य-लक्ष्यम्यश्चाष्टौ ।
तस्मै नमो भगवते,
त्रिभुवन-परमेश्वरार्हते गुण-महते ।।६०।।

क्षेपक-श्लोका:

गत्वा क्षितेर्वियति पंचसहस्रदण्डान्,
सोपान-विंशतिसहस्र-विराजमाना ।
रेजे सभा धनद यक्षकृता यदीया,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।१।।

सालोऽथ वेदिरथ वेदिरथोऽपि सालो,
वेदिश्च साल इह वेदिरथोऽपि साल ।
वेदिश्च भाति सदसि क्रमतो यदीये,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।२।।

प्रासाद-चैत्य-निलयाः परिखात-वल्ली,
प्रोद्यानकेतुसुरवृक्षगृहाङ् गणाश्च ।
पीठत्रयं सदसि यस्य सदा विभाति,
तस्मै नम-स्त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय ।।३।।

माला-मृगेन्द्र-कमलाम्बर वैनतेय-
मातंगगोपतिरथांगमयूरहंसाः ।
यस्य ध्वजा विजयिनो भुवने विभान्ति,
तस्मै नम-स्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।४।।

निर्ग्रंथ-कल्प-वनिता-व्रतिका भ-भौम,
नागस्त्रियो भवन-भौम-भ-कल्पदेवा. ।
कोष्ठस्थिता नृ-पशवोऽपिनमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।५।।

भाषा-प्रभा-वलयविष्टर-पुष्पवृष्टिः,
पिण्डिद्रुमस्त्रिदशदुन्दुभि-चामराणि ।
छत्रत्रयेण सहितानि लसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।६।।

भृंगार-ताल-कलश-ध्वजसुप्रतीक-
श्वेतातपत्र-वरदर्पण-चामराणि ।
प्रत्येक-मष्टशतकानि विभान्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।७।।

स्तंभ-प्रतोलि-निधि-मार्ग-तडाग-वापी-
क्रीडाद्रि-धूप-घट-तोरण-नाट्य-शाला· ।
स्तूपाश्च चैत्य-तरवो विलसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।८।।

सेनापति स्थपति-हर्म्यपति-द्विपाश्व,
स्त्री-चक्र-चर्म-मणि-काकिणिका-पुरोघा: ।
छत्रासि-दंडपतय. प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।९।।

पद्म:कालो महाकाल: सर्वरत्नश्च पांडुक:,
नैसर्पो माणव: शख: पिंगलो निधयो नव ।
एतेषां पतय प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय ।।१०।।

खविय-घण-घाइ-कम्मा,
चउतीसातिसयविसेसपचकल्लाणा ।
अट्ठवरपाडिहेरा,
अरिहंता मगला मज्झ ।।११।।

इच्छामि भते । णदीसरभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउ । णंदीसरदीवम्मि, चउदिस विदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं ण्हाणेहिं, दिव्वेहिं गधेहिं, दिव्वेहिं अक्खेहिं, दिव्वेहिं पुप्फेहिं, दिव्वेहिं चुण्णेहिं, दिव्वेहिं दीवेहिं, दिव्वेहिं धूवेहिं, दिव्वेहिं वासेहिं, आसाढ़-कात्तियफागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं, काऊण जाव पुण्णिमंति णिच्चकाल अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमसंति। णंदीसरमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थासंताइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

श्री ईर्यापथ भक्ति

स्रग्धरा

निःसंगोऽहं जिनानां सदन-
मनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या ।
स्थित्वा गत्वा निषद्यो-च्चरण-
परिणतोऽन्तः शनै-र्हस्त-युग्मम् ।।
भाले संस्थाप्य बुद्ध्या मम,
दुरित-हरं कीर्तये शक्र-वन्द्यम् ।
निन्दा-दूरं सदाप्तं क्षय-रहित-
ममुं ज्ञान-भानुं जिनेन्द्रम् ।।१।।

वसन्ततिलका

श्रीमत् पवित्रमकलंक-मनन्त-कल्पम्,
स्वायंभुवं सकल-मंगलमादि-तीर्थम् ।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्,
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ।।२।।

अनुष्टुप्

श्रीमत्परम-गम्भीर, स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात्-त्रैलोक्यनाथस्य, शासनं जिन-शासनम् ।।३।।
श्री-मुखालोकनादेव, श्री-मुखालोकनं भवेत् ।
आलोकन-विहीनस्य, तत् सुखावाप्तयः कुतः ।।४।।

वसन्ततिलका

अद्याभवत्-सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य-त्रिलोक-तिलक ! प्रतिभासते मे,
ससार-वारिधि-रयं चुलुक-प्रमाणः ।।५।।

अनुष्टुप

अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमलीकृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।६।।

उपेन्द्रवज्रा छद

नमो नमः सत्त्व-हितंकराय,
वीराय भव्याम्बुज-भास्कराय ।
अनन्त-लोकाय सुरार्चिताय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।७।।

नमो जिनाय त्रिदशार्चिताय,
विनष्ट-दोषाय गुणार्णवाय ।
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिबोधनाय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।८।।

वसन्ततिलका

देवाधिदेव ! परमेश्वर ! वीतराग !
सर्वज्ञ ! तीर्थंकर ! सिद्ध ! महानुभाव !
त्रैलोक्यनाथ ! जिन-पुंगव ! वर्धमान !
स्वामिन् ! गतोऽस्मि शरणं चरण-द्वय ते ।।९।।

जित-मद-हर्ष-द्वेषाजित-मोह-परीषहाः जित-कषायाः ।
जित-जन्म-मरण-रोगाजित-मात्सर्या जयन्तु जिनाः ।।१०।।
जयतु जिन वर्धमानस्त्रिभुवन-हित-धर्म-चक्र-नीरज-बन्धुः।
त्रिदशपति-मुकुट-भासुर, चूड़ामणि-रश्मि-रञ्जितारुण- चरणः।।११।।

हरिणी

जय जय जय त्रैलोक्य-काण्ड-शोभि-शिखामणे,
नुद नुद नुद स्वान्त-ध्वान्तं जगत्-कमलार्क नः ।
नय नय नय स्वामिन् ! शान्तिं नितान्त-मनन्तिमाम्,
नहि नहि नहि त्राता, लोकैक-मित्र-भवत्-परः ।।१२।।

वसन्ततिलका

चित्ते मुखे शिरसि पाणि-पयोज-युग्मे,
भक्तिं स्तुतिं विनतिमञ्जलिमञ्जसैव ।
चेक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति,
यश्चर्करीति तव देव ! स एव धन्यः।।१३।।

मन्दाक्रान्ता

जन्मोन्मार्ज्यं भजतु भवतः पाद-पद्मं न लभ्यम्,
तच्चेत्-स्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः ।
अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधास्ते,
क्षुद्-व्यावृत्यै कवलयति कः कालकूटं बुभुक्षुः ।।१४।।

शार्दूल-विक्रीडित

रूप ते निरुपाधि-सुन्दर-मिद, पश्यन् सहस्त्रेक्षण:,
प्रेक्षा-कौतुक-कारिकोऽत्र भगवन् नोपैत्यवस्थान्तरम् ।
वाणीं गद्‌गद्‌यन् वपु: पुलकयन्, नेत्र-द्वय श्रावयन्,
मूर्द्धानं नमयन् करौ मुकुलयंश्चेतोऽपि निर्वापयन् ।।१५।।

त्रस्तारातिरिति त्रिकालविदिति त्राता त्रिलोक्या इति,
श्रेय: सूति-रिति श्रियां निधिरिति, श्रेष्ठ: सुराणामिति ।
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्य-मगतिस्त्वां तत्-त्यजोपेक्षणम्,
रक्ष क्षेमपदं प्रसीद जिन ! किं, विज्ञापितैर्गोपितै. ।।१६।।

उपजाति

त्रिलोक-राजेन्द्र-किरीट-कोटि-
प्रभाभि-रालीढ-पदार-विन्दम् ।
निर्मूल-मुन्मूलित-कर्म-वृक्ष,
जिनेन्द्र-चन्द्रं प्रणमामि भक्त्या ।।१७।।

आर्या

करचरणतनु विघाता, दटतो निहित: प्रमादत: प्राणी ।
ईर्यापथमिति भीत्या, मुञ्चे तद्दोषहान्यर्थम् ।।१८।।

ईर्यापथे प्रचलताऽद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय प्रमुख जीव निकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरित गुरुभक्तितो मे ।।१९।।

गद्य

पडिक्कमामि भंते ! इरिया-वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइग्गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडियपइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करण, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताण, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

ॐ णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाण ।
णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

जाप्यानि (९ बार)

ॐ नमो परमात्मने नमोऽनेकान्ताय शान्तये ।

गद्य

इच्छामि भंते ! आलोचेउं इरियावहियस्स पुव्वुत्तरदक्खिणपच्छिम चउदिसु विन्दिसासु विहरमाणेण, जुगंतर दिट्ठिणा, भव्वेण, दट्ठव्वा । पमाददोसेण डवडवचरियाए पाण-भूद जीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

शार्दूलविक्रीडित

पापिष्ठेन दुरात्मना जडधिया, मायाविना लोभिना,
रागद्वेषमलीमसेन मनसा, दुष्कर्म यन्निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते ! जिनेन्द्र ! भवत : श्रीपाद मूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं, निर्वर्तये कर्मणाम् ।।१।।

जिनेन्द्रमुन्मूलित कर्मबन्धं, प्रणम्य सन्मार्गकृत स्वरूपम् ।
अनन्तबोधादि भवंगुणौघं, क्रियाकलापं प्रकटं प्रवक्ष्ये ।।२।।

गद्य

अथार्हत्पूजारम्भक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म-क्षयार्थं भावपूजा वंदनास्तवसमेत श्रीमत्सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं, अरहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्त धम्म सरण पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्जदीवदोस मुद्देसु पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव अरहताणं, भयवताणं, आदियराणं, तित्थयराण जिणाणं, जिणोत्तमाण, केवलियाण, सिद्धाणं बुद्धाण, परिणिव्वुदाण,

अंतयडाणं, पारयडाणं, धम्माइरियाणं धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्मवरचाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं चरित्ताणं सदा करेमि, किरियम्मं । करेमि भंते ! सामायियं सव्वसावज्जजोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, ण करेमि ण कारेमि ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि तस्स भंते अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

द्वितीय अध्याय

अथ पाक्षिकादिप्रतिक्रमणम्

(पाक्षिक, चातुर्मासिक एव वार्षिक आदि प्रतिक्रमणो में सभी साधर्मी शिष्य, लघुसिद्ध, श्रुत एव आचार्य भक्ति द्वारा आचार्य श्री की वन्दना करें ।)

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् । (९ जाप्य)

सम्मत्त-णाण दंसण-वीरिय-सुहुम तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाह अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।
तवसिद्धे, णयसिद्धे सजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमसामि ।।२।।

इच्छामि भते ! सिद्ध भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सलोचेउ सम्मणाण सम्मदसण-सम्मचरित्त-जुत्ताण, अट्ठविह-कम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण सपण्णाण, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाण, तव सिद्धाणं, णय सिद्धाण, सयम सिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाओ सुगइगमणं समाहि-मरण जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं !

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-श्रुत-भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् । (९ जाप्य)

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीति-त्र्यधिकानि चैव।
पंचाश-दष्टौ च सहस्त्र-संख्य-मेतच्छ्रुत पंचपदं नमामि।।१।।

अरहंत-भासियत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुद-णाण-महोवहिं सिरसा।।२।।

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सगो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं-जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

नमोऽस्तु आचार्य वन्दनायां प्रतिष्ठापनाचार्य भक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (९ जाप्य)

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण सदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे।।२।।

गुरु-भत्ति संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति।।३।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा कुलाः।
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु क्रियाः साधवः।।

शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोधिका ।
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।४।।

गुरुवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानं-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गभीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त जुत्ताणं पंच विहाचाराणं आइरियाणं आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं; ति-रयण-गुण-पालण रयाणं सव्वसाहूणं; णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वदामि णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमण समाहिमरण जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं ।

(यहाँ शिष्यो और साधर्मियो से युक्त आचार्य (गुरु) अपने इष्ट देव को नमस्कार करें पश्चात् "समतासर्वभूतेषु" इत्यादि पाठ और वृहद्सिद्ध एव चारित्रभक्ति अञ्चलिका सहित बोलें ।)

नमः श्रीवर्धमानाय निर्धूत-कलिरात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्-विद्या दर्पणायते ।।१।।

समता सर्व-भूतेषु संयमः शुभ-भावना ।
आर्त्त-रौद्र-परित्याग-स्तद्धि सामायिकं मत ।।२।।

अथ सर्वातिचार विशुद्ध्यर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

चत्तारि-मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वजामि ।

अड्डाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्म-देसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं दंसाणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि किरियम्मं । करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण-मणसा, वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमणामि तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं, पावकम्मं, दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें अनन्तर नमस्कार करके पुन तीन आवर्त और एक शिरोनति करके चतुर्विंशति स्तव पढे ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे ।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउ-मप्पहं सुपास जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा ।
चउवीस पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाह दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सिद्धभक्ति पढ़ें)

श्री सिद्धभक्ति

सिद्धा-नुद्धूत-कर्म-प्रकृति-
समुदयान् साधितात्म-स्वभावान् ।
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्ध्यै,
तदनुपम-गुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः
प्रगुण-गुण-गणोच्छादि-दोषापहाराद् ।
योग्योपादान-युक्त्या
दृषद् इह यथा हेम-भावोपलब्धिः ।।१।।

नाभावः सिद्धि-रिष्टा न निज-गुण-हतिस्तत्-तपोभि-र्न युक्तेः ।
अस्त्यात्मानादि-बद्धः स्व-कृतज-फल भुक्-तत्-क्षयान् मोक्षभागी ।।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-
रुपसमाहार-विस्तार-धर्मा-
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा
स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्य-सिद्धिः ।।२।।

स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-प्रभव-
विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-क्षत-दुरित-
तया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।
कैवल्यज्ञान-दृष्टि-प्रवर-सुख-
महावीर्य सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति-र्वातायनादि-स्थिर-
परम-गुणै-रद्भुतै-र्भासमानः ।।३।।

जानन् पश्यन् समस्तं
सम-मनुपरतं संप्रतृप्यन् वितवन् ,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं
निचित-मनुपमं प्रीणयन्नीशभावम् ।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-मपर-
मभिभवन् ज्योति-रात्मानमात्मा,
आत्मन्येवात्मनासौ क्षण-
मुपजनयन्-सत्-स्वयंभूः प्रवृत्तः ।।४।।

छिन्दन् शेषानशेषान्-निगल-
बल-कलींस्तै-रनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुक-गुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यै-श्चान्य-व्यपोह-प्रवण-
विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्वं-व्रज्या-स्वभावात् समय-
मुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये ।।५।।

अन्याकाराप्ति-हेतु-र्न च
भवति परो येन तेनाल्प-हीनः,
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-
कृति-रुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-ज्वर-
मरण-जरानिष्ट-योग-प्रमोह,

व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-प्रभव-
भव-हतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ।।६।।
आत्मोपादान-सिद्धं स्वय-
मतिशय-वद्-वीत बाधं विशालम,
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं विषय-
विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं निरुपम-
ममितं शाश्वतं सर्वकालम्,
उत्कृष्टानन्त-सारं परम-
सुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ।।७।।
नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्
विविध-रस-युतै-अन्न-पानै-रशुच्या,
नास्पृष्टे-र्गन्ध-माल्यै-र्नहि
मृदु-शयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।
आतंकार्ते-रभावे तदुपशमन-
सद्भेषजानर्थतावद्
दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगत-
तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ।।८।।
तादृक्-सम्पत्समेता विविध-
नय-तपः संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्
प्रवितत-यशसो विश्व-देवाधि देवाः ।

भूता भव्या भवन्तः
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टैः,
स्तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्
निजिग-मिषु-रं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ।।१।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं अतीता-णागद-वट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं आलोचना चारित्र भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(यहाँ आवर्त आदि की पूर्ण विधिसहित सामायिक दण्डक एवं "थोस्सामिस्तव" इत्यादि बोलकर निम्नलिखित चारित्रभक्ति आलोचना सहित बोलना चाहिए ।)

श्री चारित्रभक्ति

येनेन्द्रान् भुवन-त्रयस्य विलसत्-केयूर-हारांगदान्,
भास्वन्-मौलि-मणि-प्रभा-प्रविसरोत्-तुंगोत्तमांगान्-नतान् ।
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनय-श्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्-नाचार-मभ्यर्चितम् ।।१।।

ज्ञानाचार का स्वरूप

अर्थ-व्यञ्जन-तद्-द्वया-विकलता-कालोपधा-प्रश्रया:,
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहु-मति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।
श्री-मज्ज्ञाति कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचार-महं त्रिधा प्रणिपताभ्युद्धूतये कर्मणाम् ।।२।।

दर्शनाचार का स्वरूप

शंका-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षण-विधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धताम्,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं धर्मोपबृंहक्रियाम् ।
शक्त्या शासन-दीपनं हित-पथाद् भ्रष्टस्य सस्थापनम्,
वन्दे दर्शन-गोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् ।।३।।

तप-आचार (बाह्यतप) का स्वरूप

एकान्ते शयनोपवेशन कृतिः संतापनं तानवम् ,
संख्या-वृत्ति-निबन्धना मनशनं विष्वाणमर्द्धोदरम् ।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्,
षोढ़ा बाह्य-महं स्तुवे शिव-गति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः ।।४।।

अन्तरग तपो का वर्णन

स्वाध्यायः शुभ-कर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृति-रामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यतौ।
कायोत्सर्जन-सत्-क्रिया विनय इत्येवं तपः षड्-विधम्,
वन्देऽभ्यन्तर-मन्तरंग बल-वद्-विद्वेषि विध्वंसनम् ।।५।।

वीर्याचार का वर्णन

सम्यग्ज्ञान-विलोचनस्य दधतः श्रद्धान-मर्हन्-मते,
वीर्यस्यावि निगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।
या वृत्ति-स्तरणीव-नौ-रविवरा लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचार-महं तमूर्जित-गुण वन्दे सता-मर्चितम् ।।६।।

चारित्राचार का वर्णन

तिस्रः सत्तम-गुप्तय-स्तनु-मनो-भाषा निमित्तोदया·,
पञ्चेर्यादि-समाश्रया· समितयः पञ्च-व्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहित त्रयो-दश-तयं पूर्व न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते-र्वीर नमामो वयम् ।।७।।

पञ्चाचार पालनेवाले मुनिराजो की वन्दना

आचारं सह-पञ्च-भेद-मुदित तीर्थं परं मगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्र-महतो वन्दे समग्रान् यतीन् ।
आत्माधीन-सुखोदया-मनुपमा लक्ष्मी-मविध्वसिनीम्,
इच्छन् केवल-दर्शनावगमन प्राज्य प्रकाशोज्ज्वलाम् ।।८।।

चारित्र पालन मे दोषो की आलोचना

अज्ञानाद्यदवीवृत नियमिनोऽवर्तिष्यह चान्यथा,
तस्मिन्-नर्जित-मस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वति ।
वृत्ते सप्ततयी निधि सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतम्,
तन् मिथ्या गुरु-दुष्कृतं भवतु मे स्वं निन्दितो निंदितम्।।९।।

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसना हति-प्रचलिता नित्योदय-प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न-विमुक्तयः सुमतयः शान्तैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशाल-मतुलं सोपान-मुच्चै-स्तराम्,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं जैनेन्द्र-मोजस्विनः।।१०।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चारित्त-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-जोयस्स, सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्व-पहाणस्स, णिव्वाण-मग्गस्स, कम्म-णिज्जर-फलस्स, खमा-हारस्स, पंच-महव्वय-संपण्णस्स, तिगुत्ति-गुत्तस्स, पंच-समिदि-जुत्तस्स, णाण-ज्झाण-साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वृहद्-आलोचना

नोट –यह वृहद् आलोचना आठ दिन में, पाक्षिकप्रतिक्रमण मे, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण मे और वार्षिक प्रतिक्रमण में होती है, अत जब प्रतिक्रमण करना हो तब की अर्थात् उस समय की दिन गणना बोले ।

[इच्छामि भंते ! अट्ठमियम्मि आलोचेउं, अट्ठण्हं दिवसाण, अट्ठण्हं राइणं, अब्भतरदो, पंचविहो आयारो णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो वीरियायारो, चारित्तायारो चेदि ।।१।।]

[इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं पण्णरसण्ह दिवसाणं, पण्णरसण्हं राइण, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।।२।।]

[इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसुत्तर-सयदिवसाणं, वीसुत्तर-सय-राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।।३।।]

[इच्छामि भंते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्हं-छावट्ठिसय-दिवसाणं, तिण्हं-छावट्ठि-सय-राइणं अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।।४।।]

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थ-तदुभये चेदि । णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खर-हीण वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोग-द्दारेसु वा, अकाले-सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, काले वा, परिहाविदो, अच्छाकारिदं वा, मिच्छा-मेलिदं वा, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिकंक्खिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा चेदि ।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्णा-दिट्ठी-पसंसणाए, परपाखंड-पसंसणाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

तवायारो बारसविहो अब्भंतरो-छव्विहो, बाहिरो-छव्विहो चेदि । तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त-सयणासणं चेदि । तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं, विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, झाणं, विउस्सग्गो चेदि । अब्भंतरं बाहिरं बारसविहं-तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्त-माणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया जीवा

असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेऊ-काईया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ-काइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल, संबुक्क, सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुन्थूद्देहियविंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पचिंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु

एदसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अहावरे दुव्वे महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भयेण वा, पदोसेण वा, पमादेण, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण-वि-कारणेण जादेण वा, सव्वो मुसावादो भासिओ, भासाविओ, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

अहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं से गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडंवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसमे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिण्हं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं अदिण्णं गिण्हियं, गेण्हावियं, गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।।३।।

अहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तेरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, मणुण्णा मणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णा मणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णा मणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, चक्खिंदिय-परिणामे, सोदिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिंदिय परिणामे,

फासिंदिय परिणामे, णो-इंदिय-परिणामे, अगुत्तेण अगुत्तिंदिएण, णवविहं बंभचरियं, ण रक्खियं, ण रक्खावियं, ण रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

अहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरो परिग्गहो णाणावरणीयं, दंसणावरणीयं, वेयणीयं, मोहणीयं, आउग्गं, णामं गोदं, अंतरायं चेदि अट्ठविहो । तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण-भंड-फलह-पीढ-कमण्डलु-संथार-सेज्ज-उवसेज्ज, भत्तपाणादि-भेदेण अणेयविहो, एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं बद्धं, बद्धावियं, बज्झन्तं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं से असणं, पाणं, खाइयं, साइयं चेदि । चउव्विहो आहारो से तित्तो वा, कडुओ वा, कसाइलो वा, अमिलो वा, महुरो वा, लवणो वा, अलवणो वा, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्समिणिओ, रत्तीए भुत्तो, भुजावियो, भुंज्जिजंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।६।।

पंचसमिदीओ, इरियासमिदी, भासासमिदी, एसणासमिदी, आदाण-णिक्खेवण समिदी, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावण-समिदी चेदि ।

तत्थइरियासमिदी पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिसि, विदिसासु, विहरमाणेण, जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा। डव-डव-चरियाए, पमाद-दोसेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।७।।

तत्थ भासासमिदी कक्कसा, कडुआ, परुसा, णिट्ठुरा, परकोहिणी, मज्झंकिसा, अइ-माणिणी, अणयंकरा, छेयंकरा, भूयाण-वहंकरा चेदि । दसविहा भासा, भासिया, भासाविया, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।८।।

तत्थ एसणासमिदी अहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुरा-कम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठियडेण वा, कीडयडेण वा, साइया, रसाइया, सइंगाला, सधूमिया, अइ-गिद्धीए, अग्गीव, छण्हं जीव-णिकायाणं विराहणं, काऊण, अपरिसुद्धं, भिक्खं, अण्णं, पाणं, आहारियं, आहारावियं, आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।९।।

तत्थ आदाण-णिक्खेवण-समिदी चक्कलं वा, फलहं वा, पोत्थयं वा, पीढं वा, कमण्डलुं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं, उवयरणं, अप्पडिलेहिऊण-गेण्हंतेण वा, ठवंतेण वा, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा,

कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१०।।

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणिया समिदी रत्तीए वा, वियाले वा, अचक्खुविसए, अवत्थंडिले, अब्भोवयासे, सणिद्धे, सबीए, सहरिए, एवमाइयासु, अप्पासु गट्ठाणेसु, पइट्ठावंतेण, पाणं-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।११।।

तिण्णि-गुत्तीओ मण-गुत्तीओ, वचि-गुत्तीओ, काय-गुत्तीओ चेदि । तत्थ मण-गुत्ती अट्टे झाणे, रुद्दे झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोए-सण्णाए, आहारसण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, एवमाइयासु जा मण-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१२।।

तत्थ वचि-गुत्ती इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय-कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, परपासंड-कहाए, एवमाइयासु जा वचि-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१३।।

तत्थ कायगुत्ती चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा,

एवमाइयासु जा काय-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१४।।

दोसु अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामेसु, तीसु अप्प-सत्थ-संकिलेस-परिणामेसु, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तेसु, चउसु उवसग्गेसु, चउसु सण्णासु, चउसु पच्चएसु, पचसु चरित्तेसु, छसु जीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भयेसु, अट्ठसु सुद्धीसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दससु समण-धम्मेसु, दससु धम्मज्झाणेसु, दससु मुण्डेसु, बारसेसु संजमेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु (अट्ठमियम्मि), (पक्खियम्मि), (चउमासियम्मि), (संवच्छरियम्मि), अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जो तं पडिक्कमामि । मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्तमरणं, पंडियमरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होदु मज्झं ।

(यहाँ से नीचे लिखी सम्पूर्ण क्रिया मात्र आचार्य श्री को करना चाहिए)

नमोऽस्तु सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थ सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् । (कायोत्सर्ग करें)

लघु सिद्धभक्ति

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।

तवसिद्धे, णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाण, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं अतीता-णागदवट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाण णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं ।

नमोऽस्तु सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं-मालोचना-योगि-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरहंताण णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

(कायोत्सर्ग करना)

लघु योगि भक्ति

प्रावृट्-काले सविद्युत्-प्र-पतित
सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि-मध्ये प्रति-विगत-
भयाः काष्ठ-वत्-त्यक्त देहाः ।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता-गिरि-शिखर-
गताः स्थान-कूटांतर-स्थास्-,
ते मे धर्म प्रदद्युर्मुनि-गण-
वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ।।१।।

गिम्हे गिरि-सिहरत्था वरिसा-याले रुक्ख-मूल-रयणीसु
सिसिरे वाहिर-सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।२।।

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणि-पात्र-पुटाहारा-स्ते यांति परमां गतिम् ।।३।।

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णा-रस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्क-पास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादिजोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं ।

आलोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेऊ-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

बे-इंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल, संव्वुक, सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुन्थूद्देहियविंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।४।।

पंचिंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा,

उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

वद समि-दिंदिय-रोधोलोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
तत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।।१।।

इस प्रकार आचार्य श्री उपर्युक्त पाठ को तीनबार बोलकर अरहतदेव के समक्ष अपने दोषो की आलोचना करे । पश्चात् जैसे दोष लगे हो उनके अनुसार स्वय प्रायश्चित्त लेकर निम्नलिखित पाठ तीन बार बोलें ।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध-षडावश्यक-क्रिया-लोचादयोऽष्टविंशति-मूलगुणाः, उत्तमक्षमामार्दवार्जव-शौच-सत्य-सयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-लक्ष-गुणा, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति । सकलं-सम्पूर्णं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं सम्यक्त्व-पूर्वकं दृढ़-व्रतं, सुव्रत, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..............
सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु।।२।।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..............
सम्यक्त्व-पूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।३।।

उपर्युक्त पंचमहाव्रत-पचसमिति आदि पाठ तीनबार बोलकर प्रायश्चित्त के योग्य शिष्यो को प्रायश्चित्त देवे । पश्चात् देव के लिए निम्नलिखित गुरभक्ति बोले ।

निष्ठापनाचार्य भक्ति

नमोऽस्तु निष्ठापनाचार्यभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

कायोत्सर्ग करना

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण-सदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे ।।२।।

गुरु-भत्ति-संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।३।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा-कुला,
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु क्रियाः साधवः ।
शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोधिका,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।४।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गंभीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

(यहाँ आचार्य सहित शिष्य मुनि और साधर्मी मुनि मिलकर आचार्य श्री के आगे निम्नलिखित पाठ बोले ।)

इच्छामि भंते ! (पक्खियम्मि), (चउमासियम्मि), (संवच्छरियम्मि) आलोचेउं, पंचमहव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, बिदियं महव्वदं मुसावादादो वेरमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णा-दाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइभोयणादो वेरमणं, तिस्सु गुत्तीसु, णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाए परीसहेसु, पण-वीसाए भावणासु, पण-वीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं चरित्ताणं, चउदसण्हं पुव्वाणं, एयारसण्हं पडिमाणं दसविह मुण्डाणं, दसविह-समण-धम्माणं, दसविह-धम्मज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णो-कसायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविहसंसाराण, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पचण्हं इन्दियाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाण, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं, दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परिदावणियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण

वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासादणाए, तिण्हं दंडाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थसंकिलेस-परिणामाणं, दोण्हं अट्टरुद्द, संकिलेस-परिणामाणं, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंजम-पाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोगपाउग्गं, अप्पाउग्ग-सेवणदाए, पाउग्ग-गरहणदाए इत्थ मे जो कोई (पक्खियम्मि) (चउमासियम्मि) (संवच्छरियम्मि) अदिक्मो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति, होदु मज्झं।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठवणं होदु मज्झं

(यह पाठ तीन बार बोलना चाहिए)

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध-षडावश्यक-क्रियालोचादयोऽष्टाविंशति मूलगुणाः, उत्तमक्षमामार्दवार्जव-शौच-सत्य सयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-

लक्ष-गुणाः, त्रयोदश-विधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति, सकलं, सम्पूर्णं, अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं, सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

पञ्चमहाव्रत-पंचसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..................
सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।२।।

पञ्चमहाव्रत-पंचसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध....................
सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।३।।

प्रतिक्रमण भक्ति

अथ सर्वातिचार-विशुद्धयर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री प्रतिक्रमणभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इस प्रकार विज्ञापन का उच्चारण कर आचार्य श्री सहित सभी शिष्य एव साधर्मी मुनिगण निम्नलिखित णमो अरहताण इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करे ।)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

चत्तारि-मगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्त धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाण, धम्म-देसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा, वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं कीरंतं पि ण समणुमणामि, तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं, पावकम्मं, दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(२७ उच्छ्वासो मे कायोत्सर्ग करना)

(यथोक्त परिकर्म के बाद केवल आचार्य श्री निम्नलिखित थोस्सामि दण्डक पढे।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे ।
अरहते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वन्दे सभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउ-मप्पह सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ मात्र आचार्य श्री निम्नलिखित गणधर वलय का पाठ पढ़े)

गणधर-वलय

जिनान् जिताराति-गणान् गरिष्ठान्,
देशावधीन् सर्व-परावधींश्च ।
सत्-कोष्ठ-बीजादि-पदानुसारीन्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ।।१।।

संभिन्न-श्रोतान्वित-सन्-मुनीन्द्रान्,
प्रत्येक-सम्बोधि-बुद्ध-धर्मान् ।
स्वयं-प्रबुद्धांश्च विमुक्ति-मार्गान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यैः ।।२।।

द्विधा मनःपर्यय-चित्-प्रयुक्तान्,
द्विपञ्च-सप्तद्वय-पूर्व-सक्तान् ।

अष्टांग-नैमित्तिक शास्त्र-दक्षान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।३।।
विकुर्वणाख्यर्द्धि-महा-प्रभावान्,
विद्याधरांश्चारण-ऋद्धि-प्राप्तान् ।
प्रज्ञाश्रितान् नित्य-ख-गामिनश्च,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्तये ।।४।।
आशी र्विषान् दृष्टि-विषान् मुनीन्द्रा-,
नुग्राति-दीप्तोत्तम-तप्त तप्तान् ।
महातिघोर-प्रतपःप्रसक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।५।।
वन्द्यान् सुरै-र्घोर-गुणांश्च लोके,
पूज्यान् बुधै-र्घोर-पराक्रमांश्च ।
घोरादि-संसद्-गुण ब्रह्म युक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।६।।
आमर्द्धि-खेलर्द्धि-प्रजल्ल-विडर्द्धि-
सर्वर्द्धि-प्राप्ताश्च व्यथादि-हंत्रृन् ।
मनो-वचः काय-बलोपयुक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।७।।
सत् क्षीर-सर्पि-र्मधुरामृतर्द्धीन्,
यतीन् वराक्षीण महानसांश्च ।
प्रवर्धमानांस्त्रिजगत्-प्रपूज्यान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।८।।

सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान्,
श्रीवर्धमानर्द्धि विबुद्धि-दक्षान् ।
सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरा-नृषीन्द्रान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।९।।

नृ-सुर-खचर-सेव्या विश्व-श्रेष्ठर्द्धि-भूषा,
विविध-गुण-समुद्रा मार मातंग-सिंहाः ।
भव-जल-निधि-पोता वन्दिता मे दिशन्तु,
मुनि-गण-सकलाः श्री-सिद्धिदाः सदृषीन्द्राः ।।१०।।

[१]नित्यं यो गणभृन्मन्त्र, विशुद्धसन् जपत्यमुम् ।
आस्त्रवस्तस्य पुण्यानां, निर्जरा पापकर्मणाम् ।।
नश्यादुपद्रवकश्चिद्, व्याधिभूत विषादिभिः ।
सदसत् वीक्षणे स्वप्ने, समाधिश्च भवेन्मृतो ।।

(यहाँ मात्र आचार्य श्री निम्नलिखित प्रतिक्रमण दण्डक बोलें और उतने काल पर्यन्त सर्व शिष्य एव साधर्मी मुनिगण कायोत्सर्ग मुद्रा से स्थित रहकर सुने ।)

प्रतिक्रमण-दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो जिणाणं[१], णमो ओहि-जिणाणं[२], णमो परमोहि-जिणाणं[३], णमो सव्वोहि-जिणाणं[४], णमो अणंतोहि-जिणाणं[५], णमो कोट्ठ-बुद्धीणं[६], णमो बीज-बुद्धीणं[७], णमो

---

१ आ० विद्यानद जी को प्राप्त हस्तलिखित प्रति से ।

पादाणु-सारीणं[८], णमो संभिण्ण-सोदारण[९], णमो सयं-बुद्धाणं[१०], णमो पत्तेय-बुद्धाणं[११], णमो बोहिय-बुद्धाणं[१२], णमो उजु-मदीणं[१३], णमो विउल-मदीणं[१४], णमो दस-पुव्वीण[१५], णमो चउदस-पुव्वीणं[१६], णमो अट्ठंग-महा-णिमित्त-कुसलाणं[१७], णमो विउव्वइड्ढि-पत्ताणं[१८], णमो विज्जाहराणं[१९], णमो चारणाणं[२०], णमो पण्ण-समणाणं[२१], णमो आगासगामीणं[२२], णमो आसी-विसाणं[२३], णमो दिट्ठिविसाणं[२४], णमो उग्ग-तवाणं[२५], णमो दित्त-तवाण[२६], णमो तत्त-तवाणं[२७], णमो महा-तवाणं[२८], णमो घोर-तवाणं[२९], णमो घोर-गुणाण[३०], णमो घोर-परक्कमाण[३१], णमो घोर-गुण-बंभयारीणं[३२], णमो आमोसहि-पत्ताणं[३३], णमो खेल्लोसहि-पत्ताणं[३४], णमो जल्लोसहि-पत्ताणं[३५], णमो विप्पोसहि-पत्ताणं[३६], णमो सव्वोसहि-पत्ताणं[३७], णमो मण-बलीणं[३८], णमो वचि-बलीणं[३९], णमो काय-बलीणं[४०], णमो खीर-सवीणं[४१], णमो सप्पि-सवीणं[४२], णमो महुर-सवीणं[४३], णमो अमिय-सवीणं[४४], णमो अक्खीण महाणसाणं[४५], णमो वड्ढमाणाणं[४६], णमो सिद्धायदणाणं[४७], णमो भयवदो-महदि-महावीर-वड्ढमाण-बुद्ध-रिसीणो[४८] चेदि ।

जस्संतियं धम्म-पहं णियंच्छे,
तस्संतियं वेणइयं पउं जे ।
काएण वाचा मणसा वि णिच्चं,
सक्काराए तं सिर-पंचमेण ।।१।।

सुदं मे आउस्सतो ! इह खलु समणेण, भयवदो, महदि-महावीरेण, महा-कस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्वलोग-दरिसिणा, सदेवासुर-माणुसस्स लोयस्स, आगदिगदि-चवणोववादं, बंधं, मोक्खं, इड्ढिं, ठिदिं, जुदिं, अणुभागं, तक्कं, कलं, मणो, माणसियं, भूतं, कयं, पडिसेवियं, अदिकम्मं, अरुह-कम्मं, सव्वलोए, सव्वजीवे, सव्वभावे, सव्वं समं जाणंता पस्संता विहर-माणेण, समणाणं, पंचमहव्वदाणि, राइभोयण-वेरमण-छट्ठाणि, अणुव्वदाणि स, समाउग पदाणि, स-उत्तर-पदाणि, सम्मं धम्मं उवदेसिदाणि ।

तं जहा-

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं, तिदिए, महव्वदे अदिण्णादाणादो वेरमणं, चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं, पचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमण, छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं चेदि ।

तत्थ पढमे महव्वदे सव्वं भंते ! पाणादिवादं पच्चक्खामि जावज्जीवं, तिविहेण-मणसा, वचसा, काएण, से एइंदिया वा, बे इंदिया वा, ते इंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, पुढवि-काइए वा, आऊ-काइए वा, तेऊ-काइए वा, वाऊ-काइए वा, वणप्फदि-काइए वा, तस-काइए वा, अंडाइए वा, पोदाइए वा, जराइए वा, रसाइए वा, संसेदिमे वा, समुच्छिमे वा, उब्भेदिमे वा, उववादिमे

वा, तसे वा, थावरे वा, बादरे वा, सुहुमे वा, पाणे वा, भूदे वा, जीवे वा, सत्ते वा, पज्जत्ते वा, अपज्जत्ते वा, अविचउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, णेव सयं पाणादिवादिज्ज, णो अण्णेहिं पाणे अदिवादावेज्ज, अण्णेहिं पाणे, अदिवादिज्जंतो वि ण समणुमणिज्ज । तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, वोस्सरामि । पुव्विचणं भंते! जं पि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं पाणे अदिवादिदे, अण्णेहिं पाणे, अदिवादाविदे, अण्णेहिं पाणे अदिवादिज्जंते वि समणुमण्णिदे तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चा-हिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्स, विहू-सियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंतिमग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्गपज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण

वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्मगुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ-भोयणं वोस्सरामि, दिवा-भोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्ट-रुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्मसुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं 'अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि,

ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयण वोस्सरामि, खिदिसयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणिपत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विह-तवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्त परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्ग परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भाविय ण भावेमि, इमं णिग्गथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइय, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाण-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्ग, णिव्वाण-मग्ग, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्ग, सु-

चरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि कयाचिवा, कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उरसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि। सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चाउमासिय) (संवच्छरिय) इरयावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां. ....ते मे भवतु ।।२।।

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां.............ते मे भवतु ।।२।।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाण ।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे विदिए महव्वदे सव्वं भंते ! मुसावादं पच्चक्खामि, जावज्जीवेण तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, णेव सयं मोसं भासेज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासाविज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणुमणिज्ज। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं मोसं भासियं, अण्णेहिं मोसं भासावियं, अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहि-

ट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सयसहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणाहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहुसुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंत-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं

अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील काउ लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरभ वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदिं भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपजामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि,

अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं, परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उव-संपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिममममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, कयाचिवा कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं

पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, उत्तमट्ठम्मि । "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां............ ते मे भवतु ।।२।।

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां............ ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे तिदिए महव्वदे सव्वं भंते ! अदिण्णादाणं पच्चक्खामि जावज्जीवं, तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से देसे वा, गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मंडवे वा, मडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसणे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिणं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, खेत्ते वा, खले वा,

जले वा, थले वा, पहे वा, उप्पहे वा, रण्णे वा, अरण्णे वा, णट्ठं वा, पमुट्ठं वा, पडिदं वा, अपडिदं वा, सुणिहिदं वा, दुण्णिहिदं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुयं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, मज्झत्थं वा, बहित्थं वा, अवि दततरसोहण-णिमित्तं, वि णेव सयं अदत्तं गेण्हिज्ज, णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविज्ज णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं विसमणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं, पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं पि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण, सयं अदत्तं गेण्हिदं, अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविदं अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिजंतं , वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलि-यस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंतिमग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा,

रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जोदेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्मगुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, तिगारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंत-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाण वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्ज वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्मसुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि-अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजम वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि,

सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि णिममममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं,

पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाणमग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं अण्णं, णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि कयाचिवा कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसतोमि, उवहि-णियडि-माण-मायामोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं चपडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं-पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (सवच्छरिय) इरियावहि-केसलोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

तिदिए महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु" ।

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं दृढव्रतं समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां..................... ते मे भवतु ।।२।।

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां..................... ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं............... णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं............... णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे चउत्थे महव्वदे सव्वं भंते ! अबंभं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तिरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, चित्र -कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, सिल्ला-कम्मेसु वा, गिह-कम्मेसु वा, भित्ति-कम्मेसु वा, भेद-कम्मेसु वा, भण्ड-कम्मेसु वा, धादु-कम्मेसु वा, दंत-कम्मेसु वा, हत्थ-संघट्टणदाए, पाद-संघट्टणदाए, पुग्गल-संघट्टणदाए मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, सोदिंदय परिणामे, चक्खिदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिदिय-परिणामे, फासिंदिय-परिणामे, णो-इन्दिय-परिणामे, अगुत्तेण, अगुत्तिदिएण, णेव सयं अबंभं सेविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभं

सेवाविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभ सेविज्जंतं वि समणुसणिज्ज, तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं अबंभं सेवियं, अण्णेहिं अबंभं सेवावियं, अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं वि समणुमण्णिदं तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चा-हिट्ठियम्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सयसहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्गपयासयस्स, सिद्धिमग्ग पज्जव साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जोदेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं

पुव्वं दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजम अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंत-वणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-

भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोह वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयण, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-दीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, त पत्तियामि, त रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं,

अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, कयाचिवा कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

चउत्थे महव्वदे अबंभादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां............ते मे भवतु ।।२।।

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां............ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरहंताणं सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।
णमो अरिहंताण...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।
णमो अरिहंताण...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे पंचमे महव्वदे सव्वं भंते ! दुविहं-परिग्गहं पच्चक्खामि । तिविहेण मणसा-वचसा-काएण । सो परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो, बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरं परिग्गहं-

मिच्छत्त-वेय-राया-तहेव हस्सादिया य छद्दोसा ।
चत्तारि तह कसाया चउदस अब्भंतरं गंथा ।।१।।

तत्थ बाहिरं परिग्गहं से हिरण्णं वा, सुवण्णं वा, धणं वा, खेत्तं वा, खलं वा, वत्थुं वा, पवत्थुं वा, कोसं वा, कुठारं वा, पुरं वा, अंत-उरं वा, बलं वा, वाहणं वा, सयडं वा, जाणं वा, जपाणं वा, जुगं वा, गद्दियं वा, रहं वा, सदणं वा, सिवियं वा, दासी-दास-गो-महिस-गवेडयं, मणि-मोत्तिय-संख-सिप्पिपवालयं, मणिभाजणं वा, सुवण्ण-भाजणं वा, रजत-भाजणं वा, कंस-भाजणं वा, लोह-भाजणं वा, तंब-भाजणं वा, अंडजं वा, वोडजं वा, रोमजं वा, वक्कलजं वा, चम्मजं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, अमत्थुं वा, बहित्थं वा, अवि वालग्ग-कोडि मित्तं पि णेव सयं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं-गिण्हिज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं

परिग्गहं-गेण्हाविज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं गिण्हियं, अण्णेहिं असनण-पाउग्गं-परिग्गहं-गेण्हावियं, अण्णेहिं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं-गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदं तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलि-यस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु

गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, तिगारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्मसुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि,

खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि,, लोहं वोस्सरामि, सतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि णिममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथ पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति,

मुंचति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भवस्सदि, कयाचि वा कुदोचि वा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं-पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चाउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केसलोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाण-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु" ।

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ।।१।।
पंचमं महाव्रतं सर्वेषां.............ते मे भवतु ।।२।।

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां...................ते मे भवतु ।।३।।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।
णमो अरहंताणं...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।
णमो अरहंताणं...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे सव्वं भंते ! राइ-भोयणं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से असणं वा, पाणं वा, खादियं वा, सादियं वा, कडुयं वा, कसायं वा, आमिलं वा, महुरं वा, लवणं वा, अलवणं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, तं-सव्वं-चउव्विहं-आहारं, णेव सयं रत्तिं भुंजिज्ज, णो अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविज्ज, णो अण्णेहिं रत्तिं भुंजिज्जंतं पि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विंचणं ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण वा, चउव्विहो आहारो, सयं रत्तिं भुत्तो, अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविदो, अण्णेहिं रत्तिं भुंजिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहि-ट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सयसहस्स, विहूसियस्स,

णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदिलक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेव वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरुगदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहण वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सणाणाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि,

दिण्णं-कप्प-णिज्जं अबभुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अबभुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्मसुक्क-लेस्सं अबभुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथ वोस्सरामि, णिग्गथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाण अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि,

खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिममममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथ पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णात्थि, ण भूदं, ण भवस्सदि, कदाचि वा कुदोचि वा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स,

पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाण-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे अणुव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणा सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढ़व्रत, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां............. ते मे भवतु ।।२।।

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां............. ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं..... .. णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं........... णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

चूलिका

चूलियंतु पवक्खामि भावणा पंचविंसदी ।
पंच पंच अणुण्णादा एक्केक्कम्हि महव्वदे ।।१।।

अहिंसा महाव्रत की भावनाएँ

मणगुत्तो वचिगुत्तो इरिया-काय-संयदो ।
एसणा-समिदि संजुत्तो पढमं वदमस्सिदो ।।२।।

सत्य महाव्रत की भावनाएँ

अकोहणो अलोहो य भय-हस्स-विवज्जिदो ।
अणुवीचि-भास-कुसलो विदियं वदमस्सिदो ।।३।।

अचौर्यमहाव्रत की भावनाएँ

अदेहणं भावणं चावि उग्गहं य परिग्गहे ।
संतुट्ठो भत्तपाणेसु तिदियं वदमस्सिदो ।।४।।

ब्रह्मचर्यमहाव्रत की भावनाएँ

इत्थिकहा इत्थि-संसग्ग-हास-खेड-पलोयणे ।
णियमम्मि ट्ठिदो णियत्तो य चउत्थं वदमस्सिदो ।।५।।

अपरिग्रह महाव्रत की भावनाएँ

सचित्ताचित्त-दव्वेसु बज्झ-मब्भंतरेसु य ।
परिग्गहादो विरदो पंचमं वदमस्सिदो ।।६।।

उत्तम व्रत का स्वामी

धिदिमंतो खमाजुत्तो, झाण-जोग-परिट्ठिदो ।
परिसहाण-उरं देत्तो उत्तमं वदमस्सिदो ।।७।।

ध्यान की सारता

जो सारो सव्वसारेसु सो सारो एस गोयम ।
सारं झाणंति णामे ण सव्वं बुद्धेहिं देसिदं ।।८।।

इच्चेदाणि पंचमहव्वदाणि, राइ-भोयणादो वेरमणं छट्ठाणि, सभावणाणि, समाउग्ग-पदाणि, स उत्तर-पदाणि, सम्मं, धम्मं, अणुपाल-इत्ता, समणा, भयवंता, णिग्गंथा होऊण, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वाणयंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, परिविज्जाणंति । तं जहा-

पाणादिवादं चहि मोसगं च,
अदत्त मेहुणण परिग्गहं च ।
वदाणि सम्मं अणुपाल-इत्ता,
णिव्वाण-मग्गं विरदा उवेंति ।।१।।

निःशल्यता का उपदेश

जाणि काणि वि सल्लाणि गरहिदाणि जिण-सासणे ।
ताणि सव्वाणि वोसरित्ता णिसल्लो विहरदे सया मुणी ।।

माया त्याग उपदेश

उप्पण्णाणुप्पण्णा माया अणुपुव्वं सो णिहंतव्वा ।
आलोयण पडिकमणं णिंदण गरहणदाए ।।३।।

द्रव्य भाव प्रतिक्रमण

अब्भुट्ठिद-करण-दाए अब्भुट्ठिद-दुक्कड-णिराकरणदाए ।
भवं भाव पडिक्कमणं सेसा पुण दव्वदो भणिदा ।।४।।

प्रतिक्रमण विधि सब तीर्थंकरों द्वारा कथित है

एसो पडिक्कमण-विही पण्णत्तो जिणवरेहिं सव्वेहिं ।
संजम-तव-ट्ठिदाणं णिग्गंथाणं महरिसीणं ।।५।।

क्षमा एवं फल याचना

अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं भवे एत्थ ।
तं खमउ णाण-देवय ! देउ समाहिं च बोहिं च ।।६।।

पंच परमेष्ठियो को नमस्कार

काऊण णमोक्कारं अरहंताणं तहेव सिद्धाणं ।
आइरिय-उवज्झायाणं लोयम्मि य सव्वसाहूणं ।।७।।

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणमिदं, सुत्तस्स, मूलपदाणं, उत्तर-पदाण-मच्चासणदाए तं जहा-

पदादि की अवहेलना सम्बन्धी प्रतिक्रमण

णमोक्कारपदे, अरहंतपदे, सिद्धपदे, आइरियपदे, उवज्झाय-पदे, साहु-पदे, मंगल-पदे, लोगोत्तम-पदे, सरण-पदे, सामाइय-पदे, चउवीस-तित्थयर-पदे, वंदण-पदे, पडिक्कमण-पदे, पच्चक्खाण-पदे, काउस्सग्ग-पदे, असीहिय-पदे, निसीहिय-पदे, अंगंगेसु, पुव्वंगेसु, पइण्णएसु, पाहुडेसु, पाहुड-पाहुडेसु, कदकम्मेसु वा, भूद कम्मेसु वा, णाणस्स-अइक्कमणदाए, दंसणस्स-अइक्कमणदाए, चरित्तस्स-अइक्कमणदाए, तवस्स-अइक्कमणदाए, वीरियस्स-अइक्कमणदाए, से अक्खर-हीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद-हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अट्ठक्खाणेसु वा, अणि-योगेसु वा, अणि-योगद्दारेसु वा, जे भावा पण्णत्ता, अरहंतेहिं, भयवंतेहिं, तित्थयरेहिं, आदियरेहिं, तिलोग-णाहेहिं, तिलोग-

बुद्धेहिं, तिलोग-दरसीहिं, ते सद्दहामि, ते पत्तियामि, ते रोचेमि, ते फासेमि, ते सद्दहंतस्स, ते पत्तयंतस्स, ते रोचयंतस्स, ते फासयंतस्स, जो मए पक्खिओ (चउमासिओ) (संवच्छरिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, अकालो, सज्झाओ, कओ काले वा, परिहाविदो, अच्छाकारिदं, मिच्छामेलिदं, आमेलिदं, वा मेलिदं, अण्णहा-दिण्णं, अण्णहा-पडिच्छदं, आवासएसु, परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अह पडिवदाए, विदियाए, तिदियाए, चउत्थीए, पंचमीए, छट्ठीए, सत्तमीए, अट्ठमीए, णवमीए, दसमीए, एयारसीए बारसीए, तेरसीए, चउद्दसीए, पुण्ण-मासीए, पण्णरस-दिवसाणं, पण्णरस-राइणं, (चउण्हं-मासाणं, अट्ठणं-पक्खाणं, वीसुत्तरसय-दिवसाणं, वीसुत्तरसय-राइणं) (बारसण्हं-मासाणं, चउवीसण्हं-पक्खाणं, तिण्हि-छावट्ठि-सय-दिवसाणं, तिण्हि-छावट्ठि-सय-राइणं) (पंचवरिसादो) परदो, अब्भतंरदो वा, दोण्हं-अट्ट-रूद्द-संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं-अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं-दंडाणं, तिण्हं-लेस्साणं, तिण्हं-गुत्तीणं, तिण्हं-गारवाणं, तिण्हं-सल्लाणं, चउण्हं-सण्णाणं, चउण्हं-कसायाणं, चउण्हं-उवसग्गाणं, पंचण्हं महव्वयाणं पंचण्हं इंदियाणं, पंचण्हं-समिदीणं, पंचण्हं-चरित्ताणं, छण्हं-आवासयाणं, सत्तण्हं-भयाणं, सत्त-

विहसंसाराणं, अट्ठण्हं-मयाणं, अट्ठण्हं-सुद्धीणं, अट्ठण्हं-कम्माणं, अट्ठण्हं-पवयण-माउयाणं, णवण्हं-बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं-णो-कसायाणं, दस-विह-मुंडाणं, दसविह-समण-धम्माणं, दसविह-धम्मज्झाणाणं, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं किरियाणं, चउदसण्हं पुव्वाण्हं, पण्णरसण्हं पमायाणं, सोलसण्हं कसायाणं बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए किरियासु, पणवीसाए भावणासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु, अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, पडिक्कंत, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदं, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि, जाव अरहंताणं, भयवंताण, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

श्रावक के १२ व्रतो के अन्तर्गत पाँच अणुव्रतो का वर्णन

पढमं ताव सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण, भयवदा, महदि, महावीरेण, महाकस्सवेण, सव्वण्हुणा सव्व-लोय-दरसिणा, सावयाणं, सावियाणं, खुड्डयाणं खुड्डीयाण, कारणेण, पंचाणुव्वदाणि, तिण्णि

गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि, बारस-विह गिहत्थ-धम्मं सम्मं उवदेसियाणि । तत्थ इमाणि पंचाणुव्वदाणि पढमे अणुव्वदे थूलयडे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिये अणुव्वदे थूलयडे मुसावादादो वेरमणं, तिदिये अणुव्वदे, थूलयडे अदिण्णादाणादो वेरमणं, चउत्थे अणुव्वदे, थूलयडे सदार-संतोस-परदारा-गमण-वेरमणं, कस्स य पुणु सव्वदो विरदी, पंचमे अणुव्वदे, थूलयडे इच्छा-कद-परिमाणं चेदि, इच्चेदाणि पंच अणुव्वदाणि ।

तीन गुणव्रतो का वर्णन

तत्थ इमाणि तिण्णि गुणव्वदाणि तत्थ पढमे गुणव्वदे दिसि-विदिसि पच्चक्खाणं, विदिये, गुणव्वदे, विविध-अणत्थ-दंडादो वेरमणं, तिदिये गुणव्वदे भोगोपभोग-परिसंखाणं चेदि, इच्चेदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि ।

चार शिक्षाव्रतो का वर्णन

तत्थ इमाणि चत्तारि सिक्खावदाणि तत्थ पढमे सामाइयं, विदिये पोसहोवासयं, तिदिये अतिथि-संविभागो, चउत्थ सिक्खावदे पच्छिम-सल्लेहणा-मरणं चेदि । इच्चेदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि ।

से अभिमद-जीवाजीव-उवलद्ध-पुण्ण-पाव-आसव-बंध-संवर-णिज्जर-मोक्ख-महि-कुसले, धम्माणु-रायरत्तो, पेम्माणुराय-रत्तो, अट्ठि-मज्जाणुराय-रत्तो, मुच्छिदट्ठे, गिहि-दट्ठे, विहि-दट्ठे, पालि-दट्ठे, सेविदट्ठे, इणमेव णिग्गंथ-पवयणे, अणुत्तरे, से-अट्ठे, सेवणुट्ठे ।

सम्यक्त्व के आठ अंगो के नाम

णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ट्ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा य ते अट्ठ ।।१।।

सव्वेदाणि पंचाणुव्वदाणि; तिण्णि गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि; बारसविहं-गिहत्थ-धम्ममणु-पाल-इत्ता ।

देशव्रत के ग्यारह स्थानो के नाम

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइ-भत्तेय ।
बंभारंभ परिग्गह अणुमणमुदिट्ठ देसविरदोय ।।१।।

श्रावक धर्म

महु-मंस-मज्ज जूआ वेसादि-विवज्जणा सीलो ।
पंचाणुव्वय-जुत्तो सत्तेहिं सिक्खावयेहिं मपुण्णो ।।२।।

श्रावक व्रत निर्दोष पालने का फल

जो एदाइं वदाइं धरेइ, सावया -सावियाओ वा, खुड्डय-खुड्डियाओ वा, दह-अट्ठ-पंच, भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय, सोहम्मीसाण-देवीओ वदिक्कमित्तु उवरिम-अण्णदर-महड्ढियासु देवेसु उववज्जंति ।

तं जहा-सोहम्मीसाण-सणक्कुमार-माहिंद-बंभ-बंभुत्तर-लांतव-कापिट्ठ सुक्क-महासुक्क सतार-सहस्सार आणत-पाणत-आरण-अच्चुत-कप्पेसु उववज्जंति ।

अडयंबर-सत्थधरा कडयगद-बद्धनउडकय-सोहा ।
भासुरवर-बोहिधरा देवा य महड्ढिया होंति ।।१।।

समाधिमरण का फल

उक्कस्सेण दो-तिण्ण भव-गहणाणि, जहण्णेण सत्तट्ठ-भव-गहणाणि, तदो सुमाणुसत्तादो-सुदेवत्तं, सुदेवत्तादो-सुमाणुसत्तं, तदो साइहत्था, पच्छा-णिग्गंथा होऊण, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाण-यंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति । जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो ह ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री निष्ठितकरण-चन्द्रवीरभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

यहाँ आचार्य श्री के साथ-साथ सभी मुनिराजो को निम्नलिखित सामायिक दण्डक कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव पढकर वीरभक्ति आदि बोलना चाहिए ।

श्री वीरभक्ति

(णमो अरहताण से वोस्सरामि पर्यन्त सामायिक दण्डक बोले । पश्चात् पाक्षिक[1] प्रतिक्रमण मे ३०० श्वासोच्छ्वास[2] अर्थात् १०० बार पचनमस्कार मत्र का जाप, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में ४०० श्वासोच्छ्वास अर्थात् १३४ बार पचनमस्कार मत्र का जाप और वार्षिक प्रतिक्रमण मे ५०० श्वासोच्छ्वास अर्थात् १६७ बार पचनमस्कार मत्र का जाप करना चाहिए । पश्चात् चतुर्विंशति स्तव अर्थात् थोस्सामि बोलना चाहिए ।)

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं,
चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।

---

१ (अ) अट्ठसद देवसिय कल्लद्ध पक्खिय च तिण्णि सया ।
उस्सासा कायव्वा णियमते अप्पमत्तेण ।।१८५।।
चादुम्मासे चउरो सदाइ सवच्छरे य पचदसा ।
काओसग्गुस्सासा पचसु ठाणेसु णादव्वा ।।१८६।।
अ० ७ मूलाचार (कुन्दकुन्दाचार्य)

(ब) उच्छ्वासा ।
परमेष्ठि-पदोच्चारै शतानि-त्रीणि पाक्षिके ।।६३।।
उच्छ्वासाना च चातुर्मासिके चतु शतानि वै ।
शतानि पच सावत्सरके स्युर्नियमात्सताम् ।।६४।।
चतुर्थ अ०, मूलाचार प्रदीप ।

२ (क) बाहर से भीतर की ओर प्राण वायु के खींचने को श्वास कहते हैं, तथा भीतर की ओर से बाहर प्राण वायु के निकालने को उच्छ्वास कहते हैं और इन दोनो के समूह को श्वासोच्छ्वास कहते हैं ।

(ख) श्वास लेते समय "णमो अरहताण" पद और श्वास छोडते समय "णमो आइरियाण" और श्वास छोडते समय 'णमो उवज्झायाण' पद बोले । पुन श्वास लेते समय पचम पद के अर्धभाग को अर्थात् 'णमो लोए' पद तथा श्वास छोडते समय शेष अर्धभाग को अर्थात् 'सव्वसाहूण' पद बोलें । इस प्रकार एक पच नमस्कार मत्र क उच्चारण में तीन श्वासोच्छ्वास और नौ बार णमोकार मन्त्र के उच्चारण मे २७ श्वासोच्छ्वास करना चाहिए ।

वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम् ।।१।।
यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेश-भिन्नं,
तमस्तमोरेरिव रश्मि-भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहु-मानसं च,
ध्यान-प्रदीपातिशयेन भिन्नम् ।।२।।
स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदावलिप्ता,
वाक्-सिंह-नादै-र्विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्र-गण्डा,
गजा यथा केसरिणो निनादैः ।।३।।
यः सर्व-लोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाद्भुत-कर्म-तेजाः ।
अनन्त-धामाक्षर विश्व-चक्षुः,
समस्त-दुःख-क्षय-शासनश्च ।।४।।
स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषभ्र-कलङ्क-लेपः
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान्-मनो मे ।।५।।

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवतः सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ।।१।।

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो वीरं बुधाः संश्रिता,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं त्वयि।।२।।

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः ।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके,
संसार-दुर्ग विषमं तरन्ति ।।३।।

व्रत-समुदय-मूलः संयम-स्कन्ध-बन्धो,
यम-नियम-पयोभि-र्वर्धित· शील-शाख· ।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगन्धिः सत्-तपश्चित्र-पत्र· ।।४।।

शिव-सुख-फलदायी यो दया-छाय-योद्ध.,
शुभजन-पथिकानां खेदनोदे समर्थ. ।
दुरित-रविज-तापन प्रापयन्-नन्तभावं,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः ।।५।।

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय ।।६।।

धर्म. सर्व-सुखाकरो हितकरो धर्म बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान् नास्त्यपरः सुहृद्-भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्त-महं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मा पालय ।।७।।

धम्मो मगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तं णमस्संति जस्स धम्मे सया मणो ।।८।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति काउस्सग्गो तस्सालोचेउं, सम्मणाण सम्मदंसण-सम्म-चारित्त-तव-वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्वमइचारं, सावज्ज-जोग पडिविरदोमि, असखेज्ज-लोय-अज्झवसायठाणाणि, अप्पसत्थ-जोग-सण्णा-णिंदिय-कसाय-गारव-किरियासु, मण-वयण-काय-करण-दुप्पणिहाणि, परिचिंतियाणि, किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ, विकहापालिकुंचिएण-उम्मग-हस्स-रदि-अरदि-सोय-भय-दुगंछ-वेयण-विज्जंभ-जंभाइ-आणि, अट्ट-रुद्द-सकिलेस-परिणामाणि, परिणामिदाणि, अणिहुद-कर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-परायणेण, अपडिपुण्णेण वा, सरक्खरावय-परिसंघाय पडिवत्तिएण, अच्छा-कारिदं, मिच्छा-मेलिदं, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्ह, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा समणाण जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झ

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थ पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थ, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, शान्ति-चतुर्विंशति-तीर्थकर-भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(यहाँ णमो अरहताण इत्यादि सामायिक दण्डक बोले)

(२७ उच्छ्‌वासों मे कायोत्सर्ग करे)

(पश्चात् थोस्सामि हं जिणवरे इत्यादि बोलकर निम्नलिखित भक्तियाँ पढे)

शान्ति कीर्तना

विधाय रक्षां परतः प्रजानां,
राजा चिरं योऽप्रति-मप्रतापः ।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्ति-
र्मुनि-र्दया-मूर्ति-रिवाघशान्तिम् ॥१॥

चक्रेण यः शत्रु-भयङ्करेण,
जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम् ।
समाधि-चक्रेण पुन-र्जिगाय,
महोदयो दुर्जय-मोह चक्रम् ॥२॥

राजश्रिया राजसु राजसिंहो-
रराज यो राजसु भोगतन्त्रः ।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुन-रात्मतन्त्रो,
देवासुरोदार-सभे रराज ॥३॥

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसना हति-प्रचलिता नित्योदय-प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न-विमुक्तयः सुमतयः शान्तैनसः प्राणिनः।
मोक्षस्यैव कृतं विशाल-मतुलं सोपान-मुच्चै-स्तराम्,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं जैनेन्द्र-मोजस्विनः।।१०।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चारित्त-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-जोयस्स, सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्व-पहाणस्स, णिव्वाण-मग्गस्स, कम्म-णिज्जर-फलस्स, खमा-हारस्स, पंच-महव्वय-संपण्णस्स, तिगुत्ति-गुत्तस्स, पंच-समिदि-जुत्तस्स, णाण-ज्झाण-साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

प्रायश्चित्त-याचना-विधि

हे स्वामिन् ! पक्षे (चातुर्मासे) (संवत्सरे) अष्टविंशति-मूलगुणेषु (आर्यिका-व्रत-क्रियायां) मनसा वचसा कर्मणा कृत-कारितानुमोदनैः आहारे विहारे निहारे च रागेण द्वेषेण मोहेन भयेन लज्जया प्रमादेन वा जागरणे स्वप्ने च ज्ञाताज्ञात-भावेन अतिक्रम-व्यतिक्रमातिचारानाचार इत्यादयो दोषा लग्नाः तान् क्षमित्वा प्रायश्चित्त-दानेन शुद्धं कुर्यात् माम् ।

अथ श्रावक-प्रतिक्रमणम्

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषा,
यस्मात्प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति।
तस्मात्तदर्थममलं गृहि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम्॥१॥

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया मायाविना लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते ! जिनेन्द्र ! भवतः श्रीपादमूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे॥२

खम्मामि सव्वजीवाण सव्वे जीवा खमतु मे।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु, वेरं मज्झं ण केण वि॥३

रागबंधपदोसं च, हरिसं दीणभावय।
उस्सुगत्तं भयं सोग रदिमरदि च वोस्सरे॥४

हा दुट्ठ-कय हा दुट्ठ-चिंतियं भासिय च हा दुट्ठ।
अंतो अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयत्तो॥५॥

दव्वे खेत्ते काले भावे य कदाऽवराह-सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तो मण-वय-कायेण पडिक्कमणं॥६॥

एइंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया-वणप्फदिकाइया तसकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा

समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइभत्ते य ।
बंभाऽरंभ-परिग्गह-अणुमणुमुद्दिट्ठ-देसविरदे य ।।

एयासु जहाकहिद-पडिमासु पमादाइकयाइचारसोहणट्ठं छेदोट्ठावणं, होउ मज्झं ।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार-विसोहि-णिमित्तं पुव्वाइरिय कमेण आलोयण-सिद्ध-भत्ति-काउस्सग्गं करोमि ।

सामायिक दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा,

केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरण पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाण, अंतयडाणं पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाण, धम्मणायगाणं धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीण, देवाहि-देवाण, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताण सदा करेमि किरियम्म, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीव तिविहेण मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंत पि समणुमणामि तस्स भंते । अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं भयवंताण, पज्जुवास करेमि तावकाल पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

कायोत्सर्ग करे

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।
श्रीमते वर्धमानाय नमो नमित-विद्विषे।
यज्ज्ञानाऽन्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदाऽयते ।।१।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसाणमंस्सामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्ध-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्म-चरित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढ-लोए-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

इच्छामि भंते ! देवसियं (राइय) आलोचेउं तत्थ–

दर्शन प्रतिमा

पंचुम्बर सहियाइं, सत्तवि वसणाइं जो विवज्जेइ ।
सम्मत्तविशुद्ध मई, सो दंसण सावओ भणिओ ।।१।।

व्रत प्रतिमा

पंच य अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं हवंति तह तिण्णि ।
सिक्खावयाइं चत्तारि, जाण विदियम्मि ठाणम्मि ।।२।।

सामायिक प्रतिमा

जिणवयण धम्मचेइय, परमेट्ठि जिणयालयाण णिच्चंपि ।
जं वंदण तिआलं, कीरइ सामाइयं तं खु ।।३।।

प्रोषधोपवास प्रतिमा

उत्तम मज्झ जहण्णं, तिविहं पोसहविहाण मुद्दिट्ठं ।
सगसत्तीएमासम्मि, चउसु पव्वेसु कायव्वं ।।४।।

सचित्तत्याग प्रतिमा

जं वज्जिजदि हरिदं, तय पत्त पवाल कंदफल वीयं ।
अपसुगं च सलिलं, सचित्तणिव्वत्तिमं ठाणं ।।५।।

दिवामैथुनत्याग या रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा

मण वयण काय कद, कारिदाणुमोदेहिंमेहुणं णवधा ।
दिवसम्मि जो विवज्जदि, गुणम्मि जो सावओ छट्ठो ।।६।।

ब्रह्मचर्य प्रतिमा

पुव्वुत्तणव विहाणं पि, मेहुणं सव्वदा विवज्जंतो ।
इत्थिकहादि णिवित्ती, सत्तमगुण बंभचारी सो ।।७।।

जं किं पि गिहारंभं, बहुथोवं वा सया विवज्जेदि ।
आरंभणिवितमदी, सो अट्ठम सावओ भणिओ ।।८।।

परिग्रहत्याग प्रतिमा

मोत्तूण वत्थमित्तं, परिग्गहं जो विवज्जदेसेसं ।
तत्थवि मुच्छणं करेदि, वियाण सो सावओ णवमो ।।९।।

अनुमतित्याग प्रतिमा

पुट्ठो वाऽपुट्ठो वा, णियगेहिं परेहिं सग्गिह कज्जे ।
अणुमणणं जो ण कुणदि, वियाण सो सावओ दसमो ।।१०।।

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा

णवकोडीसु विशुद्ध, भिक्खायरणेण भुंजदे भुंजं ।
जायणरहियं जोग्गं, एयारस सावओ सो दु ।।११।।

एयारसम्मि ठाणे, उक्किट्ठो सावओ हवई दुविहो ।
वत्थेय धरो पढमो, कोवीण परिग्गहो विदिओ ।।१२।।

तव वय णियमावासय, लोचं कारेदि पिच्छगिण्हेदि ।
अणुवेहा धम्मझाणं, करपत्ते एय-ठाणम्मि ।।१३।।

एत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइओ) अइचारो अणाचारो तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कमंतस्स मे सम्मत्तमरणं, समाहिमरणं, पंडियमरणं, वीरियमरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त रायभत्तेय।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठदेस विरदोय ॥१॥

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं। अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए, सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण पडिक्कमण भत्ति कायोत्सर्ग करोमि।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

इस णमोकार मत्र का तीन बार उच्चारण करना चाहिये।

णमोजिणाणं णमोजिणाण णमोजिणाण णमो णिस्सिहीए णमो णिस्सिहीए णमो णिस्सिहीए णमोत्थुदे णमोत्थुदे णमोत्थुदे अरहंत ! सिद्ध ! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सममण ! सुभमण ! सुसमत्थ ! समजोग ! समभाव ! सल्लघट्टाण ! सल्लघत्ताणं ! णिब्भय ! णिराय ! णिद्दोस! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग ! णिसल्ल ! माणमाय-मोसमूरण, तवप्पहावण, गुणरयण, सीलसायर, अणंत, अप्पमेय, महदि महावीर वड्ढमाण, बुद्धिरिसिणो चेदि णमोत्थु दे णमोत्थु दे णमोत्थु दे।

मम मगलं अरहता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जयणाणिणो, चउदस-

पुव्वगामिणो, सुदसमिदिसमिद्धाय, तवोय, वारह विहो तवसी, गुणाय, गुणवंतोय, महरिसी तित्थं तित्थंकराय, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणदा ए, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ, चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तिओचेव मुत्तिमंतो य, समिदीओ, चेव समिदि मंतो य, सुसमय परसम विदु, खंति खंतिवंतो य, खवगा य, खीणमोहा य खीणवंतो य, बोहिय बुद्धाय, बुद्धिमंतो य, चेइयरुक्खाय चेईयाणि ।

उड्ढ-मह-तिरियलोए, सिद्धायदणाणि णमंस्सामि, सिद्धणिसीहियाओ, अट्ठावय पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ काओवि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि इसिपब्भारतलगयाणं सिद्धाणं बुद्धाणं कम्मचक्कमुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं गुरु आइरिय उवज्झयाणं पव्वतित्थेर कुलयराणं चउवण्णोय समण-संघोय, दससु भरहेरावएसु पंचसु महाविदेहेसु जो लोए संति साहवो संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं एदेहं मगलं करेमि भावदो विसुद्धोसिरसा अहिवंदिऊण सिद्धेकाऊण अंजलिं मत्थयम्मि तिविहं तियरण सुद्धो ।

पडिक्कमामि भंते ! दंसण पडिमाए, संकाए, कंखाए, विदिगिंच्छाए, परपासंडपसंसणाए, पसंथुए, जो मए

देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदिवदे:-वहेण वा, बंधेण वा, छेएण वा, अइभारारोहणेण वा, अण्णपाणणिरोहणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-१।।

गद्य-पडिक्कमामि भते ! वदपडिमाए विदिये थूलयडे असच्चविरदिवदे:-मिच्छोपदेसेण वा, रहो अब्भक्खाणेण वा, कूडलेह करणेण वा, णायापहारेण वा सायारमतभेएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-२।।

गद्य-पडिक्कमामि भते ! वद पडिमाए तिदिये थूलयडे थेणविरदिवदे थेणपओगेण वा थेणहरियादाणेण वा, विरुद्धरज्जा-इक्कमणेण वा, हीणाहियमाणुम्माणेण वा, पडिरूवय ववहारेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो मणसा, वचसा, कायेण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए चउत्थे थूलयडे अबंभविरदिवदे:-परविवाहकरणेण वा, इत्तरियागमणेण वा, परिग्गहिदा परिग्गहिदागमणेण वा, अणंगकीडणेण वा, कामतिव्वाभिणिवेसेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-४।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गहपरिमाणवदे:-खेत्तवत्थूणं परिमाणाइक्कमणेण वा, धणधण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, हरिण्णसुवण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, दासीदासाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, कुप्पभांडपरिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-५।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पढमे गुणव्वदे:-उड्ढवइक्कमणेण वा, अहोवइक्कमणेण वा, तिरियवइक्कमणेण वा, खेत्तवड्ढिएण वा, अंतराधाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-६-१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाएविदिए गुणव्वदे:-आणयणेणवा, विणिजोगेण वा, सद्दाणुवाएण वा, रूवाणुवाएण वा, पुग्गलखेवेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-७-२।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाएतिदिए गुणव्वदे:- कंदप्पेण वा, कुकुवेएण वा, मोक्खरिएण वा, असमक्खियाहिकरणेण वा, भोगोपभोगाणत्थकेण वा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा,कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-८-३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पढमे सिक्खावदे:-फासिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, रसणिंदियभोगपरि-माणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिदियभोगपरिमाणाइक्क-मणेण वा, सवणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-९-१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए विदियसिक्खावदे:-फांसिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण

वा, रसणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय-परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिंदियपरिभोग-परिमाणाइक्कमणेण वा, सवणिंदिय परिभोगपरिमाणा-इक्कमणेण वा जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-१०-२।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाएतिदिए सिक्खावदेः-सचित्तणिक्खेवेण वा, सचित्तपिहाणेण वा, परउवएसेण वा, कालाइक्कमणेण वा, मच्छरिएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-११-३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए चउत्थे सिक्खावदेः-जीविदासंसणेण वा, मरणासंसणेण वा, मित्ताणुराएण वा, सुहाणुबधेण वा, णिदाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-१२-४।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! सामाइय पडिमाएः-मणदुप्पणिधाणेण वा, वयदुप्पणिधाणेण वा, कायदुप्पणि-धाणेण वा, अणादरेण वा, सदि अणुव्वट्ठावणेण वा, जो मए देवसिओ (राइओ) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण,

कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! पोसह पडिमाए:–अप्पडिवेक्खियापमज्जियोसग्गेण वा, अप्पडिवेक्खियापमज्जियादाणेण वा, अप्पडिवेक्खियापज्जियासंथारोवक्कमणेण वा, आवस्सयाणदरेण वा, सदिअणुवट्ठावणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! सचित्तविरदिपडिमाए:–पुढविकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइआ जीवा अणंताणंता, हरिया, बीया, अंकुरा, छिण्णाभिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! राइभत्तपडिमाए:–णवविहबंभचरियस्स दिवा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।६।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! बंभपडिमाए:–इत्थि-कहायत्तणेण वा, इत्थिमणोहरांगनिरिक्खिणेण वा, पुव्वरयाणुस्सरणेण वा, कामकोवणरसासेवणेण वा, शरीर-मंडणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।७।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! आरंभविरदिपडिमाए:-कसायवसंगएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) आरम्भो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।८।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! परिग्गहविरदिपडिमाए:-वत्थमेत्त परिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छापरिणामे जो मे देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।९।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! अणुमणविरदिपडिमाए जं किं पि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण कदो वा, कारिदो वा,कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१०।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठविरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोस-बहुलं अहोरदियं आहारयं वा आहारावियं वा आहारिज्जंतं वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।११।।

सामायिक विधि

सामायिक के पूर्व की जाने वाली चतुर्दिग्वदना

पूर्व दिशा मे–सर्व प्रथम नौ बार णमोकार मत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा: ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ।।१।।

दक्षिण दिशा मे–नौ बार णमोकार मत्र का जाप्यकर नमस्कार करते हुये

दक्षिण दिग्-विदिगंतरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा. ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे।।२।।

पश्चिम दिशा मे–नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य कर नमस्कार करत हुये–

पश्चिम-दिग्-विदिगंतरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवा: ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणॉस्तानहं वन्दे ।।३।।

उत्तर दिशा मे–नौ बार णमोकार मत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

उत्तर-दिग्-विदिगंतरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण देवा: ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ।।४।।

प्रतिज्ञा - पिच्छिका युक्त दोनों हाथो को मुकुलित कर और कुहनियो को उदर पर रखकर यथास्थान मस्तक झुकाते हुए प्रतिज्ञा करे–

तीर्थंकर केवलि, सामान्य केवलि, समुद्घात केवलि, उपसर्ग केवलि, मूक केवलि, अन्त:कृत केवलिभ्यो नमो नम: । तीर्थंकरोपदिष्ट-श्रुताय नमो नम: । सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र-धारकाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो नमो नम· ।

श्री मूल-संघे, कुन्दकन्दाम्नाये, बलात्कार-गणे, सेन-गच्छे, नन्दी-संघस्य परम्परायाम्, श्री आदिसागराचार्या जातास्तत् शिष्याः श्री-महावीरकीर्तिआचार्या-जातास्तत् शिष्याः श्रीविमलसागराचार्या तस्य शिष्यः सन्मतिसागराचार्या तस्य शिष्यः रयणसागराचार्यः तस्य शिष्यः चन्द्रसागराचार्यः जातास्तत् शिष्याः.. .... अहम् (अपना नाम बोलना) जम्बूवृक्षोपलक्षित जम्बूद्वीपे, भरतक्षेत्रे, आर्य-खण्डे, भारतदेशे, ...प्रान्ते, ...नगरे, १००८ श्री .... जिन-चैत्यालयमध्ये, अद्य, वीर निर्वाण सं०. . ... वि०सं० .. .. मासोत्तममासे. ... . मासे..... पक्षे... . शुभ तिथौ.. .... वासरे पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (आपराह्णिक) काले, घटिका-द्वय (४८ मि) पर्यन्तं सर्व-सावद्य-योग-विरतोऽस्मि।

ईर्या-पथ-शुद्धि

पडिक्कमामि भंते ! इरिया बहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइ गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइन्दिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तर-गुणं तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-

करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ २७ उच्छ्वासों में ९ जाप्य करें)

ईर्यापथ आलोचना

ईर्या-पथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय-प्रमुख-जीव-निकाय बाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरु-भक्तितो मे ।।१।।

इच्छामि भंते ! इरियावहियस्स आलोचेउं, पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम-चउदिस-विदिसासु, विहरमाणेण जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । पमाद-दोषेण, डव-डव-चरियाए, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

कृत्य प्रतिज्ञा

नमोऽस्तु भगवन् ! देव-वन्दनां करिष्यामि ।

(इति सामायिक स्वीकार)

मुख्य मंगल

सिद्धं सम्पूर्ण-भव्यार्थं सिद्धेः कारण-मुत्तमम् ।
प्रशस्त-दर्शन-ज्ञान-चारित्र-प्रतिपादनम् ।।१।।
सुरेन्द्र-मुकुटाश्लिष्ट-पाद-पद्मांशु-केशरम् ।
प्रणमामि महावीरं लोक-त्रितय मंगलम् ।।२।।

सामायिक स्वीकार

खम्मामि सव्व-जीवाणं, सव्वे जीवा खमन्तु मे ।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु वैरं मज्झं ण केणवि ।।१।।
राय-बंध-पदोसं च हरिसं दीण-भाल्यं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदि-मरदिं च वोस्सरे ।।२।।
हा ! दुट्ठ-कयं हा ! दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा ! दुट्ठं।
अंतो-अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो ।।३।।
दव्वे खेत्ते काले भावे य कदा-वराह-सोहणयं ।
णिंदण-गरहण-जुत्तो, मण-वच-काएण पडिक्कमणं ।।४।।
समता सर्व-भूतेषु संयमः शुभ-भावना ।
आर्त्त-रौद्र-परित्याग-स्तद्धि सामायिकं मतं ।।५।।

अथ कृत्य-विज्ञापना

भगवन् ! नमोस्तु प्रसीदन्तु, प्रभू-पादा-वंदिष्येऽहं । एषोऽहं सर्व-सावद्य-योगाद्-विरतोऽस्मि ।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (आपराह्णिक) देववन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ सर्वप्रथम भूमि-स्पर्शनात्मक पचाग नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

१. नमस्कार मन्त्र पाठ

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

२ मंगलोत्तम-शरण-दण्डक पाठ

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा- अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वजामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

३ कृति-कर्म-दण्डक पाठ

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराण, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं।

४ सामायिक-ग्रहण-प्रतिज्ञा-पाठ

करेमि भंते! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि, जावज्जीवं, तिविहेण-मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आवर्त एव शिरोनति करके २७ उच्छ्वासों में ९ बार णमोकार मन्त्र पूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् पचाग नमस्कार करें । तदनतर तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

चतुर्विंशति-स्तव पाठ

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए विहुय-रय मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वंदे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं चं ।
विमल-मणतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करे । पश्चात् पिच्छिका युक्त दोनो हाथों को मुकुलित कर एव उनकी कुहनियों को उदर पर रख कर "जयति भगवान् स्तोत्र" (चैत्यभक्ति) पढ़ें ।)

द्वात्रिंशतिका-सामायिक पाठ

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ,
सदाममात्मा विदधातु देव ।।१।।
शरीरतः कर्तुमनन्तशक्तिं,
विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम् ।
जिनेन्द्र ! कोषादिव खड्गयष्टिं,
तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ।।२।।
दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे,
योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेष ममत्वबुद्धेः-
समं मनोमेऽस्तु सदापि नाथ ।।३।।
मुनीश ! लीनाविव कीलिताविव,
स्थिरौ निषाताविव विम्बिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा,
तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ।।४।।
एकेन्द्रियाद्या यदि देव ! देहिनः,
प्रमादतः सञ्चरता इतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडिताः,
तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ।।५।।

विमुक्तिमार्ग प्रतिकूल वर्तिना,
मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया ।
चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं,
तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ! ।।६।।
विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं,
मनोवचः कायकषाय निर्मितम् ।
निहन्मि पापं भवदुःखकारणं,
भिषग्विषं मन्त्रगुणै रिवाखिलम् ।।७।।
अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यतिक्रमं,
जिनातिचारं सुचरित्र कर्मणः ।
व्यधामनाचार मपि प्रमादतः-
प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ।।८।।
क्षतिं मनःशुद्धि विधेरतिक्रमं-
व्यतिक्रमं शील व्रतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं-
वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम् ।।९।।
यदर्थमात्रा पदवाक्यहीनं-
मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी-
सरस्वती केवलबोधलब्धिम् ।।१०।।
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः-
स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः ।

चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने-
त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि ।।११।।

यः स्मर्यते सर्वमुनीन्द्रवृन्दैः
यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१२।।

यो दर्शनज्ञान सुखस्वभावः-
समस्तसंसार विकारवाह्यः ।
समाधिगम्यः परमात्मसंज्ञः-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१३।।

निषूदते यो भवदुःख जालं-
निरीक्षते यो जगदन्तरालं ।
योऽन्तर्गतो योगिनिरीक्षणीयः-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१४।।

विमुक्ति मार्ग प्रतिपादको यो-
यो जन्ममृत्यु व्यसनाद्यतीतः-
त्रिलोक लोकी विकलोऽकलंकः-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१५।।

क्रोडीकृता शेषशरीरवर्गाः-
रागादयो यस्य न सन्ति दोषाः ।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपायः-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१६।।

यो व्यापको विश्वजनीन वृत्तेः-
सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्धः ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१७।।

न स्पृश्यते कर्मकलंकदोषैः-
यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मिः ।
निरञ्जनं नित्यमनेक मेकं-
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।१८।।

विभासते यत्र मरीचिमाली-
न विद्यमाने भुवनावभासि ।
स्वात्मस्थितं बोधमयप्रकाशं-
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।१९।।

विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं-
विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् ।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं-
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।२०।।

येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा-
विषादनिद्रा भयशोकचिन्ता ।
क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपञ्च-
स्तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।२१।।

न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी-
विधानतो नो फलको विनिर्मितः ।

यतो निरस्ताक्षकषाय विद्विष:-
सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मत: ।।२२।।
न संस्तरो भद्र ! समाधिसाधनं-
न लोकपूजा न च संघमेलनम् ।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं-
विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम् ।।२३।।
न सन्ति बाह्या मम केचनार्था:-
भवामि तेषां न कदाचनाहम् ।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं-
स्वस्थ: सदा त्वं भव मुक्त्यै ।।२४।।
आत्मानमात्मन्यवलोकमान:-
त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्ध: ।
एकाग्रचित्त. खलु यत्र तत्र-
स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् ।।२५।।
एक· सदा शाश्वतिको ममात्मा-
विनिर्मल: साधिगम स्वभाव· ।
बहिर्भवा: सन्त्यपरे समस्ता-
न शाश्वता: कर्मभवा: स्वकीया: ।।२६।।
यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं-
तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रै: ।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपा:-
कुतोहि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये ।।२७।।

संयोगतो दुःखमनेकभेदं-
यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी ।
ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो-
यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ।।२८।।
सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं-
संसारकान्तारनिपात हेतुम् ।
विविक्त मात्मानमवेक्ष्यमाणो-
निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ।।२९।।
स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा-
फलं तदीयं लभते शुभाशुभम् ।
परेणदत्तं यदि लभ्यते स्फुटं-
स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ।।३०।।
निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो-
न कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन ।
विचारयन्नेवमनन्य मानसः-
परो ददातीति विमुञ्च शेमुषीम् ।।३१।।
यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः ।
सर्व विविक्तो भृशमनवद्यः ।
शश्वदधीतो मनसि लभन्ते-
मुक्तिनिकेतं विभववरं ते ।।३२।।
इति द्वार्त्रिंशतावृत्तैः परमात्मानमीक्षते ।
योऽनन्यगत चेतस्को यात्यसौ पदमव्ययम् ।।३३।।
।। इत्यमितगतिसूरि विरचिता द्वार्त्रिंशतिका ।।

देवदर्शन प्रयोग विधि

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावों की शुद्धि पूर्वक साधुजन देव-दर्शन के लिए जिनमन्दिर जावें, वहाँ प्रासुक एव योग्य स्थान पर बैठकर अपने कमण्डलु के जल से हाथ-पैर धोवे अनन्तर (ॐ) जय जय जय, नि·सही नि·सही नि·सही शब्दों का उच्चारण करते हुए मन्दिर जी मे प्रवेश करें। वहाँ पहुँच कर जिनेन्द्र देव की वीतराग मुद्रा का अवलोकन कर तीन बार नमस्कार करे पश्चात् पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर और कुहनियो को उदर पर रख कर गर्भगृह अथवा वेदी की तीन प्रदक्षिणाएँ देते हुये निम्नलिखित स्तोत्र पाठो मे से कोई एक दर्शन पाठ बोले। विशेष इतना है कि प्रदक्षिणा देते समय प्रत्येक प्रदक्षिणा एव प्रत्येक दिशा मे तीन-तीन बार आवर्त और एक-एक शिरोनति करते जाना चाहिए।

चैत्यालयाष्टक-स्तोत्र

दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भव-ताप-हारि,
भव्यात्मनां विभव-सम्भव-भूरि-हेतु ।
दुग्धाब्धि-फेन-धवलोज्ज्वल-कूट-कोटी,
नद्ध-ध्वज-प्रकर-राजि-विराजमानम् ॥१॥

दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भुवनैक-लक्ष्मी-
धामर्द्धि-वर्धित-महामुनि-सेव्यमानम् ।
विद्याधरामर-वधू-जन-मुक्त-दिव्य-
पुष्पाञ्जलि-प्रकर-शोभित-भूमि-भागम् ।।२।।
दृष्टं जिनेन्द्र भवनं भवनादि-वास-
विख्यात-नाक-गणिका-गण-गीयमानम् ।
नाना-मणि-प्रचय-भासुर-रश्मि-जाल-
व्यालीढ-निर्मल-विशाल-गवाक्ष-जालम् ।।३।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं सुर-सिद्ध-यक्ष-
गन्धर्व-किन्नर-करार्पित-वेणु-वीणा ।
संगीत-मिश्रित-नमस्कृत-धीर-नादै-
रापूरिताम्बरतलोरु-दिगन्तरालम् ।।४।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं विलसद्-विलोल-
माला-कुलालि-ललितालक-विभ्रमाणाम् ।
माधुर्य-वाद्य-लय-नृत्य-विलासिनीनां
लीला-चलद्-वलय-नूपुर-नाद-रम्यम् ।।५।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं मणि-रत्न-हेम-
सारोज्ज्वलैः कलश-चामर-दर्पणाद्यैः ।
सन्मंगलैः सतत-मष्ट-शत-प्रभेदै-
र्विभ्राजितं विमल-मौक्तिक-दाम-शोभम् ।।६।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं वर-देवदारु-
कर्पूर-चन्दन-तरुष्क-सुगन्धि-धूपैः ।

मेघायमान-गगने पवनाभिघात-
चञ्चच्-चलद्-विमल-केतन-तुंग-शालम् ।।७।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं धवलातपत्र-
च्छाया-निमग्न-तनु-यक्षकुमार-वृन्दैः ।
दोधूयमान-सित-चामर-पंक्ति-भासं,
भामण्डल-द्युति-युत प्रतिमाभिरामम् ।।८।।
दृष्टं जिनेन्द्र भवनं विविध-प्रकार-
पुष्पोपहार-रमणीय-सुरत्न-भूमि ।
नित्यं वसन्त-तिलक-श्रिय-मादधानं,
सन्-मंगलं सकल-चन्द्र-मुनीन्द्र-वन्द्यम् ।।९।।
दृष्टं मयाद्य मणि-काञ्चन-चित्र-तुंग-
सिंहासनादि-जिनबिम्ब-विभूति-युक्तम् ।
चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे,
सन्-मंगलं सकल-चन्द्र-मुनींद्र-बन्द्यम् ।।१०।।

।। चैत्यालयाष्टक-स्तोत्र-समाप्तं ।।

(अथवा नीचे लिखा दर्शन पाठ बोलकर भगवान के दर्शन करना चाहिए)

अथ दर्शन पाठ

दर्शनं देव देवस्य दर्शनं पाप-नाशनं,
दर्शनं स्वर्ग-सोपानं दर्शनं मोक्ष-साधनम् ।।१।।
दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूनां वन्दनेन च,
न तिष्ठति चिर पाप छिद्र-हस्ते यथोदकम् ।।२।।

वीतराग-मुखं दृष्ट्वा, पद्म-राग-सम-प्रभं,
नैकजन्मकृतं पापं दर्शनेन विनश्यति ।।३।।
दर्शनं जिन-सूर्यस्य संसार-ध्वान्त-नाशनं,
बोधनं चित्त-पद्मस्य समस्तार्थ प्रकाशनम् ।।४।।
दर्शनं जिन चन्द्रस्य सद्-धर्मामृत-वर्षणं,
जन्म-दाह-विनाशाय, वर्धनं सुख-वारिधेः ।।५।।

जीवादि तत्त्व प्रतिपादकाय,
सम्यक्त्व-मुख्याष्ट-गुणार्णवाय ।
प्रशान्त-रूपाय-दिगम्बराय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।६।।

चिदानन्दैक-रूपाय जिनाय परमात्मने ।
परमात्म-प्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ।।७।।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्य-भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ।।८।।
नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्-त्रये ।
वीतरागात् परो देवो न भूतो न भविष्यति ।।९।।
जिनेभक्ति-र्जिनेभक्ति-र्जिनेभक्ति-र्दिने-दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ।।१०।।
जिन-धर्म-विनिर्मुक्तो मा भूवं-चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिन-धर्मानुवासितः ।।११।।
जन्म-जन्म-कृतं पापं जन्म-कोटिभि-रर्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोगो हन्यते जिन-दर्शनात् ।।१२।।

अद्याभवत्-सफलता, नयन-द्वयस्य
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।।
अद्य त्रिलोक-तिलक-प्रतिभासते मे
संसार-वारिधि-रयं चुलुक-प्रमाणः ।।१३।।

(अथवा निम्नलिखित अर्हद्-भक्ति बोलते हुए दर्शन करना चाहिए)

श्री सरस्वती स्तोत्रम्

चन्द्रार्ककोटिघटितोज्ज्वलदिव्यमूर्ते,
श्रीचन्द्रिका कलित निर्मल शुभ्रवस्त्रे ।
कामार्थदायि कलहंस समाधि रूढे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।१।।

देवा सुरेन्द्र नतमौलिमणि प्ररोचि,
श्री मंजरी निविड रंजित पादपद्मे ।
नीलालके प्रमदहस्ति समानयाने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।२।।

केयूरहार मणिकुण्डल मुद्रिकाद्यैः,
सर्वांगभूषण नरेन्द्र मुनीन्द्र वंद्ये ।
नानासुरत्न वर निर्मल मौलियुक्ते,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।३।।

मंजीरकोत्कनककंकणकिंकणीनां,
कांच्याश्च झंकृत रवेण विराजमाने।
सद्धर्म वारिनिधि संतति वर्द्धमाने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।४।।

कंकेलिपल्लव विनिंदित पाणि युग्मे,
पद्मासने दिवस पद्मसमान वक्त्रे।
जैनेन्द्र वक्त्र भवदिव्य समस्त भाषे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।५।।

अर्द्धेन्दु मण्डितजटा ललित स्वरूपे,
शास्त्र प्रकाशिनि समस्त कलाधिनाथे।
चिन्मुद्रिका जपसराभय पुस्तकांके,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।६।।

डिंडीरपिंड हिमशंखसिताभ्रहारे,
पूर्णेन्दु बिम्बरुचि शोभित दिव्यगात्रे।
चांचल्यमान मृगशावललाट नेत्रे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।७।।

पूज्ये पवित्रकरणोन्नत कामरूपे,
नित्यं फणीन्द्र गरुडाधिप किन्नरेन्द्रैः,
विद्याधरेन्द्र सुरयक्ष समस्त वृन्दैः,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।८।।

।। इति सरस्वती स्तोत्रम् ।।

श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम्

सरस्वत्याः प्रसादेन, काव्यं कुर्वन्ति मानवाः ।
तस्मान्निश्चल भावेन, पूजनीया सरस्वती ।।१।।

श्री सर्वज्ञ मुखोत्पन्ना, भारती बहुभाषिणी ।
अज्ञान तिमिरं हन्ति, विद्या बहुविकासिनी ।।२।।

सरस्वतीमया दृष्टा, द्विव्या कमललोचना ।
हंसस्कन्ध समारूढा, वीणा पुस्तक धारिणी ।।३।।

प्रथमं भारती नाम, द्वितीयं च सरस्वती ।
तृतीयं शारदा देवी, चतुर्थं हंसगामिनी ।।४।।

पंचमं विदुषांमाता, षष्ठं वागीश्वरि तथा ।
कुमारी सप्तमं प्रोक्त, अष्टमं ब्रह्मचारिणी ।।५।।

नवमं च जगन्माता, दशमं ब्राह्मिणी तथा ।
एकादशं तु ब्रह्माणी, द्वादशं वरदा भवेत् ।।६।।

वाणी त्रयोदशं नाम, भाषाचैव चतुर्दशं ।
पंचदशं च श्रुतदेवी, षोडशं गौर्निगद्यते ।।७।।

एतानि श्रुतनामानि, प्रातरुत्थाय य· पठेत् ।
तस्य संतुष्यति माता, शारदा वरदा भवेत् ।।८।।

सरस्वती नमस्तुभ्यं, वरदे काम रूपिणी ।
विद्यारंभ करिष्यामि, सिद्धिर्भवतु मे सदा ।।९।।

।। इति श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम् ।।

मंगलाष्टकम्

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र-महिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योत-रत्नप्रभा-
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाऽम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिन सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।१।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनम्
मुक्ति-श्री-नगराऽधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्रयालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।२।।

नाभेयादि-जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लांगलधराः सप्तोत्तरा विंशति-
स्त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।३।।

देव्योऽष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका देवता,
श्रीतीर्थंकरमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा ।
द्वात्रिंशत् त्रिदशाऽधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा,
दिक्पाला दश चेत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।४।।

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांग-महानिमित्त-कुशला येऽष्टौ वियच्चारिणः ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।५।।

कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम् ।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणाऽवनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।६।।

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनाऽमरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये पनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।७।।

यो गर्भाऽवतरोत्सवो भगवतां जन्माऽभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् ।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणनि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।८।।

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्य-संपत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः ।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय रहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ।।९।।

।। इति मंगलाष्टकम् ।।

कल्याणमन्दिर स्तोत्रम्

श्रीमदाचार्यकुमुदचन्द्रदेवप्रणीतम्

कल्याण-मन्दिरमुदारमवद्य-भेदि,
भीताभय-प्रदमनिन्दितमङ्घ्रि-पद्मम् ।
संसार-सागर-निमज्जदशेष-जन्तु-
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ।।१।।

यस्य स्वयं सुरगुरु-र्गरिमाम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृत-मति-र्न विभु-र्विधातुम् ।
तीर्थेश्वरस्य कमठ-स्मय-धूमकेतो-
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ।।२।।

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशः कथमधीश ! भवन्त्यधीशाः ।
धृष्टोऽपि कौशिक-शिशु-र्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः ।।३।।

मोह-क्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो,
नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत ।
कल्पान्त-वान्त-पयसः प्रकटोऽपि यस्मा-
न्मीयेत केन जलधे-र्ननु रत्नराशिः ।।४।।

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य-गुणाकरस्य ।
बालोऽपि किं न निज-बाहु-युगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ।।५।।

ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश !
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः ।
जाता तदेवमसमीक्षित-कारितेयं,
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि ।।६।।

आस्तामचिन्त्य-महिमा जिन संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्राऽऽतपोपहत पान्थ-जनान्निदाघे-
प्रीणाति पद्म-सरसः स-रसोऽनिलोऽपि ।।७।।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिलीभवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्म-बन्धाः ।
सद्यो भुजंगम-मया इव मध्य-भाग-
मभ्यागते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य ।।८।।

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र !
रौद्रै-रुपद्रव-शतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाऽऽशु पशवः प्रपलायमानैः ।।९।।

त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ।।१०।।

यस्मिन्हर्-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः,
सोऽपि त्वया रति-पतिः क्षपितः क्षणेन ।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन ।।११।।

स्वामिन्ननल्प-गरिमाणमपि प्रपन्ना-
स्त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः ।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ।।१२।।

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्म-चौराः ।
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नील-द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ।।१३।।

त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज कोष-देशे ।
पूतस्य निर्मल-रुचे र्यदि वा किमन्य-
दक्षस्य संभव-पदं ननु कर्णिकायाः ।।१४।।

ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्म-दशां व्रजन्ति ।
तीव्रानलादुपल-भावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातु-भेदाः ।।१५।।

अन्तः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् ।
एतत्स्वरूपमथ मध्य-विवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥१६॥

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेद-बुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभावः ।
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं,
किं नाम नो विष-विकारमपाकरोति ॥१७॥

त्वामेव वीत-तमसं परवादिनोऽपि,
नूनं विभो हरि-हरादि-धिया प्रपन्नाः ।
किं काच-कामलिभिरीश सितोऽपि शंखो,
नो गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण ॥१८॥

धर्मोपदेश-समये सविधानुभावा-
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति न जीव-लोकः ॥१९॥

चित्रं विभो कथमवाङ्मुख-वृन्तमेव,
विष्वक्पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः ।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ॥२०॥

स्थाने गभीर-हृदयोदधि-सम्भवायाः,
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ।
पीत्वा यतः परम-सम्मद-संग-भाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ।।२१।।

स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः ।
येऽस्मै नतिं विदधते मुनि-पुंगवाय,
ते नूनमूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः ।।२२।।

श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वल-हेम-रत्न-
सिंहासनस्थमिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम् ।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चै-
श्चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम् ।।२३।।

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन,
लुप्त-च्छद-च्छविरशोक-तरुर्बभूव ।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग,
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ।।२४।।

भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृति-पुरीं प्रति सार्थवाहम् ।
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ।।२५।।

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ,
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः ।
मुक्ता-कलाप-कलितोरु-सितातपत्र-
व्याजात्त्रिधा धृत-तनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥२६॥

स्वेन प्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन,
कान्ति-प्रताप-यशसामिव संचयेन ।
माणिक्य-हेम-रजत-प्रविनिर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ॥२७॥

दिव्य-स्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलि-बन्धान् ।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वापरत्र,
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव ॥२८॥

त्वं नाथ जन्म-जलधेर्विपराङ्मुखोऽपि,
यत्तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान् ।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो यदसि कर्म-विपाक-शून्यः ॥२९॥

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक दुर्गतस्त्वं,
किं वाऽक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश !
अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास-हेतुः ॥३०॥

प्राग्भार-संभृत-नभांसि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि।
छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ।।३१।।

यद्गर्जदूर्जित-घनौघमदभ्र-भीम-
भ्रश्यत्तडिन् मुसल-मांसल-घोरधारम्।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन दुस्तर-वारि कृत्यम् ।।३२।।

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताकृति-मर्त्य-मुण्ड-
प्रालम्बभृद्-भयदवक्त्र-विनिर्यदग्निः ।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः,
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भव-दुःख-हेतुः ।।३३।।

धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसंध्य-
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य-कृत्याः।
भक्त्योल्लसत्पुलक-पक्ष्मल-देह-देशाः,
पाद-द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ।।३४।।

अस्मिन्नपार-भव-वारि-निधौ मुनीश !
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मन्त्रे,
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ।।३५।।

जन्मान्तरेऽपि तव पाद-युगं न देव,
मन्ये मया महितमीहित-दान-दक्षम् ।
तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवानां,
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ।।३६।।

नूनं न मोह-तिमिरावृतलोचनेन,
पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ।
मर्मा विभो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते ।।३७।।

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव दुःखपात्रं,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-शून्याः ।।३८।।

त्वं नाथ दुःखि-जन-वत्सल हे शरण्य,
कारुण्य-पुण्य-वसते वशिनां वरेण्य ।
भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय,
दुःखांकुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि ।।३९।।

निःसख्य-सार-शरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादित-रिपु प्रथितावदानम् ।
त्वत्पाद-पंकजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो,
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवन पावन हा हतोऽस्मि ।।४०।।

देवेन्द्र-वन्द्य विदिताखिल-वस्तुसार !
संसार-तारक विभो भुवनाधिनाथ ।
त्रायस्व देव करुणा-ह्रद मां पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बु-राशेः ।।४१।।

यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रि-सरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः ।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य भूयाः,
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ।।४२।।

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्पुलक-कञ्चुकितांगभागाः ।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुज-बद्ध-लक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ।।४३।।

आर्या छन्द

जननयन-'कुमुदचन्द्र'-प्रभास्वराः स्वर्ग-संपदो भुक्त्वा ।
ते विगलित-मल-निचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ।।४४।।

एकीभावस्तोत्रम्

[श्रीमदाचार्यवादिराजदेवप्रणीतम्]

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्म-बन्धो,
घोरं दुःखं भव-भव गतो दुर्निवारः करोति ।
तस्याप्यस्य त्वयि जिन-रवे भक्तिरुन्मुक्तये चेत्,
जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽवरस्तापहेतुः ।।१।।

ज्योतीरूपं दुरितं-निवह-ध्वान्त-विध्वंस-हेतुं,
त्वामेवाहुर्जिनवर चिरं तत्त्व-विद्याभियुक्ताः ।
चेतोवासे भवसि च मम स्फार-मुद्भासमान-
स्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ।।२।।

आनन्दाश्रु-स्नपित-वदनं गद्गदं चाभिजल्पन्,
यश्चायेत त्वयि दृढ़-मनाः स्तोत्र-मन्त्रैर्भवन्तम् ।
तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देह-वल्मीक-मध्यान्,
निष्कास्यन्ते विविध-विषम-व्याधयः काद्रवेयाः ।।३।।

प्रागेवेह त्रिदिव-भवनादेष्यता-भव्य-पुण्यात्,
पृथ्वी-चक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम् ।
ध्यान-द्वारं मम रुचिकरं स्वान्त-गेहं प्रविष्ट-
स्तत्किं चित्रं जिन वपुरिदं यत्सुवर्णीकरोषि ।।४।।

लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निर्निमित्तेन बन्धु-
स्त्वय्येवासौ सकल-विषया शक्तिरप्रत्यनीका ।
भक्ति-स्फीतां चिरमधिवसन्मामिकां चित्त-शय्यां,
मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेश-यूथं सहेथाः ।।५।।

जन्माटव्यां कथमपि मया देव दीर्घं भ्रमित्वा,
प्राप्तैवेयं तव नय-कथा स्फार-पीयूष-वापी ।
तस्या मध्ये हिमकर-हिम-व्यूह-शीते नितान्तं,
निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःख दावोपतापाः ।।६।।

पाद-न्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं,
हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः ।
सर्वांगेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे,
श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति ।।७।।

पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्ति-पात्र्या पिबन्तं,
कर्मारण्यात्पुरुषमसमानन्द-धाम-प्रविष्टम् ।
त्वां दुर्वार-स्मर-मद-हरं त्वत्प्रसादैक-भूमिं,
क्रूराकाराः कथमिव रुजा कण्टका निर्लुठन्ति ।।८।।

पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्न-मूर्ति-
र्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्न-वर्गः ।
दृष्टि-प्राप्तो हरति स कथं मान-रोगं नराणां,
प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्ति-हेतुः ।।९।।

हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्ति-शैलोपवाही,
सद्यः पुंसां निरवधि-रुजा-धूलिबन्धं धुनोति ।
ध्यानाहूतो हृदय-कमलं यस्य तु त्वं प्रविष्ट-
स्तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोकोपकारः ।।१०।।

जानासि त्वं मम भव-भवे यच्च यादृक्च दुःखं,
जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि ।
त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या,
यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ।।११।।

प्रापद्दैवं तव नुति-पदैर्जीवकेनोपदिष्टैः,
पापाचारी मरण-समये सारमेयोऽपि सौख्यम् ।
कः सन्देहो यदुपलभते वासव-श्री प्रभुत्वं,
जल्पञ्जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कार-चक्रम् ।।१२।।

शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा,
भक्तिर्नो चेदनवधि सुखावञ्चिका कुञ्चिकेयम् ।
शक्योद्घाटं भवति हि कथं मुक्ति-कामस्य पुंसो,
मुक्ति-द्वारं परिदृढ़-महामोह-मुद्रा-कवाटम् ।।१३।।

प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्,
पन्था मुक्तेः स्थपुटित-पदः क्लेश-गर्तैरगाधैः ।
तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्त्वावभासी,
यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारती रत्न-दीपः ।।१४।।

आत्म-ज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानन्द-हेतुः,
कर्म-क्षोणी-पटल-पिहितो योऽनवाप्यः परेषाम् ।
हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः,
स्तोत्रै र्बद्ध-प्रकृति-परुषोद्दाम-धात्री-खनित्रैः ॥१५॥

प्रत्युत्पन्ना नय-हिमगिरेरायता चामृताब्धेः,
या देव त्वत्पद-कमलयोः संगता भक्ति-गंगा ।
चेतस्तस्यां मम रुचि-वशादाप्लुतं क्षालितांहः,
कल्माषं यद्भवति किमियं देव सन्देह-भूमिः ॥१६॥

प्रादुर्भूत-स्थिर-पद-सुख त्वामनुध्यायतो मे,
त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा ।
मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमभ्रेषरूपां,
दोषात्मानोऽप्यभिमत-फलास्त्वत्प्रसादाद् भवन्ति ॥१७॥

मिथ्यावादं मलमपनुदन्सप्तभंगी-तरंगै-
र्वागम्भोधिर्भुवनमखिलं देव पर्येति यस्ते ।
तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चेतसैवाचलेन,
व्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति ॥१८॥

आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः,
शस्त्र-ग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः ।
सर्वांगेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां,
तत्किं भूषा-वसन-कुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः ॥१९॥

इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते,
तस्यैवेयं भव-लय-करी श्लाघ्यतामातनोति ।
त्वं निस्तारी जनन-जलधेः सिद्धि-कान्ता-पतिस्त्वं,
त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ।।२०।।

वृत्तिर्वाचामपर-सदृशी न त्वमन्येन तुल्यः,
स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी नः क्रमन्ते ।
मैवं भूवंस्तदपि भगवन्भक्ति पीयूष-पुष्टा-
स्ते भव्यानामभिमत-फलाः पारिजाता भवन्ति ।।२१।।

कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव प्रसादो,
व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम् ।
आज्ञावश्यं तदपि भुवनं सन्निधि वैर-हारी,
क्वैवंभूतं भुवन-तिलकं प्राभवं त्वत्परेषु ।।२२।।

देव ! स्तोतुं त्रिदिव गणिका-मण्डली-गीत-कीर्तिं,
तोतूर्ति त्वां सकल-विषय-ज्ञान-मूर्तिं जनो यः ।
तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जाहूर्ति पन्था-
स्तत्त्वग्रन्थ-स्मरण-विषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ।।२३।।

चित्ते कुर्वन्निरवधि-सुख-ज्ञान-दृग्वीर्य-रूपं,
देव ! त्वां यः समय-नियमादाऽऽदरेण स्तवीति ।
श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा,
कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम् ।।२४।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द

भक्ति-प्रह्व-महेन्द्र-पूजित-पद त्वत्कीर्तने न क्षमाः,
सूक्ष्म-ज्ञान-दृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम् ।
अस्माभिःस्तवन-च्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते,
सवात्माधीन सुखैषिणां स खलु नः कल्याण-कल्पद्रुमः।।२५।।

स्वागता छन्द

वादिराजमनु शाब्दिक-लोकोवादिराजमनु तार्किक-सिंहः ।
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्य-सहायः ।।२६।।

विषापहारस्तोत्रम्

[श्रीमद् धनञ्जयकविना प्रणीतम्]

उपजातिछन्द

स्वात्म-स्थितः सर्व-गतः समस्त-
व्यापार-वेदी विनिवृत्त-संगः ।
प्रवृद्ध-कालोऽप्यजरो वरेण्यः,
पायादपायात्पुरुषः पुराणः ।।१।।

परैरचिन्त्यं युग-भारमेकः,
स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः ।
स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः,
किमप्रवेशे विशति प्रदीपः ।।२।।

तत्याज शक्रः शकनाभिमानं,
नाहं त्यजामि स्तवनानुबन्धम् ।
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं,
वातायनेनेव निरुपयामि ।।३।।

त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो,
विद्वानशेषं निखिलैरवेद्यः ।
वक्तुं कियान्कीदृश मित्यशक्यः,
स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु ।।४।।

व्यापीडितं बालमिवात्म-दोषै-
रुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वम् ।
हिताहितान्वेषणमान्द्यभाजः,
सर्वस्य जन्तोरसि बाल-वैद्यः ।।५।।

दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा-
नद्यश्व इत्यच्युत दर्शिताशः ।
सव्याजमेवं गम्यत्यशक्तः,
क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय ।।६।।

उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि,
त्वयि स्वभावाद् विमुखश्च दुःखम् ।
सदावदात-द्युतिरेकरूप-
स्तयोस्त्वमादर्श इवावभासि ।।७।।

अगाधताब्धेः स यतः पयोधि-
मेरोश्च तुंगा प्रकृतिः स यत्र ।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव,
व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि ।।८।।

तवानवस्था परमार्थ-तत्त्वं,
त्वया न गीतः पुनरागमश्च ।
दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषी-
र्विरुद्ध वृत्तोऽपि समञ्जसस्त्वम् ।।९।।

स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मि-
न्नुद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः ।
अशेत वृन्दोपहतोऽपि विष्णुः,
किं गृह्यते येन भवानजागः ।।१०।।

स नीरजाः स्यादपरोऽघवान्वा,
तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वम् ।
स्वतोऽम्बुराशेर्महिमा न देव !
स्तोकापवादेन जलाशयस्य ।।११।।

कर्मस्थितिं जन्तुरनेक-भूमिं,
नयत्यमुं सा च परस्परस्य ।
त्वं नेतृ-भावं हि तयोर्भवाब्धौ,
जिनेन्द्र नौ-नाविकयोरिवाख्यः ।।१२।।

सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्,
धर्माय पापानि समाचरन्ति ।
तैलाय बालाः सिकता-समूहं,
निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः ।।१३।।

विषापहारं मणिमौषधानि,
मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च ।
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति,
पर्याय-नामानि तवैव तानि ।।१४।।

चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं,
देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम् ।
हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं,
सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ।।१५।।

त्रिकाल-तत्त्वं त्वमवैस्त्रिलोकी,
स्वामीति संख्या-नियतेरमीषाम् ।
बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यं,
स्तेऽन्येपि चेद्व्याप्स्यदमूनपीदम् ।।१६।।

नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं,
नागम्यरूपस्य तवोपकारि ।
तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानो-
रुद्बिभ्रतच्छत्रमिवादरेण ।।१७।।

क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः,
स चेत्किमिच्छा-प्रतिकूल-वादः ।
क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्वं,
तन्नो यथातथ्यमवेविजं ते ।।१८।।

तुंगात्फलं यत्तदकिञ्चनाच्च,
प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः ।
निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाद्रे-
र्नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः ।।१९।।

त्रैलोक्य-सेवा नियमाय दण्डं,
दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य ।
तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं,
तत्कर्म योगाद्यदि वा तवास्तु ।।२०।।

श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः,
श्रीमान्न कश्चित् कृपणं त्वदन्यः ।
यथा प्रकाश-स्थितमन्धकार-
स्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम् ।।२१।।

स्ववृद्धिनिःश्वास-निमेषभाजि,
प्रत्यक्षमात्मानुभवेऽपि मूढः ।
किं चाखिल-ज्ञेय-विवर्ति-बोध-
स्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः ।।२२।।

तस्यात्मजस्तस्य पितेति देव !
त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य ।
तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं,
पाणौ कृतं हेम पुनस्त्यजन्ति ।।२३।।

दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः,
सुराऽसुरास्तस्य महान् स लाभः ।
मोहस्स मोहस्त्वयि को विरोद्धु-
र्मूलस्य नाशो बलवद्विरोधः ।।२४।।

मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्ते-
श्चतुर्गतीनां गहनं परेण ।
सर्व मया दृष्टमिति स्मयेन,
त्वं मा कदाचिद्-भुजमालुलोकः ।।२५।।

स्वर्भानुरर्कय हविर्भुजोऽम्भः,
कल्पान्तवातोऽम्बुनिधेर्विघातः ।
संसार-भोगस्य वियोग-भावो,
विपक्ष-पूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये ।।२६।।

अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्-
तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति ।
हरिन्मणिं काचधिया दधान-
स्तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ।।२७।।

प्रशस्त-वाचश्चतुराः कषायै-
दग्धस्य देव-व्यवहारमाहुः ।
गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्वं,
दृष्टं कपालस्य च मंगलत्वम् ।।२८।।

नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं,
हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः ।
निर्दोषतां के न विभावयन्ति,
ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ।।२९।।

न क्वापि वाञ्छा ववृते च वाक् ते,
काले क्वचित् कोऽपि तथा नियोगः ।
न पूरयाम्यम्बुधिमित्युदंशुः,
स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति ।।३०।।

गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना,
बहु-प्रकारा बहवस्तवेति ।
दृष्टोऽयमन्तः स्तवने न तेषां,
गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ।।३१।।

स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या,
स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि ।
स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यं,
केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम् ।।३२।।

ततस्त्रिलोकी-नगराधिदेवं,
नित्यं परं ज्योतिरनन्त-शक्तिम् ।
अपुण्य-पापं पर-पुण्य-हेतुं,
नमाम्यहं वन्द्यमवन्दितारम् ।।३३।।

अशब्दमस्पर्शमरूप-गन्धं,
त्वां नीरसं तद्विषयावबोधम् ।
सर्वस्य मातार-ममेयमन्यै-
र्जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि ।।३४।।

अगाधमन्यैर्मनसाप्यलंघ्यं,
निष्किञ्चनं प्रार्थितमर्थवद्भिः ।
विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं,
पतिं जनानां शरणं व्रजामि ।।३५।।

त्रैलोक्य-दीक्षा-गुरवे नमस्ते,
यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत् ।
प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रि-कल्पः,
पश्चान्न मेरुः कुल-पर्वतोऽभूत् ।।३६।।

स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा,
न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम् ।
न लाघवं गौरवमेकरूपं,
वन्दे विभुं कालकलामतीतम् ।।३७।।

इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्-
वरं न याचे त्वमुपेक्षकोऽसि ।
छाया तरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्-
कश्छायया याचितयात्मलाभः ।।३८।।

अथास्ति दित्सा यदि वोपरोध-
स्त्वय्येव सक्तां दिश भक्ति-बुद्धिम् ।
करिष्यते देव तथा कृपां मे,
को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः ।।३९।।

वितरति विहिता यथाकथंचि-
ज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः ।
त्वयि नुति-विषया पुनर्विशेषाद्,
दिशति सुखानि यशो 'धनं जयं' च ।।४०।।

।। इति विषापहारस्तोत्रम् ।।

जिनचतुर्विंशतिका

[श्रीमद्भूपालकविना विरचिता]

शार्दूलविक्रीडितछन्दः

श्रीलीलायतनं मही-कुल-गृहं कीर्ति-प्रमोदास्पदं,
वाग्देवी-रति-केतनं जय-रमा-क्रीडा-निधानं महत् ।
स स्यात् सर्व-महोत्सवैक-भवनं यः प्रार्थितार्थ-प्रदं,
प्रातः पश्यति कल्प-पादप-दल-च्छायं जिनाङ्घ्रि-द्वयम्।।१।।

वसन्ततिलका छन्द

शान्तं वपुः श्रवण-हारि वचश्चरित्रं,
सर्वोपकारि तव देव ततः श्रुतज्ञाः ।
संसार-मारव-महास्थल-रुन्द-सान्द्र-
च्छाया-महीरुह ! भवन्तमुपाश्रयन्ते ।।२।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द.

स्वामिन्नद्य विनिर्गतोऽस्मि जननी-गर्भान्ध-कूपोदरा-
दद्योद्घाटित दृष्टिरस्मि फलवज्जन्मास्मि चाद्य स्फुटम् ।
त्वामद्राक्षमहं यदक्षय-पदानन्दाय लोकत्रयी-
नेत्रेन्दीवर-काननेन्दुममृत-स्यन्दि-प्रभा-चन्द्रिकम् ।।३।।

नि:शेष-त्रिदशेन्द्र-शेखर-शिखा-रत्न प्रदीपावली-
सान्द्रीभूत-मृगेन्द्र-विष्टर-तटी-माणिक्य-दीपावलिः ।
क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्वमिदमित्यूहातिगस्त्वादृशः,
सर्व-ज्ञान-दृशश्चरित्र-महिमा लोकेश ! लोकोत्तर: ।।४।।

राज्यं शासनकारि-नाकपति यत् त्यक्तं तृणावज्ञया,
हेला-निर्दलित-त्रिलोक-महिमा यन्मोह-मल्लो जितः ।
लोकालोकमपि स्वबोध-मुकुरस्यान्तः कृतं यत् त्वया,
सैषाश्चर्य परम्परा जिनवर क्वान्यत्र संभाव्यते ।।५।।

दान ज्ञान-धनाय दत्तमसकृत् पात्राय सद्वृत्तये,
चीर्णान्युग्र-तपांसि तेन सुचिरं पूजाश्च बह्व्यः कृताः ।
शीलानां निचयः सहामलगुणैः सर्वः समासादितो,
दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टि-सुभगः श्रद्धा परेण क्षणम् ।।६।।

प्रज्ञा-पारमित· स एव भगवान् पारं स एव श्रुत-
स्कन्धाब्धेर्गुण-रत्न-भूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवम् ।
नीयन्ते जिन येन कर्ण-हृदयालंकारतां त्वद्गणाः,
संसाराहि-विषापहार-मणयस्त्रैलोक्य-चूडामणे ।।७।।

मालिनी छन्दः

जयति दिविज-वृन्दान्दोलितैरिन्दुरोचि-
र्निचय-रुचिभिरुच्चैश्चामरै र्वीज्यमानः ।
जिनपतिरनुरज्यन्मुक्ति-साम्राज्य-लक्ष्मी-
युवति-नव कटाक्ष-क्षेप-लीलां दधानैः ।।८।।

स्रग्धरा छन्दः

देवः श्वेतातपत्र-त्रय-चमरिरुहाऽशोक-भाश्चक्र-भाषा-
पुष्पौघासार-सिंहासन-सुरपटहैरष्टभिः प्रातिहार्यैः ।
साश्चर्यैर्भ्राजमानः सुर-मनुज-सभाम्भोजिनी-भानुमाली,
पायान्नः पादपीठीकृत-सकल-जगत्पाल-मौलि र्जिनेन्द्रः ।।९।।

नृत्यत्स्वर्दन्ति-दन्ताम्बुरुह-वन-नटन्नाक-नारी-निकायः,
सद्यस्त्रैलोक्य-यात्रोत्सव-कर-निनदातोद्यमाद्यन्निलिम्पः ।
हस्ताम्भोजात-लीला विनिहित सुमनोदाम-रम्यामर स्त्री-
काम्यः कल्याण-पूजाबिधिषु विजयते देव देवागमस्ते।।१०।।

शार्दूलबिक्रीडित छन्दः

चक्षुष्मानहमेव देव भुवने नेत्रामृत-स्यन्दिनं,
त्वद्वक्त्रेन्दुमतिप्रसाद-सुभगैस्तेजोभिरुद्भासितम् ।
येनालोकयता मयानति-चिराच्चक्षुः कृतार्थीकृतं,
द्रष्टव्यावधि-वीक्षण-व्यतिकर-व्याजृम्भमाणोत्सवम् ।।११।।

वसन्ततिलका छन्द.

कन्तोः सकान्तमपि मल्लमवैति कश्चिन्-
मुग्धो मुकुन्द-मरविन्दज-मिन्दुमौलिम् ।
मोघीकृत-त्रिदश-योषिदपांगपात-
स्तस्य त्वमेव विजयी जिनराज मल्लः।।१२।।

मालिनी छन्दः

किसलयितमनल्पं त्वद्विलोकाभिलाषात्,
कुसुमितमतिसान्द्रं त्वत्समीप-प्रयाणात् ।
मम फलितममन्दं त्वन्मुखेन्दोरिदानीं,
नयन-पथमवाप्ताद्देव ! पुण्यद्रुमेण ।।१३।।

त्रिभुवन-वन-पुष्पात्पुष्प-कोदण्ड-दर्प-
प्रसर-दव-नवाम्भो-मुक्ति-सूक्ति-प्रसूतिः ।
स जयति जिनराज-व्रात-जीमूत-संघः,
शतमख-शिखि-नृत्यारम्भ-निर्बन्ध-बन्धुः ।।१४।।

स्रग्धरा छन्दः

भूपाल-स्वर्ग-पाल-प्रमुख-नर-सुर-श्रेणि-नेत्रालिमाला-
लीला-चैत्यस्य चैत्यालयमखिलजगत्कौमुदीन्दो र्जिनस्य ।
उत्तंसीभूत-सेवाञ्जलि-पुट-नलिनी-कुड्मलास्त्रिः परीत्य,
श्रीपाद-च्छाययापस्थितभवदवथुः संश्रितोऽस्मीव मुक्तिम्।।१५।।

वसन्ततिलका छन्दः

देव त्वदङ्घ्रि-नख-मण्डल-दर्पणेऽस्मि-
न्नर्घ्ये निसर्ग-रुचिरे चिर-दृष्ट-वक्त्रः ।
श्रीकीर्ति-कान्ति-धृति-संगम-कारणानि,
भव्यो न कानि लभते शुभ-मंगलानि ।।१६।।

मालिनी छन्दः

जयति सुर-नरेन्द्र-श्रीसुधा-निर्झरिण्याः,
कुलधरणि-धरोऽयं जैन-चैत्याभिरामः ।
प्रविपुल-फल-धर्मानोकहाग्र-प्रवाल-
प्रसर-शिखर-शुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः ।।१७।।

विनमदमरकान्ता-कुन्तलाक्रान्त-कान्ति-
स्फुरित-नख-मयूख-द्योतिताशाऽन्तरालः ।
दिविज-मनुज राज-व्रात-पूज्य-क्रमाब्जो,
जयति विजित-कर्मारारति-जालो-जिनेन्द्रः ।।१८।।

वसन्ततिलका छन्द·

सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमंगलाय,
द्रष्टव्यमस्ति यदि मंगलमेव वस्तु ।
अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं,
त्रैलोक्य-मंगल-निकेतनमीक्षणीयम् ।।१९।।

शार्दूलविक्रीडितछन्दः

त्वं धर्मोदय-तापसाश्रम-शुकस्त्वं काव्य-बन्ध-क्रम-
क्रीडानन्दन-कोकिलस्त्वमुचितःश्रीमल्लिका-षट्पदः ।
त्वं पुन्नाग-कथारविन्द-सरसी-हंसस्त्वमुत्तंसकैः,
कैर्भूपाल न धार्यसे गुण-मणि-स्त्रङ्मालिभि मौलिभिः ।।२०।।

मालिनीछन्दः

शिव-सुखमजर-श्री-संगमं चाभिलष्य,
स्वमभिनियमयन्ति क्लेश-पाशेन केचित् ।
वयमिह तु वचस्ते भूपते भावयन्त-
स्तदुभयमपि शश्वल्लीलया निर्विशामः ।।२१।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द

देवेन्द्रास्तव मज्जनानि विदधुर्देवांगना मंगला-
न्यापेठुः शरदिन्दु-निर्मल-यशो गन्धर्व-देवा जगुः ।
शेषाश्चापि यथानियोगमखिलाः सेवां सुराश्चक्रिरे,
तत्किं देव वयं विदध्म इति नश्चित्तं तु दोलायते ।।२२।।

देव त्वज्जननाभिषेक-समये रोमाञ्च-सत्कञ्चुकै-
र्देवेन्द्रैर्यदनर्ति नर्तनविधौ लब्ध-प्रभावैः स्फुटम् ।
कश्चान्यत्सुर-सुन्दरी कुच-तट-प्रान्तावनद्धोत्तम-
प्रेङ्खद्वल्लकि-नाद-झकृतमहो तत्केन संवर्ण्यते ।।२३।।

देव त्वत्प्रतिबिम्बमम्बुज-दलस्मेरेक्षणं पश्यतां,
यत्रास्माकमहो महोत्सव-रसो दृष्टेरियान्वर्तते ।
साक्षात्तत्र भवन्तमीक्षितवतां कल्याण-काले तदा,
देवानामनिमेष-लोचनतया वृत्तः स किं वर्ण्यते ।।२४।।

दृष्टं धाम रसायनस्य महता दृष्टं निधीनां पदं,
दृष्टं सिद्ध-रसस्य सद्म सदनं दृष्टं च चिन्तामणेः ।
किं दृष्टैरथवानुषंगिक-फलैरेभिर्मयाद्य ध्रुवं,
दृष्टं मुक्ति-विवाह-मंगल-गृहं दृष्टे जिन-श्री-गृहे ।।२५।।

दृष्टस्त्वं जिनराज-चन्द्र विकसद् भूपेन्द्र-नेत्रोत्पले,
स्नातं त्वन्नुति-चन्द्रिकाम्भसि भवद् विद्वच्चकोरोत्सवे,
नीतश्चाद्य निदाघजः क्लमभरः शान्तिं मया गम्यते,
देव त्वद्गत-चेतसैव भवतो भूयात् पुनर्दर्शनम् ।।२६।।

।। इति श्रीमद्भूपालकविविरचिता जिनचतुर्विंशतिका ।।

अकलंकस्तोत्रम्

शार्दूलविक्रीडित छन्द·

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितं,
साक्षाद् येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि।
रागद्वेषभयामयान्तक-जरा-लोलत्व-लोभादयो,
नालं यत्पद-लंघनाय स महादेवो मया वंद्यते ॥१॥

दग्धं येन पुरत्रयं शरभुवा तीव्रार्चिषा वह्निना,
यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः।
सोऽयं किं मम शंकरो भय-तृषा-रोषार्ति-मोह-क्षयं,
कृत्वा यः स तु सर्ववित्तनुभृतां क्षेमंकरः शंकरः ॥२॥

यत्नाद्येन विदारितं कररुहै-र्दैत्येन्द्र-वक्षःस्थलं,
सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत् कौरवान्।
नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतं,
विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ॥३॥

उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः,
पात्री-दण्ड-कमण्डलु-प्रभृतयो यस्याकृतार्थ-स्थितिम्।
आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्मा भवेन्मादृशां,
क्षुत्तृष्णा-श्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ॥४॥

यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन्,
कर्त्ता कर्मफलं न भुङ्क्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम्।
यज्ज्ञानं क्षणवर्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा,
यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात् स बुद्धो मम ॥५॥

स्रग्धरा छन्दः

ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात्,
नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च ।
आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं,
संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ।।६।।

ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेशविभ्रान्तचेताः,
शम्भुः खट्वांगधारी गिरिपति-तनयापांग-लीलानुविद्धः ।
विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद् गोपनाथस्य मोहा-
दर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ।।७।।

एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रे सहस्रं भुजा-
नेक शेषभुजगभोगशयने व्यादाय निद्रायते ।
दृष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता-
मेते मुक्तिपथं वदन्ति विदुषामित्येतदत्यद्भुतम् ।।८।।

यो विश्वं वेद वेद्यं जननजलनिधेर्भगिनः पारदृश्वा,
पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपम निष्कलंकं यदीयम् ।
तं वन्दे साधुवंद्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं,
बुद्धं वा वर्द्धमान-शतदलनिलयं केशव वा शिवं वा ।।९।।

माया नास्ति जटा-कपाल-मुकुटं चन्द्रो न मूर्धावली,
खट्वांगं न च वासुकिर्न च धनुः शूल न चोग्रं मुखम्।
कामो यस्य न कामिनी न च वृषो-गीतं न नृत्यं पुनः,
सोऽस्मान् पातु निरजनो जिनपतिः सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः।।१०।।

नो ब्रह्मांकितभूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्रांकितं,
नो चन्द्रार्ककरांकितं सुरपतेर्वज्रांकितं नैव च।
षडवक्त्रांकितबौद्धदेवहुतभुग्यक्षोरगैर्नांकितं,
नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्रांकितम् ।।११।।
मौञ्जी दण्ड-कमण्डलु-प्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो,
रुद्रस्यापि जटा-कपाल मुकुट-कौपीन-खट्वांगनाः ।
विष्णोश्चक्र-गदादि-शंख-मतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं,
नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्र-मुद्राङ्कितम् ।।१२।।
नाहकारवशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं,
नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया ।
राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो,
बौद्धौघान्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः।।१३।।
खट्वांगं नैव हस्ते न च हृदि रचिता लम्बते मुण्डमाला,
भस्मांगं नैव शूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं ।
चन्द्रार्द्धं नैव मूर्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः,
तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं ।।१४।।
किं वाद्यो भगवानमेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ,
काले यो जनतासु धर्मनिहितो देवोऽकलङ्को जिनः ।
यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरीजाले प्रमेयाकुला,
निर्मग्ना तनुतेतरा भगवती ताराशिरःकम्पनम् ।।१५।।
सा तारा खलुदेवताभगवती मन्याऽपि मन्यामहे,
षण्मासावधिजाड्यसांख्यभगवद् भट्टाकलङ्कप्रभोः ।
वाक्कल्लोलपरंपराभिरमते नूनं मनोमज्जन-
व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः संताडितेतस्ततः ।।१६।।

।। इत्यकलङ्कस्तोत्रम् ।।

अद्याष्टकस्तोत्रम्

[श्रीगुणनन्दिकृत]

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम ।
त्वामद्राक्षं यतो देव, हेतुमक्षयसंपदः ।।१।।
अद्य संसार-गंभीर, पारावारः सुदुस्तरः ।
सुतरोऽयं क्षणेनैव, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।२।।
अद्य मे क्षालितं गात्रं, नेत्रे च विमले कृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।३।।
अद्य मे सफलं जन्म, प्रशस्तं सर्वमंगलम् ।
संसाराऽर्णव-तीर्णोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।४।।
अद्य कर्माष्टक-ज्वालं, विधूतं सकषायकम् ।
दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।५।।
अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे, शुभाश्चैकादश-स्थिताः ।
नष्टानि विघ्न-जालानि, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।६।।
अद्य नष्टो महाबन्धः, कर्मणां दुःखदायकः ।
सुख-संगं समापन्नो, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।७।।
अद्य कर्माष्टकं नष्टं, दुःखोत्पादन-कारकम् ।
सुखाम्भोधि-निमग्नोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।८।।
अद्य मिथ्यान्धकारस्य, हन्ता ज्ञान-दिवाकरः ।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन्, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।९।।
अद्याहं सुकृतीभूतो, निर्धूताशेषकल्मषः ।
भुवन-त्रय-पूज्योऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।१०।।
अद्याष्टकं पठेद्यस्तु, गुणाऽऽनन्दित-मानसः ।
तस्य सवार्थसंसिद्धि, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।११।।

।। इत्यद्याष्टकम् स्तोत्रम् ।।

स्वयम्भू-स्तोत्रम्

(चतुर्विंशति जिनस्तोत्रम्)

[श्रीमत्समन्तभद्राचार्य विरचितम्]

श्री वृषभजिनस्तवनम्

वंशस्थ-छन्द

स्वयम्भुवा भूत-हितेन भू-तले,
समञ्जस-ज्ञान-विभूति-चक्षुषा ।
विराजितं येन विधुन्वता तमः,
क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः ।।१।।

प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषूः,
शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।
प्रबुद्ध-तत्त्वः पुनरद्भुतोदयो,
ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः ।।२।।

विहाय यः सागर-वारि-वाससं,
वधूमिवेमां वसुधा वधूं सतीम् ।
मुमुक्षुरिक्ष्वाकु-कुलादिरात्मवान्,
प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः ।।३।।

स्व-दोष-मूलं स्व-समाधि-तेजसा,
निनाय यो निर्दय-भस्मसात्क्रियाम् ।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा,
बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ।।४।।

स विश्व-चक्षुर्वृषभोर्चितः सतां,
समग्र-विद्याऽऽत्म-वपुर्निरञ्जनः ।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो,
जिनो जितक्षुल्लक-वादि-शासनः ।।५।।

इति वृषभ-जिन-स्तवनम्

भगवदजितजिनस्तवनम्

उपजाति छन्द

यस्य प्रभावात् त्रिदिव-च्युतस्य,
क्रीडास्वपि क्षीव-मुखाऽरविन्दः ।
अजेय-शक्तिर्भुवि बन्धु-वर्ग-
श्चकार नामाऽजित इत्यबन्ध्यम् ।।६।।
अद्यापि यस्याऽजित शासनस्य,
सतां प्रणेतुः प्रतिमंगलार्थम् ।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं,
स्व-सिद्धि-कामेन जनेन लोके ।।७।।
यः प्रादुरासीत्प्रभु-शक्ति-भूम्ना,
भव्याशयालीन-कलंक-शान्त्यै ।
महामुनिर्मुक्त-घनोपदेहो,
यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ।।८।।
येन प्रणीतं पृथु-धर्म-तीर्थं,
ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम् ।
गाङ्गं ह्रदं चन्दन-पङ्क-शीतं,
गजप्रवेका इव घर्म-तप्ताः ।।९।।

स ब्रह्म-निष्ठः सम-मित्र-शत्रु-
विद्या-विनिर्वान्त-कषाय-दोषः ।
लब्धात्मलक्ष्मीरजितोऽजितात्मा,
जिनश्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ।।१०।।

इत्यजित-जिन-स्तवनम्

श्रीशम्भवजिनस्तवनम्

इन्द्रवज्रा-छन्दः

त्वं शम्भवः संभव-तर्ष-रोगैः,
संतप्यमानस्य जनस्य लोके ।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो,
वैद्यो यथाऽनाथ रुजां प्रशान्त्यै ।।११।।

उपेन्द्रवज्रा-छन्दः

अनित्यमत्राणमहं-क्रियाभिः,
प्रसक्त-मिथ्याऽध्यवसाय-दोषम् ।
इदं जगज्जन्म-जराऽन्तकाऽऽर्तं,
निरञ्जनां शान्तिमजीगमस्त्वम् ।।१२।।
शतह्रदोन्मेष-चलं हि सौख्यं,
तृष्णा मयाऽप्याऽऽयन-मात्र-हेतुः ।
तृष्णाऽभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं,
तापस्तदाऽऽयासयतीत्यवादीः ।।१३।।
बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतू,
बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।

स्याद्वादिनो नाथ ! तवैव युक्तं,
नैकान्त-दृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ।।१४।।
शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः,
स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशोऽज्ञः ।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो,
ममार्य ! देयाः शिव-तातिमुच्चैः ।।१५।।

इति श्रीशम्भव-जिन स्तवनम्

अभिनन्दनजिनस्तवनम्

वंशस्थ-छन्द

गुणाभिनन्दादभिनन्दनो भवान्,
दयावधूं क्षान्ति-सखीमशिश्रियत् ।
समाधि-तन्त्रस्तदुपोपपत्तये,
द्वयेन नैर्ग्रन्थ्य-गुणेनऽऽचाऽऽयुजत् ।।१६।।
अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च,
ममेदमित्याऽभिनिवेशिक-ग्रहात् ।
प्रभङ्गुरे स्थावर-निश्चयेन च,
क्षतं जगत्तत्त्वमजिग्रहद् भवान् ।।१७।।
क्षुधादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थिति-
र्न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाऽल्प-सौख्यतः ।
ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो-
रितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ।।१८।।

जनोऽतिलोलोऽप्यनुबन्ध दोषतो,
भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते ।
इहाऽप्यमुत्राऽप्यनुबन्ध-दोष-वित्,
कथं सुखे संसजतीति चाऽब्रवीत् ।।१९।।

स चाऽनुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्,
तृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः ।
इति प्रभो लोकहितं यतो मतं,
ततो भवानेव गतिः सतां मतः ।।२०।।

इत्यभिनन्दन-जिन-स्तवनम्

श्रीसुमतिजिनस्तवनम्

उपजाति-छन्दः

अन्वर्थ-संज्ञः सुमतिर्मुनि-स्त्वं,
स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम् ।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति,
सर्व-क्रिया-कारक-तत्त्व-सिद्धिः ।।२१।।

अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं,
भेदान्वय-ज्ञानमिदं हि सत्यम् ।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे,
तच्छेष-लोपोऽपि ततोऽनुपाख्यम् ।।२२।।

सतः कथञ्चित्तदसत्त्व-शक्तिः,
खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।

सर्व-स्वभाव-च्युतमप्रमाणं,
स्व-वाग्विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ।।२३।।
न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति,
न च क्रिया-कारकमत्र युक्तम् ।
नैवाऽसतो जन्म सतो न नाशो,
दीपस्तमः पुद्गल-भावतोऽस्ति ।।२४।।
विधि र्निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ,
विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं,
मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ।।२५।।

इति श्रीसुमति-जिन-स्तवनम्

श्रीपद्मप्रभजिनस्तवनम्

उपजाति-छन्द

पद्मप्रभ· पद्म-पलाश-लेश्यः,
पद्माऽऽलयाऽऽलिंगित-चारु-मूर्तिः।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणा,
पद्माऽऽकराणामिव पद्म-बन्धुः ।।२६।।
बभार पद्मां च सरस्वतीं च,
भवान् पुरस्तात् प्रतिमुक्ति-लक्ष्म्याः ।
सरस्वतीमेव समग्र-शोभां,
सर्वज्ञ-लक्ष्मीं ज्वलिता विमुक्तः ।।२७।।

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते,
बालाऽर्क-रश्मि-च्छविरालिलेप ।
नराऽमराऽऽकीर्ण-सभां प्रभाव-
च्छैलस्य पद्माऽऽभ-मणेः स्व-सानुम् ।।२८।।

नभस्तलं पल्लवयन्निव त्वं,
सहस्र-पत्राऽम्बुज-गर्भचारैः ।
पादाऽम्बुजैः पातित-मार-दर्पो,
भूमौ प्रजानां विजहर्थ भूत्यै ।।२९।।

गुणाऽम्बुधेर्विप्रुषमप्यजस्रं,
नाऽऽखण्डलः स्तोतुमलं तवर्षेः ।
प्रागेव मादृक् किमुताऽतिभक्ति-
र्मां बालमालाऽऽपयतीदमित्थम् ।।३०।।

इति श्रीपद्मप्रभ-जिन-स्तवनम्

श्रीसुपार्श्वजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

स्वास्थ्यं यदाऽऽत्यन्तिकमेष पुंसां,
स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुराऽऽत्मा ।
तृषोऽनुषङ्गान्न च ताप-शान्ति-
रितीदमाख्यद् भगवान् सुपार्श्वः ।।३१।।

अजङ्गमं जङ्गम-नेय यन्त्रं,
यथा तथा जीव-धृतं शरीरम् ।

बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च,
स्नेहो वृथाऽत्रेति हितं त्वमाख्याः ।।३२।।
अलङ्घ्य-शक्तिर्भवितव्यतेयं,
हेतु-द्वयाऽऽविष्कृत-कार्यलिङ्गा ।
अनीश्वरो जन्तुरहं-क्रियाऽऽर्तः,
संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ।।३३।।
बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो,
नित्यं शिवं वाञ्छति नाऽस्य लाभः ।
तथापि बालो भय-काम-वश्यो,
वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ।।३४।।
सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता,
मातेव बालस्य हिताऽनुशास्ता ।
गुणाऽवलोकस्य जनस्य नेता,
मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य ।।३५।।

इति श्रीसुपार्श्व-जिन-स्तवनम्

श्रीचन्द्रप्रभजिनस्तवनम्

उपजाति छन्द·

चन्द्रप्रभं चन्द्र-मरीचि-गौरं,
चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषायबन्धम् ।।३६।।

यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेष-भिन्नं,
तमस्तमोऽरेरिव रश्मि-भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च,
ध्यान-प्रदीपाऽतिशयेन भिन्नम् ।।३७।।
स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता,
वाक्-सिंहनादैर्विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदाऽऽर्द्र-गण्डा,
गजा यथा केशरिणो निनादैः ।।३८।।
यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाऽद्भुत-कर्म-तेजाः ।
अनन्त-धामाऽक्षर-विश्वचक्षुः,
समन्त-दुःख-क्षय-शासनश्च ।।३९।।
स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषाऽभ्र-कलंक-लेपः ।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान् मनो मे ।।४०।।

इति श्रीचन्द्रप्रभजिनस्तवनम्

श्रीसुविधिजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

एकान्तदृष्टि-प्रतिषेधि तत्त्वं,
प्रमाण-सिद्धं तदतत्स्वभावम् ।
त्वया प्रणीतं सुविधे ! स्वधाम्ना,
नैतत् समालीढ-पदं त्वदन्यैः ।।४१।।

तदेव च स्यान्न तदेव च स्यात्,
तथा प्रतीतेस्तव तत् कथञ्चित् ।
नाऽत्यन्तमन्यत्व-मनन्यता च,
विधेर्निषेधस्य च शून्य-दोषात् ।।४२।।

नित्यं तदेवेदमिति प्रतीते-
र्न नित्यमन्यत् प्रतिपत्ति-सिद्धेः ।
न तद्विरुद्धं बहिरन्तरंग-
निमित्त-नैमित्तिक-योगतस्ते ।।४३।।

अनेकमेकं च पदस्य वाच्यं,
वृक्षा इति प्रत्ययवत् प्रकृत्या ।
आकाङ्क्षिणः स्यादिति वै निपातो,
गुणाऽनपेक्षे नियमेऽपवादः ।।४४।।

गुण-प्रधानाऽर्थमिदं हि वाक्यं,
जिनस्य ते तद् द्विषतामपथ्यम् ।
ततोऽभिवन्द्यं जगदीश्वराणां,
ममापि साधोस्तव पाद-पद्मम् ।।४५।।

इति श्रीसुविधिजिनस्तवनम्

श्री शीतलजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

न शीतलाश्चन्दन-चन्द्र-रश्मयो,
न गाङ्गमम्भो न च हार-यष्टयः ।
यथा मुनेस्तेऽनघ-वाक्य-रश्मयः,
शमाऽम्बु-गर्भाः शिशिरा विपश्चिताम् ।।४६।।

सुखाऽभिलाषानल-दाह-मूर्च्छितं,
मनो निजं ज्ञानमयाऽमृताम्बुभिः ।
व्यदिध्यपस्त्वं विष-दाह-मोहितं-
यथा भिषग्-मन्त्र-गुणैः स्व-विग्रहम् ।।४७।
स्व-जीविते कामसुखे च तृष्णाया,
दिवा श्रमाऽऽर्ता निशि शेरते प्रजाः ।
त्वमार्य ! नक्तं दिवमप्रमत्तवा-
नजागरेवाऽऽत्म-विशुद्ध-वर्त्मनि ।।४८।।
अपत्य-वित्तोत्तर-लोक-तृष्णाया,
तपस्विनः केचन कर्म कुर्वते ।
भवान् पुनर्जन्म-जरा-जिहासया,
त्रयीं प्रवृत्तिं सम-धीरवारुणत् ।।४९।।
त्वमुत्तम-ज्योतिरजः क्व निर्वृतः,
क्व ते परे बुद्धि-लवोद्धव-क्षताः ।
ततः स्व-निःश्रेयस-भावना-परै-
र्बुधप्रवेकैर्जिन ! शीतलेड्यसे ।।५०।।

इति श्रीशीतलजिनस्तवनम्

श्री श्रेयोजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

श्रेयान् जिनः श्रेयसि वर्त्मनीमाः,
श्रेयः प्रजाः शासदजेय-वाक्यः ।
भवांश्चकासे भुवनत्रयेऽस्मिन्,
नेको यथा वीत-घनो विवस्वान् ।।५१।।

विधिर्विषक्तप्रतिषेधरूपः,
प्रमाणमत्रान्यतरत् प्रधानम् ।
गुणोऽपरो मुख्य-नियाम-हेतु-
र्नयः स दृष्टान्तसमर्थनस्ते ।।५२।।
विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो,
गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते ।
तथाऽरि-मित्राऽनुभयादि-शक्ति-
र्द्वयाऽवधिः कार्यकरं हि वस्तु ।।५३।।
दृष्टान्तसिद्धावुभयोर्विवादे.
साध्यं प्रषिध्येन्न तु तादृगस्ति ।
यत् सर्वथैकान्त-नियामि दृष्टं,
त्वदीय दृष्टिर्विभवत्यशेषे ।।५४।।
एकान्तदृष्टि-प्रतिषेधसिद्धि-
र्न्यायेषुभिर्मोहरिपुं निरस्य ।
असिस्म कैवल्य-विभूति-सम्राट्,
ततस्त्वमर्हन्नसि मे स्तवार्हः ।।५५।।

इति श्रेयोजिनस्तवनम्

श्रीवासुपूज्यस्तवनम्

उपजाति छन्द

शिवासु पूज्योऽभ्युदयक्रियासु,
त्वं वासुपूज्यस्त्रिदशेन्द्र-पूज्यः ।
मयाऽपि पूज्योऽल्पधिया मुनीन्द्र !
दीपार्चिषा किं तपनो न पूज्यः ।।५६।।

न पूजयाऽर्थस्त्वयि वीतरागे,
न निन्दया नाथ ! विवान्त-वैरे ।
तथापि ते पुण्य-गुण-स्मृति र्नः,
पुनातु चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः ।।५७।।
पूज्यं जिनं त्वाऽर्चयतो जनस्य,
सावद्य-लेशो बहु-पुण्य राशौ ।
दोषाय नालं कणिका विषस्य,
न दूषिका शीत-शिवाऽम्बु-राशौ ।।५८।।
यद् वस्तु बाह्यं गुण-दोष-सूते-
र्निमित्तमभ्यन्तर-मूल-हेतोः ।
अध्यात्मवृत्तस्य तदंगभूत-
मभ्यन्तरं केवलमप्यलं ते ।।५९।।
बाह्येतरोपाधि-समग्रतेयं,
कार्येषु ते द्रव्यगतः स्वभावः ।
नैवाऽन्यथा मोक्षविधिश्च पुंसां,
तेनाऽभिवन्द्यस्त्वमृषिर्बुधानाम् ।।६०।।

इति श्रीवासुपूज्यजिनस्तवनम्

श्रीविमलजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

य एव नित्य-क्षणिकाऽऽदयो नया,
मिथोऽनपेक्षाः स्व-पर-प्रणाशिनः ।
त एव तत्त्वं विमलस्य ते मुनेः,
परस्परेक्षाः स्व-परोपकारिणः ।।६१।।

यथैकशः कारकमर्थ-सिद्धये,
समीक्ष्य शेषं स्व-सहाय-कारकम् ।
तथैव सामान्य-विशेष-मातृका,
नयास्तवेष्टा गुण-मुख्य-कल्पतः ।।६२।।

परस्परेक्षाऽन्वयभेदलिंगतः,
प्रसिद्ध-सामान्यविशेषयोस्तव ।
समग्रताऽस्ति स्व-पराऽवभासकं,
यथा प्रमाणं भुवि बुद्धिलक्षणम् ।।६३।।

विशेष्य वाच्यस्य विशेषणं वचो,
यतो विशेष्यं विनियम्यते च यत् ।
तयोश्च सामान्यमतिप्रसज्यते,
विवक्षितात् स्यादिति तेऽन्य-वर्जनम् ।।६४।।

नयास्तव स्यात्पद-सत्य-लाञ्छिता,
रसोपविद्धा इव लोह-धातवः ।
भवन्त्यभिप्रेत गुणा यतस्ततो,
भवन्तमार्याः प्रणता हितैषिणः ।।६५।।

इति श्रीविमलजिनस्तवनम्

भगवदनन्तजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्द.

अनन्त-दोषाऽशय-विग्रहो ग्रहो,
विषङ्गवान् मोहमयश्चिरं हृदि ।
यतो जितस्तत्त्व रुचौ प्रसीदता,
त्वया ततोऽभूर्भगवाननन्तजित् ।।६६।।

कषाय-नाम्नां द्विषतां प्रमाथिना-
मशेयन्नाम भवानशेषवित् ।
विशोषणं मन्मथ-दुर्मदाऽऽमयं,
समाधि भैषज्य-गुणैर्व्यलीनयत् ।।६७।।
परिश्रमाऽम्बुर्भय-वीचि-मालिनी,
त्वया स्व-तृष्णा-सरिदाऽऽर्य ! शोषिता ।
असङ्ग-घर्माऽर्क-गभस्ति-तेजसा,
परं ततो निर्वृति-धाम तावकम् ।।६८।।
सहत् त्वयि श्रीसुभगत्वमश्नुते,
द्विषंस्त्वयि प्रत्ययवत् प्रलीयते ।
भवानुदासीनतमस्तयोरपि,
प्रभो परं चित्रमिदं तवेहितम् ।।६९।।
त्वमीदृशस्तादृश इत्ययं मम,
प्रलाप-लेशोऽल्पमतेर्महामुने ! ।
अशेष-माहात्म्यमनीरयन्नपि,
शिवाय संस्पर्श इवाऽमृताम्बुधेः ।।७०।।

इत्यनन्तजिनस्तवनम्

श्रीधर्मजिनस्तवनम्

रथोद्धता छन्दः

धर्म-तीर्थमनघं प्रवर्तयन्,
धर्म इत्यनुमतः सतां भवान् ।
कर्म-कक्षमदहत् तपोऽग्निभिः,
शर्म शाश्वतमवाप शंकरः ।।७१।।

देव-मानव-निकाय-सत्तमै,
रेजिषे परिवृतो वृतो बुधैः ।
तारका-परिवृतोऽतिपुष्कलो,
व्योमनीव शश-लाञ्छनोऽमलः ।।७२।।
प्रातिहार्य-विभवैः परिष्कृतो,
देहतोऽपि विरतो भवानभूत् ।
मोक्षमार्गमशिषन् नराऽमरान्,
नापि शासन-फलैषणाऽऽतुरः ।।७३।।
काय-वाक्य-मनसां प्रवृत्तयो,
नाऽभवंस्तव मुनेश्चिकीर्षया ।
नाऽसमीक्ष्य भवतः प्रवृत्तयो ,
धीर ! तावकमचिन्त्यमीहितम् ।।७४।।
मानुषीं प्रकृतिमभ्यतीतवान्,
देवतास्वपि च देवता यतः ।
तेन नाथ ! परमाऽसि देवता,
श्रेयसे जिनवृष ! प्रसीद नः ।।७५।।

इति श्रीधर्मजिन-स्तवनम्

श्रीशान्तिजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

विधाय रक्षां परतः प्रजानां,
राजा चिरं योऽप्रतिम-प्रतापः ।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्ति-
र्मुनिर्दयामूर्तिरिवाऽघ-शान्तिम् ।।७६।।

चक्रेण यः शत्रु-भयंकरेण,
जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम् ।
समाधि-चक्रेण पुनर्जिगाय,
महोदयो दुर्जय-मोह-चक्रम् ।।७७।।
राज-श्रिया राजसु राज-सिंहो,
रराज यो राज-सुभोग-तन्त्रः ।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुनरात्म-तन्त्रो,
देवाऽसुरोदार-सभे रराज ।।७८।।
यस्मिन्नभूद्राजनि राज-चक्रं,
मुनौ दया-दीधिति धर्म-चक्रम् ।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देव-चक्रं,
ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम् ।।७९।।
स्व-दोष-शान्त्या विहितात्म-शान्तिः,
शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम् ।
भूयाद् भव-क्लेश-भयोपशान्त्यै,
शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः ।।८०।।

इति श्रीशान्तिजिनस्तवनम्

श्रीकुन्थुजिनस्तवनम्

वसन्ततिलका छन्दः

कुन्थु-प्रभृत्यखिल-सत्त्व-दयैक-तानः,
कुन्थुर्जिनो ज्वर-जरा-मरणोपशान्त्यै ।
त्वं धर्मचक्रमिह वर्तयसिस्म भूत्यै,
भूत्वा पुरा क्षिति-पतीश्वर-चक्रपाणिः ।।८१।।

तृष्णार्चिषः परिदहन्ति न शान्तिरासा-
मिष्टेन्द्रियार्थ-विभवैः परिवृद्धिरेव ।
स्थित्यैव काय-परिताप-हरं निमित्त-
मित्यात्मवान् विषय-सौख्य-पराङ्मुखोऽभूत् ।।८२।।

बाह्यं तपः परम-दुश्चरमाचरंस्त्व-
माध्यात्मिकस्य तपसःपरिबृंहणार्थम् ।
ध्यानं निरस्य कलुष-द्वयमुत्तरस्मिन्,
ध्यान-द्वये ववृतिषेऽतिशयोपपन्ने ।।८३।।

हुत्वा स्व-कर्म-कटुक-प्रकृतीश्चतस्रो,
रत्नत्रयाऽतिशय-तेजसि जात-वीर्यः ।
बभ्राजिषे सकल-वेद-विधेर्विनेता,
व्यभ्रे यथा वियति दीप्त-रुचिर्विवस्वान् ।।८४।।

यस्मान् मुनीन्द्र ! तव लोकपितामहाद्या,
विद्या-विभूति-कणिकामपि नाऽऽप्नुवन्ति ।
तस्माद् भवन्तमजमप्रतिमेयमार्याः,
स्तुत्यं स्तुवन्ति सुधियः स्व-हितैक-तानाः ।।८५।।

इति श्रीकुन्थुजिनस्तवनम्

भगवदर-जिनस्तवनम्

पथ्यावक्त्रं छन्दः

गुण-स्तोकं सदुल्लङ्घ्य-तद्बहुत्व-कथा स्तुतिः ।
आनन्त्यात्ते गुणा वक्तुमशक्यास्त्वयि सा कथम् ।।८६।।

तथापि ते मुनीन्द्रस्य यतो नामापि कीर्तितम् ।
पुनाति पुण्य-कीर्तेर्नस्ततो ब्रूयाम किञ्चन ।।८७।।
लक्ष्मी-विभव-सर्वस्वं मुमुक्षोश्चक्र-लाञ्छनम् ।
साम्राज्यं सार्वभौमं ते जरत्तृणमिवाऽभवत् ।।८८।।
तव रूपस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वा तृप्तिमनापिवान् ।
द्व्यक्षः शक्रः सहस्राक्षो बभूव बहुविस्मयः ।।८९।।
मोहरूपो रिपुः पापः कषाय-भट-साधनः ।
दृष्टि-संपदुपेक्षाऽस्त्रैस्त्वया धीर ! पराजितः ।।९०।।
कन्दर्पस्योद्धरो दर्पस्त्रैलोक्य-विजयाऽर्जितः ।
ह्रेपयामास तं धीरे त्वयि प्रतिहतोदयः ।।९१।।
आयत्यां च तदात्वे च दुःख-योनिर्दुरुत्तरा ।
तृष्णा-नदी त्वयोत्तीर्णा विद्या-नावा विविक्तया ।।९२।।
अन्तकः क्रन्दको नृणां जन्म-ज्वर-सखा सदा ।
त्वामन्तकान्तकं प्राप्य व्यावृत्तः काम-कारतः ।।९३।।
भूषा-वेषाऽऽयुध-त्यागि विद्या-दम-दया-परम् ।
रूपमेव तवाचष्टे धीर ! दोष-विनिग्रहम् ।।९४।।
समन्ततोऽङ्ग-भासां ते परिवेषेण भूयसा ।
तमो बाह्यमपाकीर्णमध्यात्मध्यान-तेजसा ।।९५।।
सर्वज्ञ-ज्योतिषोद्भूतस्तावको महिमोदयः ।
कं न कुर्यात् प्रणम्रं ते सत्त्वं नाथ ! सचेतनम् ।।९६।।
तव वागमृतं श्रीमत् सर्वभाषा-स्वभावकम् ।
प्रीणयत्यमृतं यद्वत् प्राणिनो व्यापि संसदि ।।९७।।

अनेकान्तात्म-दृष्टिस्ते सती शून्यो विपर्ययः।
ततः सर्वं मृषोक्तं स्यात् तदयुक्तं स्व-घाततः ।।९८।।
ये पर-स्खलितोन्निद्राः स्व-दोषेभ-निमीलिनः।
तपस्विनस्ते किं कुर्युरपात्रं त्वन्मतश्रियः ।।९९।।
ते तं स्व-घातिनं दोषं शमीकर्तुमनीश्वराः।
त्वद्द्विषः स्वहनो बालास्तत्त्वाऽवक्तव्यतां श्रिताः ।।१००।।
सदेक-नित्य-वक्तव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः।
सर्वथेति प्रदुष्यन्ति पुष्यन्ति स्यादितीह ते ।।१०१।।
सर्वथा-नियम-त्यागी यथादृष्टमपेक्षकः।
स्याच्छब्दस्तावके न्याये नाऽन्येषामात्म-विद्विषाम् ।।१०२।।
अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः प्रमाण-नय-साधनः।
अनेकान्तः प्रमाणात् ते तदेकान्तोऽर्पितान्नयात् ।।१०३।।

अपरवक्त्र छन्द·

इति निरुपम-युक्ति-शासनः,
प्रिय-हित-योगगुणाऽनुशासनः।
अरजिन ! दम-तीर्थ-नायक-
स्त्वमिव सतां प्रतिबोधनाय कः ।।१०४।।
मतिगुण-विभवाऽनुरूपत-
स्त्वयि वरदाऽऽगम-दृष्टिरूपतः।
गुणकृशमपि किञ्चनोदितं,
मम भवताद् दुरिताऽसनोदितम् ।।१०५।।

इत्यर-जिनस्तवनम्

श्रीमल्लिजिनस्तवनम्

(सान्द्रपदंछन्दः) अथवा (श्रीछन्दः) अथवा (वनवासिकाछन्दः)

यस्य महर्षेः सकल-पदार्थ-
प्रत्यवबोधः समजनि साक्षात् ।
साऽमर-मर्त्यं जगदपि सर्वं,
प्राञ्जलि भूत्वा प्रणिपतति स्म ।।१०६।।

यस्य च मूर्तिः कनकमयीव,
स्वस्फुरदाऽऽभा-कृत-परिवेषा ।
वागपि तत्त्वं कथयितु-कामा,
स्यात्पद्-पूर्वा रमयति साधून् ।।१०७।।

यस्य पुरस्ताद् विगलित-माना,
न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते ।
भूरपि रम्या प्रतिपदमासी-
ज्जात-विकोशाऽम्बुज-मृदु-हासा ।।१०८।।

यस्य समन्ताज्जिन-शिशिरांशोः,
शिष्यक-साधु-ग्रह-विभवोऽभूत् ।
तीर्थमपि स्वं जनन-समुद्र-
त्रासित-सत्वोत्तरण-पथोऽग्रम् ।।१०९।।

यस्य च शुक्लं परम-तपोऽग्नि-
र्ध्यानमनन्तं दुरितमधाक्षीत् ।
तं जिनसिंहं कृत-करणीयं,
मल्लिमशल्यं शरणमितोऽस्मि ।।११०।।

इति श्रीमल्लिजिनस्तवनम्

श्रीमुनिसुव्रतजिनस्तवनम्

वैतालीयं छन्दः

अधिगत-मुनि-सुव्रत-स्थिति-
मुनि-वृषभो मुनिसुव्रतोऽनघः ।
मुनि-परिषदि निर्बभौ भवा-
नुडु-परिषत्परिवीत-सोमवत् ॥१११॥

परिणत-शिखि-कण्ठ-रागया,
कृत-मद-निग्रह-विग्रहाऽऽभया ।
तव जिन ! तपसः प्रसूतया,
ग्रह-परिवेष-रुचेव शोभितम् ॥११२॥

शशि-रुचि-शुचि-शुक्ल-लोहितं,
सुरभितरं विरजो निज वपुः ।
तव शिवमऽतिविस्मयं यते !
यदपि च वाङ्मनसीयमीहितम् ॥११३॥

स्थिति-जनन-निरोध-लक्षणं,
चरमचरं च जगत् प्रतिक्षणम् ।
इति जिन ! सकलज्ञ-लाञ्छन,
वचनमिदं वदतांवरस्य ते ॥११४॥

दुरित-मल-कलंकमष्टकं,
निरुपम-योगबलेन निर्दहन् ।
अभवदभव-सौख्यवान् भवान्,
भवतु ममाऽपि भवोपशान्तये ॥११५॥

इति श्रीमुनिसुव्रतजिनस्तवनम्

श्रीनमिजिनस्तवनम्

शिखरिणी छन्दः

स्तुतिः स्तोतुः साधोः कुशल-परिणामाय स तदा,
भवेन्मा वा स्तुत्यः फलमपि ततस्तस्य च सतः ।
किमेवं स्वाधीन्याज्जगति सुलभे श्रायस-पथे,
स्तुयान्न त्वां विद्वान् सततमभिपूज्यं नमिजिनम् ।।११६।।
त्वया धीमन् ! ब्रह्म-प्रणिधिमनसा जन्म-निगलं,
समूलं निर्भिन्नं त्वमसि विदुषां मोक्षपदवी ।
त्वयि ज्ञानज्योति-र्विभव-किरणैर्भाति भगव-
न्नभूवन् खद्योता इव शुचिरवावन्यमतयः ।।११७।।
विधेयं वार्यं चानुभयमुभयं मिश्रमपि तद्,
विशेषैः प्रत्येकं नियमविषयैश्चाऽपरिमितैः ।
सदाऽन्योऽन्यापेक्षैः सकल-भुवन-ज्येष्ठगुरुणा,
तवया गीतं तत्त्वं बहुनयविवक्षेतर-वशात् ।।११८।।
अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमं,
न सा तत्राऽऽरम्भोऽस्त्यणुरपि च यत्राऽऽश्रमविधौ ।
ततस्तत्सिद्ध्यर्थं परम-करुणो ग्रन्थमुभयं,
भवानेवाऽत्याक्षीन्न च विकृत-वेषोपधि-रतः ।।११९।।
वपुर्भूषा-वेष-व्यवधिरहितं शान्तकरणं,
यतस्ते संचेष्टे स्मर-शर-विषाऽऽतंक-विजयम् ।
विना भीमैः शस्त्रैरदय-हृदयाऽऽमर्ष-विलयं,
ततस्त्वं निर्मोहः शरणमसि नः शान्तिनिलयः ।।१२०।।

इति श्रीनमिजिनस्तवनम्

भगवदरिष्टनेमिजिनस्तवनम्

विषमजातावुग्दता-छन्दः

भगवानृषिः परम-योग-
दहन-हुत-कल्मषेन्धनः ।
ज्ञान-विपुल-किरणैः सकलं,
प्रतिबुद्ध्य बुद्ध-कमलायतेक्षणः ।।१२१।।

हरिवंश-केतुरनवद्य-
विनय-दम-तीर्थ-नायकः ।
शील-जलधिरभवो विभव-
स्त्वमरिष्ट-नेमि-जिन-कुञ्जरोऽजरः ।।१२२।।

त्रिदशेन्द्र-मौलि-मणि-रत्न-
किरण-विसरोपचुम्बितम् ।
पाद-युगलममलं भवतो,
विकसत्कुशेशय-दलाऽरुणोदरम् ।।१२३।।

नख-चन्द्र-रश्मि-कवचाऽति-
रुचिर-शिखराङ्गुलि-स्थलम् ।
स्वार्थ-नियत-मनसः सुधियः,
प्रणमन्ति मन्त्र-मुखरा महर्षयः ।।१२४।।

द्युतिमद्रथांग-रवि-बिम्ब-
किरण-जटिलांशु-मण्डलः ।
नील-जलद-जलराशि-वपुः,
सह बन्धुभिर्गरुडकेतुरीश्वरः ।।१२५।।

हलभृच्च ते स्वजनभक्ति-
मुदित-हृदयौ जनेश्वरौ ।
धर्म-विनय-रसिकौ सुतरां,
चरणाऽरविन्द-युगलं प्रणेमतुः ।।१२६।।

ककुदं भुवः खचरयोषि-
दुषित-शिखरैरलङ्कृतः ।
मेघ-पटल-परिवीत-तट-
स्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा ।।१२७।।

वहतीति तीर्थमृषिभिश्च,
सतत मभिगम्यतेऽद्य च ।
प्रीति-वितत-हृदयैः परितो,
भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः ।।१२८।।

बहिरन्तरप्युभयथा च,
करणमविघाति नार्थकृत् ।
नाथ ! युगपदखिलं च सदा,
त्वमिदं तलाऽमलकवद् विवेदिथ ।।१२९।।

अत एव ते बुधनुतस्य,
चरित-गुणमद्भुतोदयं ।
न्याय-विहितमवधार्य जिने,
त्वयि सुप्रसन्न-मनसः स्थिता वयम् ।।१३०।।

इत्यरिष्टनेमिजिनस्तवनम्

श्रीपार्श्वजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

तमाल-नीलैः सधनुस्तडिद्‌गणैः,
प्रकीर्ण-भीमाऽशनि-वायु-वृष्टिभिः ।
बलाहकैर्वैरि-वशैरुपद्रुतो,
महामना यो न चचाल योगतः ।।१३१।।

बृहत्फणा-मण्डल-मण्डपेन यं,
स्फुरत्तडित्पिंग-रुचोपसर्गिणम् ।
जुगूह नागो धरणो धरा-धरं,
विराग-सन्ध्या तडिदम्बुदो यथा ।।१३२।।

स्व-योग-निस्त्रिंश-निशात -धारया,
निशात्य यो दुर्जय-मोह-विद्विषम् ।
अवापदाऽऽर्हन्त्यमचिन्त्यमद्‌भुतं,
त्रिलोक-पूजाऽतिशयाऽऽस्पदं पदम् ।।१३३।।

यमीश्वरं वीक्ष्य विधूत-कल्मषं,
तपोधनास्तेऽपि तथा बुभूषवः ।
वनौकसः स्व-श्रम-वन्ध्य-बुद्धयः,
शमोपदेशं शरणं प्रपेदिरे ।१३४।।

स सत्यविद्यातपसां प्रणायकः,
समग्रधीरुग्रकुलाम्बरांशुमान् ।
मया सदा पार्श्वजिनः प्रणम्यते,
विलीन-मिथ्या-पथ-दृष्टि-विभ्रमः ।।१३५।।

इति श्रीपार्श्वजिनस्तवनम्

श्री वीरजिनस्तवनम्

स्कन्धक छन्दः अथवा आर्यागीति छन्दः

कीर्त्या भुवि भासि तया,
वीर ! त्वं गुणसमुच्छ्रया भासितया।
भासोडु-सभाऽऽसितया,
सोम इव व्योम्नि कुन्द-शोभा-सितया ।।१३६।।
तव जिन ! शासन-विभवो,
जयति कलावपि गुणानुशासन-विभवः ।
दोष-कशाऽसन-विभवः,
स्तुवन्ति चैनं प्रभाऽऽकृशाऽऽसन-विभवः ।।१३७।।
अनवद्यः स्याद्वादस्तव,
दृष्टेष्टाऽविरोधतः स्याद्वादः ।
इतरो न स्याद्वादो,
स द्वितय-विरोधान् मुनीश्वराऽस्याद्वादः ।।१३८।।
त्वमसि सुराऽसुर-महितो,
ग्रन्थिक-सत्त्वाऽऽशय-प्रणामाऽमहितः ।
लोकत्रय-परम-हितो-
ऽनावरणज्योतिरुज्ज्वलद्धाम-हितः ।।१३९।।
सभ्यानामभिरुचितं,
दधासि गुण-भूषणं श्रिया चारु-चितम् ।
मग्नं स्वस्यां रुचि तं,
जयसि च मृगलाञ्छनं स्व-कान्त्या रुचितम् ।।१४०।।

त्वं जिन ! गत-मद-माय-
स्तव भावानां मुमुक्षु कामद-मायः ।
श्रेयान् श्री-मद-माय-
स्त्वया समादेशि सप्रयाम-दमाऽऽयः ।।१४१।।

गिरिभित्त्यऽवदानवतः,
श्रीमत इव दन्तिनः स्रवद्दानवतः ।
तव शमवादानऽवतो,
गतमूर्जितमपगतप्रमा-दान-वतः ।।१४२।।

बहु-गुण-सम्पदऽसकलं,
परमतमपि मधुर-वचन-विन्यास-कलम् ।
नयभक्त्यवतंसक-लं,
तव देव ! मतं समन्तभद्रं सकलम् ।।१४३।।

इति श्रीवीरजिनस्तवनम्

श्री जिनसहस्रनाम स्तोत्रम्

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूत-वृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ।।१।।

नमस्ते जगतां पत्ये, लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते ।
विदांवर नमस्तुभ्यं, नमस्ते वदतांवर ।।२।।

कामशत्रुहणं देव, मानमन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमन्सुरेण्मौलि-भा-मालाऽभ्यर्चितक्रमम् ।।३।।

ध्यान-द्रुघण-निर्भिन्न, घन-घाति महातरुः ।
अनन्त-भव-सन्तान, जयादासीदनन्तजित् ।।४।।

त्रैलोक्य-निर्जयावाप्त-दुर्दर्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन ! मृत्युं जयो भवान् ॥५॥

विधूताशेष-संसार-बन्धनो भव्यबान्धवः ।
त्रिपुराऽरिस्त्वमेवासि, जन्म मृत्यु-जराऽन्तकृत् ॥६॥

त्रिकाल-विषयाऽशेष-तत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशितः ॥७॥

त्वामन्धकाऽन्तकं प्राहु, मोहान्धाऽसुर-मर्दनात् ।
अर्द्धं ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोऽस्यतः ॥८॥

शिवः शिवपदाध्यासाद्, दुरिताऽरि-हरो हरः ।
शंकरः कृतशं लोके, शंभवस्त्वं भवन्सुखे ॥९॥

वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरुगुणोदयैः ।
नाभेयो नाभि-सम्भूतेरिक्ष्वाकु-कुल-नन्दनः ॥१०॥

त्वमेकः पुरुषस्कन्धस्त्वं, द्वे लोकस्य लोचने ।
तवं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञान-धारकः ॥११॥

चतुःशरण-मांगल्य-मूर्त्तिस्त्वं चतुरस्त्रधीः ।
पञ्च-ब्रह्ममयो देव, पावनस्त्वं पुनीहि माम् ॥१२॥

स्वर्गाऽवतारिणे तुभ्यं, सद्योजातात्मने नमः ।
जन्माभिषेकवामाय, वामदेव नमोऽस्तु ते ॥१३॥

सन्निष्क्रान्तावघोराय, पदं परममीयुसे ।
केवलज्ञान-संसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ॥१४॥

पुरस्तत्पुरुषत्वेन विमुक्तपदभाजिने ।
नमस्तत्पुरुषाऽवस्थां, भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ।।१५।।

ज्ञानावरण-निर्ह्रासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ।।१६।।

नमो दर्शनमोहघ्ने, क्षायिकाऽमलदृष्टये ।
नमश्चारित्रमोहघ्ने, विरागाय महौजसे ।।१७।।

नमस्तेऽनन्तवीर्याय, नमोऽनन्तसुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्तलोकाय, लोकालोक-विलोकिने ।।१८।।

नमस्तेऽनन्तदानाय , नमस्तेऽनन्तलब्धये ।
नमस्तेऽनन्तभोगाय, नमोऽनन्तोपभोगिने ।।१९।।

नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परमपूताय नमस्ते परमर्षये ।।२०।।

नमः परमविद्याय नमः पर-मतच्छिदे।
नमः परम-तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ।।२१।।

नमः परम-रूपाय नमः परम-तेजसे ।
नमः परम-मार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ।।२२।।

परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः ।
नमः पारेतमः प्राप्तधाम्ने परतराऽऽत्मने ।।२३।।

नमः क्षीणकलंकाय क्षीणबन्ध ! नमोऽस्तु ते ।
नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ।।२४।।

नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान-सुखायाऽनिन्द्रियात्मने ।।२५।।

काय-बन्धन-निर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ।।२६।।

अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परम-योगीन्द्रवन्दिताङ्घ्रि द्वयाय ते ।।२७।।

नमः परम-विज्ञान ! नमः परम-संयम ! ।
नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ।।२८।।

नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशक-स्पृशे ।
नमो भव्येतराऽवस्था-व्यतीताय विमोक्षिणे ।।२९।।

संज्ञ्यसंज्ञिद्वयावस्था-व्यतिरिक्ताऽमलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ।।३०।।

अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताऽशेषदोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ।।३१।।

अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेवीतजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाऽक्षरात्मने ।।३२।।

अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावकागुणाः ।
त्वां नामस्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ।।३३।।

एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः ।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्त्रं पापशान्तये ।।३४।।

इति प्रस्तावना

प्रसिद्धाऽष्टसहस्रेद्धलक्षणं त्वां गिरांपतिम् ।
नाम्नामष्टसहस्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ।।१।।

श्रीमान् स्वयम्भूर्वृषभः शम्भवः शम्भुरात्मभूः ।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ।।२।।

विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्व तश्चक्षुरक्षरः ।
विश्वविद् विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ।।३।।

विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधा शाश्वतो विश्वतोमुखः ।।४।।

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृग् विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ।।५।।

जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः ।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरऽबन्धनः ।।६।।

युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः ।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ।।७।।

स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरऽयोनिजः ।
मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ।।८।।

प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वराऽर्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ।।९।।

शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ।।१०।।

सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ।।११।।
विभावसुरसम्भूष्णुः स्वयम्भूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ।।१२।।

इति श्रीमदादिशतम् ।।१।।

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ।।१।।
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत् केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ।।२।।
अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ।।३।।
निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोर्निरामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ।।४।।
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ।।५।।
वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभांको वृषोद्भवः ।।६।।
हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः ।
प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ।।७।।
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ।।८।।

सर्वादिः सर्वदृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित् सर्वलोकजित् ।।९।।

सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुत् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतो विश्वतःपादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ।।१०।।

सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ।।११।।

इति दिव्यादिशतम् ।।२।।

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठ. प्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ।।१।।
विश्वभृद् विश्वसृड् विश्वेड् विश्वभुग् विश्वनायकः ।
विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ।।२।।
विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् ।
विरागो विरतोऽसंगो विविक्तो वीतमत्सरः ।।३।।
विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मष. ।
वियोगो योगविद् विद्वान् विधाता सुविधिः सुधीः ।।४।।
क्षान्तिभाक्पृथ्वीमूर्तिः शान्तिभाक्सलिलात्मकः ।
वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ।।५।।
सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सूत्रामपूजितः ।
ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगममृतं हविः ।।६।।
व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचंल ।
सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ।।७।।

मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तगः ।
स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ।।८।।
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
नित्यो मृत्युञ्जयो मृत्युरमृतात्माऽमृतोद्भवः ।।९।।
ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेड् महाब्रह्मपदेश्वरः ।।१०।।
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ।।११।।

इति स्थविष्ठादिशतम् ।।३।।

महाऽशोकध्वजोऽशोकः कः स्त्रष्टा पद्मविष्टरः ।
पद्मेशः पद्मसम्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ।।१।।
पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ।।२।।
गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ।।३।।
गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ।।४।।
अगण्यः पुण्यधीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्य-निरोधकः ।।५।।
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ।।६।।

निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
निष्कलंको निरस्तैना निर्धूतागा निरास्रवः ।।७।।
विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिन्त्यवैभवः ।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभृत् सुनयतत्त्ववित् ।।८।।
एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ।।९।।
पिता पितामहः पाता पवित्र. पावनो गतिः ।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ।।१०।।
कवि· पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ।।११।।

इति महाशोकध्वजादिशतम् ।।४।।

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ।।१।।
सिद्धिदः सिद्धसंकल्प. सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।
बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ।।२।।
वेदांगो वेदविद् वेद्यो जातरूपो विदांवरः ।
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ।।३।।
अनादिनिधनोऽव्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः ।
युगादिकृद् युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ।।४।।
अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्रार्च्यो महेन्द्रमहितो महान् ।।५।।

उद्भव: कारणं कर्ता पारगो भवतारक: ।
अगाह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्य: परमेश्वर: ।।६।।
अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धि: समग्रधी: ।
प्राग्र्य: प्राग्रहरोऽभ्यग्र:प्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रज: ।।७।।
महातपा महातेजा महोदर्को महोदय: ।
महायशा महाधामा महासत्वो महाधृति: ।।८।।
महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्महाबल: ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युति: ।।९।।
महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महोदय· ।
महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकवि: ।।१०।।
महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपु: ।
महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुण: ।।११।।
महामहपति: प्राप्तमहाकल्याणपञ्चक: ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वर: ।।१२।।

इति श्रीवृक्षादिशतम् ।।५।।

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादम: ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामख: ।।१।।
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकान्तिधरोऽधिप: ।
महामैत्री महामेयो महोपायो महोमय: ।।२।।
महाकारुणिको मन्ता महामन्त्रो महायति: ।
महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपति: ।।३।।

महाध्वरधरो धुर्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदय: ।।४।।

महाक्लेशांकुश: शूरो महाभूतपतिर्गुरु: ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ।।५।।

महाभवाब्धिसंतारीर्महामोहाऽद्रिसूदन: ।
महागुणाकर: क्षान्तो महायोगीश्वर: शमी ।।६।।

महाध्यानपतिर्ध्यातामहाधर्मा महाव्रत: ।
महाकर्मारिहाऽऽमज्ञो महादेवो महेशिता ।।७।।

सर्वक्लेशापह: साधु. सर्वदोषहरो हर: ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकर: ।।८।।

सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्य: श्रुतात्मा विष्टरश्रवा: ।
दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वग: ।।९।।

प्रधानमात्मा प्रकृति: परम. परमोदय: ।
प्रक्षीणबन्ध: कामारि. क्षेमकृत्क्षेमशासन: ।।१०।।

प्रणव: प्रणय: प्राण: प्राणद: प्रणतेश्वर: ।
प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वर: ।।११।।

आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दन: ।
कामहा कामद: काम्य: कामधेनुररिञ्जय: ।।१२।।

इति महामुन्यादिशतम् ।।६।।

असंस्कृतसुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ।।१।।

अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ।।२।।

जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः ।
महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ।।३।।

नाभेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ।।४।।

सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ।।५।।

क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ।।६।।

सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ।।७।।

सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः सत्यपरायणः ।।८।।

स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान् दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ।।९।।

सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ।।१०।।

सुघोषः समुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ।।११।

इति असंस्कृतादिशतम् ।।७।।

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ।।१।।

नैकरूपो नयोत्तुंगो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ।।२।।

ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ।।३।।

लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता ।
मनोहारो मनोज्ञांगो धीरो गम्भीरशासनः ।।४।।

धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ।।५।।

अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः ।
सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ।।६।।

सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
अलेपो निष्कलंकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ।।७।।

वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मंगलं मलहानघः ।।८।।

अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ।।९।।

अध्यात्मगम्योऽगम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ।।१०।।

शंकरः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ।।११।।

त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ।।१२।।

इति बृहदादिशतम् ।।८।।

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः ।
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ।।१।।

पुराणः पुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगविस्तरः ।
आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ।।२।।

युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ।।३।।

कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ।।४।।

देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ।।५।।

चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ।।६।।

आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ।।७।।
तपनीयनिभस्तुंगो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
सन्ध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ।।८।।
निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ।।९।।
द्युम्नाभो जातरूपाभस्तप्तजाम्बूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ।।१०।।
शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ।।११।।
शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान्कामितप्रदः ।।१२।।
श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थिरः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ।।१३।।

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ।।१।।

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः ।
निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ।।१।।
तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ।।२।।
जगच्चूडामणिर्दीप्तः शंवान्विघ्नविनायकः ।
कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ।।३।।

अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरुकः प्रभामयः ।
लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ।।४।।

मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः ।
प्रशान्तरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ।।५।।

मूलकर्त्ताऽखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः ।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ।।६।।

प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् ।
सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ।।७।।

श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः ।
उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ।।८।।

लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ।।९।।

प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः ।
भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ।।१०।।

समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाऽऽशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ।।११।।

अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ।।१२।।

समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानंग कृपालुर्धर्मदेशकः ।।१३।।

शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ।।१४।।

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ।।१०।।

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ।।१।।

गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसन्दिग्धं त्वत्तोऽभिष्टफलं भजेत् ।।२।।

त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ।।३।।

त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगः स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ।।४।।

त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः ।
षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ।।५।।

दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।
दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ! ।।६।।

युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवन्तं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ।।७।।

इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
यः संपाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ।।८।।

ततः सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधीः ।
पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुकः ।।९।।

स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ।।१०।।

स्तुतिः पुण्यगुणोत्कीर्तिः स्तोता भव्यः प्रसन्नधीः ।
निष्ठितार्थो भवांस्तुस्यः फलं नैश्रेयसं सुखम् ।।११।।

यः स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुनः स्तोता स्वयं कस्यचित्,
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित्।
यो नेन्तॄन् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्यपक्षेक्षणः,
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य य गुरुर्देवः पुरुः पावनः ।।१२।।

तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानन्तरं,
प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनीनामिनम् ।
मानस्तम्भविलोकनानत्तजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं,
प्राप्ताचिन्त्यबहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवन्दामहे ।।१३।।

इति श्रीभगवज्जिनसहस्त्रनामस्तोत्रं समाप्तम् ।

तत्त्वार्थसूत्रम्

[श्रीउमास्वामी आचार्य विरचितम्]

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ।।

त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्क नव-पद-सहितं जीव-षट्काय-लेश्या ,
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवन-महितै प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ,
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान य. स वै शद्धदृष्टि. ।।१।।

सिद्धे जयप्पसिद्धे चउव्विहाराहणाफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ।।२।।

उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ।।३।।

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष-मार्गः ।।१।। तत्त्वार्थ-श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ।।२।। तन्निसर्गादधिगमाद्वा ।।३।। जीवजीवास्त्रव-बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षस्तत्त्वम् ।।४।। नाम-स्थापना - द्रव्य - भावतस्तन्न्यासः ।।५।। प्रमाण-नयैरधिगमः।।६।। निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-विधानतः ।।७।। सत्संख्या - क्षेत्र - स्पर्शन - कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ।।८।। मति-श्रुतावधि-मन:पर्यय-केवलानि ज्ञानम् ।।९।। तत्प्रमाणे ।।१०।। आद्ये परोक्षम् ।।११।। प्रत्यक्षमन्यत् ।।१२।। मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ।।१३।। तदिन्द्रियानिन्द्रिय-निमित्तम् ।।१४।। अवग्रहेहावाय-धारणाः ।।१५।। बहु-बहुविध-क्षिप्रानिः-

सृतानुक्त-ध्रुवाणां सेतराणाम् ।।१६।। अर्थस्य ।।१७।। व्यञ्जनस्यावग्रहः ।।१८।। न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ।।१९।। श्रुतं मति-पूर्वं द्व्यनेक-द्वादश-भेदम् ।।२०।। भव-प्रत्ययोऽवधिर्देव-नारकाणाम् ।।२१।। क्षयोपशम-निमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ।।२२।। ऋजु-विपुलमती मनः-पर्ययः ।।२३।। विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ।।२४।। विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधि-मनःपर्यययोः ।।२५।। मति-श्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्व-पर्यायेषु ।।२६।। रूपिष्ववधेः ।।२७।। तदनन्तभागे-मनःपर्ययस्य ।।२८।। सर्व-द्रव्य-पर्यायेषु केवलस्य ।।२९।। एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना-चतुर्भ्यः ।।३०।। मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ।।३१।। सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ।।३२।। नैगम-संग्रह-व्यवहारर्जुसूत्रशब्द-समभिरूढैवंभूता नयाः।।३३।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

औपशमिक-क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वत्त्व-मौदयिक-पारिणामिकौ च ।।१।। द्वि-नवाष्टा-दशैकविंशति-त्रि-भेदा यथाक्रमम् ।।२।। सम्यक्त्व-चारित्रे ।।३।। ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च ।।४।। ज्ञानाऽज्ञानदर्शन लब्धयश्चतुस्त्रित्रि-पञ्च भेदाः सम्यक्त्व-चारित्र-संयमासंयमाश्च ।।५।। गति-कषाय-लिंग-मिथ्यादर्शनाज्ञाना-संयतासिद्ध-लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैक-षड्भेदाः ।।६।। जीव-भव्या-भव्यत्वानि च ।।७।। उपयोगो

लक्षणम् ।।८।। स द्विविधोऽष्ट-चतुर्भेदः ।।९।। संसारिणो मुक्ताश्च ।।१०।। समनस्कामनस्काः ।।११।। संसारिणस्त्रस-स्थावराः ।।१२।। पृथिव्यपतेजोवायु-वनस्पतयः स्थावराः ।।१३।। द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ।।१४।। पञ्चेन्द्रियाणि ।।१५।। द्विविधानि ।।१६।। निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ।।१७।। लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ।।१८।। स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः-श्रोत्राणि ।।१९।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्तदर्थाः ।।२०।। श्रुतमनिन्द्रियस्य ।।२१।। वनस्पत्यन्तानामेकम् ।।२२।। कृमिपिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीनामेकैक-वृद्धानि ।।२३।। संज्ञिनः समनस्काः ।।२४।। विग्रह-गतौ कर्म-योगः ।।२५।। अनुश्रेणी गतिः ।।२६।। अविग्रहा जीवस्य ।।२७।। विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ।।२८।। एकसमयाविग्रहा ।।२९।। एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ।।३०।। संमूर्च्छन-गर्भोपपादा जन्म ।।३१।। सचित्त-शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ।।३२।। जरायु-जाण्डज पोताना गर्भः ।।३३।। देव-नारकाणा-मुपपादः ।।३४।। शेषाणां संमूर्च्छनम् ।।३५।। औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि ।।३६।। परं परं सूक्ष्मम् ।।३७।। प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ।।३८।। अनन्त-गुणे परे ।।३९।। अप्रतीघाते ।।४०।। अनादिसम्बन्धे च ।।४१।। सर्वस्य ।।४२।। तदादीनि भाज्यानि युग पदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ।।४३।। निरुपभोगमन्त्यम् ।।४४।। गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यम्

।।४५।। औपपादिकं वैक्रियिकम् ।।४६।। लब्धि-प्रत्ययं च ।।४७।। तैजसमपि ।।४८।। शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ।।४९।। नारक-सम्मूर्छिनो नपुंसकानि ।।५०।। न देवाः ।।५१।। शेषास्त्रिवेदाः ।।५२।। औपपादिक-चरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ।।५३।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

रत्न-शर्करा-बालुका-पंक-धूम-तमो-महातमः-प्रभा-भूमयो घनाम्बुवाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ।।१।। तासु त्रिंशत्पञ्चविंशति-पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चोनैकनरक-शतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ।।२।। नारका नित्याशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः ।।३।। परस्परोदीरित-दुःखाः।।४।। संक्लिष्टाऽसुरोदीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ।।५।। तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ।।६।। जम्बूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीप-समुद्राः ।।७।। द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व-परिक्षेपिणो वलयाकृतयः ।।८।। तन्मध्ये मेरु-नाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्र-विषकम्भो जम्बूद्वीपः ।।९।। भरत-हैमवत- हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ।।१०।। तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनील-रुक्मि शिखरिणो वर्षधर-पर्वताः ।।११।। हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः ।।१२।।

मणिविचित्र-पार्श्वा उपरिमूले च तुल्य-विस्तारा: ।।१३।। पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केशरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ।।१४।। प्रथमो योजन-सहस्रायाम-स्तदर्द्धविषकम्भो ह्रदः ।।१५।। दश-योजनावगाहः ।।१६।। तन्मध्ये योजन पुष्करम् ।।१७।। तद्द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ।।१८।। तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक-परिषत्काः ।।१९।। गंगा-सिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्ण-रूप्य-कूला-रक्ता-रक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ।।२०।। द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ।।२१।। शेषास्त्वपरगाः ।।२२।। चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता गंगा-सिन्ध्वादयो नद्य. ।।२३।। भरतः षड्विंशति-पञ्चयोजनशत-विस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ।।२४।। तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ताः ।।२५।। उत्तरा-दक्षिण-तुल्याः ।।२६।। भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ।।२७।। ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ।।२८।। एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारि-वर्षक-दैवकुरवकाः ।।२९।। तथोत्तराः ।।३०।। विदेहेषु संख्येय-कालाः ।।३१।। भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति-शत-भागः ।।३२।। द्विर्धातकीखण्डे ।।३३।। पुष्करार्द्धे च ।।३४।। प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ।।३५।। आर्याम्लेच्छाश्च ।।३६।। भरतैरावत-विदेहाः

कर्मभूमयोऽन्यत्रदेवकुरूत्तर-कुरुभ्यः ।।३७।। नृस्थिती पराऽवरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ।।३८।। तिर्यग्योनिजानां च ।।३९।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ।।३।।

देवाश्चतुर्णिकायाः ।।१।। आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ।।२।। दशाष्ट-पञ्च द्वादश विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ।।३।। इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्षलोक-पालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकशः ।।४।। त्रायस्त्रिंश-लोकपाल-वर्ज्या व्यन्तर-ज्योतिष्काः ।।५।। पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ।।६।। काय-प्रावीचारा आ ऐशानात् ।।७।। शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनः-प्रवीचाराः ।।८।। परेऽप्रवीचाराः ।।९।। भवनवासिनोऽसुर-नाग-विद्युत्सुपर्णाग्निवात-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ।।१०।। व्यन्तराः किन्नर-किम्पुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ।।११।। ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ।।१२।। मेरु-प्रदक्षिणा नित्य-गतयो नृ-लोके ।।१३।। तत्कृतः काल-विभागः ।।१४।। बहिरवस्थिताः ।।१५।। वैमानिकाः ।।१६।। कल्पोपपन्ना. कल्पातीताश्च ।।१७।। उपर्युपरि ।।१८।। सौधर्मै-शान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर - लान्तव - कापिष्ठ - शुक्र - महाशुक्र - शतार-सहस्त्रारेष्वानत-प्राण-तयो-रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ।।१९।। स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धीन्द्रियावधि-विषय-

तोऽधिकाः ।।२०।। गतिशरीर-परिग्रहाऽभिमानतो हीनाः ।।२१।। पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या-द्वि-त्रि-शेषेषु ।।२२।। प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ।।२३।। ब्रह्म-लोकालया लौकान्तिकाः ।।२४।। सारस्वतादित्याह्न्य-रुण-गर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ।।२५।। विजयादिषु द्वि-चरमाः ।।२६।। औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ।।२७।। स्थितिरसुर-नाग सुपर्ण-द्वीपशेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध-हीन-मिताः ।।२८।। सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ।।२९।। सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ।।३०।। त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ।।३१।। आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ।।३२।। अपरा पल्योपममधिकम् ।।३३।। परतः परतः पूर्वा पूर्वाऽनन्तरा ।।३४।। नारकाणां च द्वितीयादिषु ।।३५।। दश-वर्ष-सहस्राणि प्रथमायाम् ।।३६।। भवनेषु च ।।३७।। व्यन्तराणां च ।।३८।। परा पल्योपमयधिकम् ।।३९।। ज्योतिष्काणां च ।।४०।। तदष्ट-भोगाऽपरा ।।४१।। ज्योतिष्कानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ।।४२।।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

अजीव-काया धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः ।।१।। द्रव्याणि ।।२।। जीवाश्च ।।३।। नित्याऽवस्थितान्यरूपाणि ।।४।। रूपिणः पुद्गलाः ।।५।। आ आकाशादेक-द्रव्याणि ।।६।।

निष्क्रियाणि च ।।७।। असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ।।८।। आकाशस्यानन्ताः ।।९।। संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम्।।१०।। नाणोः ।।११।। लोकाकाशेऽवगाहः ।१२।। धर्माऽधर्मयोः कृत्स्ने ।।१३।। एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ।।१४।। असंख्येय-भागादिषु जीवानाम् ।।१५।। प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ।।१६।। गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ।।१७।। आकाशस्यावगाहः ।।१८।। शरीर-वाङ्-मन-प्राणापानाः-पुद्गलानाम् ।।१९।। सुख-दुःख जीवित-मरणोपग्रहाश्च ।।२०।। परस्परोपग्रहो जीवानाम् ।।२१।। वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वाऽपरत्वे च कालस्य ।।२२।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः ।।२३।। शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ।।२४।। अणवः स्कन्धाश्च ।।२५।। भेद-सघातेभ्य उत्पद्यन्ते ।।२६।। भेदादणुः ।।२७।। भेद-संघाताभ्यां चाक्षुषः ।।२८।। सद् द्रव्य-लक्षणम् ।।२९।। उत्पाद-व्ययध्रौव्य-युक्तं सत् ।।३०।। तद्भावाऽव्ययं नित्यम् ।।३१।। अर्पिताऽनर्पितसिद्धेः ।।३२।। स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बन्धः ।।३३।। न जघन्य-गुणानाम् ।।३४।। गुण-साम्ये सदृशानाम् ।।३५।। द्व्यधिकादि-गुणानां तु ।।३६।। बन्धेऽधिकौ परिणामिकौ च ।।३७।। गुण-पर्ययवद् द्रव्यम् ।।३८।। कालश्च ।।३९।।

सोऽनन्तसमयः ।।४०।। द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ।।४१।। तद्भावः परिणाम· ।।४२।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्याय. ।।५।।

काय-वाङ्-मनः-कर्म योगः ।।१।। स आस्रवः ।।२।। शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ।।३।। सकषायाऽकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ।।४।। इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः-पञ्च-पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ।।५।। तीव्र-मन्द-ज्ञाताऽज्ञात-भावाऽधिकरण-वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ।।६।। अधिकरणं जीवाजीवाः ।।७।। आद्यं सरम्भसमारम्भारम्भ-योग-कृत-कारिताऽनुमत-कषायविशेषै-स्त्रिस्त्रिस्त्रिचतुश्चैकशः ।।८।। निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा-द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदा. परम् ।।९।। तत्प्रदोषनिह्नव-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयोः ।।१०।। दु.ख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवना-न्यात्म-परोभय-स्थान्यसद्वेद्यस्य ।।११।। भूतव्रत्यनुकम्पा-दान-सराग-संयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ।।१२।। केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवाऽवर्णवादो दर्शनमोहस्य ।।१३।। कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ।।१४।। बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्याऽऽयुषः ।।१५।। माया तैर्यग्योनस्य ।।१६।। अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ।।१७।। स्वभाव-मार्दवं च ।।१८।। निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ।।१९।। सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ।।२०।।

सम्यक्त्वं च ।।२१।। योगवक्रता विसंवादनं चाऽशुभस्य नाम्नः ।।२२।। तद्विपरीतं शुभस्य ।।२३।। दर्शनविशुद्धि-र्विनयसंपन्नता शील-व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्याग-तपसी साधु-समाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्तिराऽऽवश्यकाऽपरिहाणिर्मार्ग-प्रभावना प्रवचन-वत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ।।२४।। परात्म-निन्दा-प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ।।२५।। तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ।।२६।। विघ्नकरणमन्तरायस्य ।।२७।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्याय. ।।६।।

हिंसाऽनृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ।।१।। देशसर्वतोऽणु-महती ।।२।। तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ।।३।। वाङ्मनोगुप्तीर्याऽऽदाननिक्षेपण-समित्यालोकित-पानभोजनानि पञ्च ।।४।। क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीचि-भाषणं च पञ्च ।।५।। शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण भैक्ष्यशुद्धिसधर्माविसंवादाः पञ्च ।।६।। स्त्रीरागकथा-श्रवण-तन्मनोहरांगनिरीक्षण-पूर्वरतानुस्मरण-वृष्येष्ट-रस-स्वशरीर-संस्कार-त्यागाः पञ्च ।।७।। मनोज्ञाऽमनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पञ्च ।।८।। हिंसादिष्विहामुत्राऽपायाऽवद्यदर्शनम् ।।९।। दुःखमेव वा ।।१०।। मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थानि च सत्त्वगुणाधिक-क्लिश्यमानाऽविनयेषु ।।११।।

जगत्कायस्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम् ।।१२।।
प्रमत्तयोगात्प्राण-व्यपरोपणं हिंसा ।।१३।। असदभिधानमनृतम्
।।१४।। अदत्तादानं स्तेयम् ।।१५।। मैथुनम-ब्रह्म ।।१६।।
मूर्च्छा परिग्रहः ।।१७।। निशल्यो व्रती ।।१८।। अगार्यनगारश्च
।।१९।। अणुव्रतोऽगारी ।।२०।। दिग्देशाऽनर्थदण्डविरति-
सामायिक प्रोषधोपवासोप-परिभोगपरिमाणाऽतिथि-सामायिक-
संविभाग व्रत-संपन्नश्च ।।२१।। मारणान्तिकीं सल्लेखनां
जोषिता ।।२२।। शंका-कांक्षा-विचिकित्सान्यदृष्टि-
प्रशंसासंस्तवाःसम्यग्दृष्टेरतीचाराः ।।२३।। व्रत-शीलेषु पञ्च
पञ्च यथाक्रमम् ।।२४।। बन्ध-वधच्छेदातिभारा-
रोपणाऽन्नपाननिरोधाः ।।२५।। मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान-
कूटलेखक्रिया-न्यासापहार-साकार-मन्त्रभेदाः ।।२६।।
स्तेनप्रयोग-तदाहृताऽऽदान-विरुद्ध-राज्यातिक्रम-
हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपक-व्यवहाराः ।।२७।।
परविवाहकरणेत्वरिका-परिगृहीताऽपरिगृहीता-गमनाऽनंग-
क्रीडा-कामतीव्राभिनिवेशाः ।।२८।। क्षेत्रवास्तु-
हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य-दासीदास-कुप्यप्रमाणाति क्रमाः
।।२९।। ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्र वृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि
।।३०।। आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्गलक्षेपाः
।।३१।। कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोग
परिभोगाऽऽनर्थक्यानि ।।३२।। योग-दुःप्रणिधानाऽनादर-
स्मृत्यनुपस्थानानि ।।३३।। अप्रत्यवेक्षिताऽप्रमार्जितोत्सर्गादान-

संस्तरोपक्रमणाऽना-दर-स्मृत्यनुपस्थानानि ।।३४।।
सचित्तसम्बन्ध-संमिश्राभि-षव-दुःपक्वाहाराः ।।३५।।
सचित्तनिक्षेपापिधान-पर-व्यपदेश-मात्सर्य्य-कालाऽतिक्रमाः ।।३६।। जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ।।३७।। अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ।।३८।। विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्तद्विशेषः ।।३९।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ।।७।।

मिथ्यादर्शनाऽविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्ध-हेतवः ।।१।। सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानाऽऽदत्ते स बन्धः ।।२।। प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास्तद्विधयः ।।३।। आद्यो ज्ञानदर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः ।।४।। पञ्च-नव-द्व्यष्टा-विंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदा यथाक्रमम् ।।५।। मतिश्रुता-वधिमनःपर्यय-केवलानाम् ।।६।। चक्षु-रचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ।।७।। सदसद्वेद्ये ।।८।। दर्शन-चारित्र-मोहनीया-कषाय-कषायवेदनीयाख्या-स्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषायकषायौ हास्य-रत्य-रति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसक-वेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलन-विकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः ।।९।। नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ।।१०।। गति-जाति-शरीरांगोपांग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-

संहनन - स्पर्श - रस - गन्ध - वर्णानुपूर्व्यागुरु - लघू - पघात - परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतयः प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यशःकीर्ति-सेतरीणि तीर्थकरत्वं च ।।११।। उच्चैर्नीचैश्च ।।१२।। दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणाम् ।।१३।। आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरो-पम-कोटीकोट्यः परा स्थितिः ।।१४।। सप्ततिर्मोहनीयस्य ।।१५।। विंशतिर्नाम-गोत्रयोः ।।१६।। त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुषः ।।१७।। अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य ।।१८।। नाम-गोत्रयोरष्टौ ।।१९।। शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ।।२०।। विपाकोऽनुभवः ।।२१।। स यथानाम ।।२२।। ततश्च निर्जरा ।।२३।। नाम-प्रत्ययाः सर्वतो योग-विशेषात् सूक्ष्मैकक्षेत्रा - वगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनन्तानन्त-प्रदेशाः ।।२४।। सद्वेद्य-शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ।।२५।। अतोऽन्यत्पापम् ।।२६।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोध्याय ।।८।।

आस्त्रव-निरोधः संवरः ।।१।। स गुप्ति-समिति-धर्मा-नुप्रेक्षापरीषहजय-चारित्रैः ।।२।। तपसा निर्जरा च ।।३।। सम्यग्योगनिग्रहो गुप्तिः ।।४।। ईर्याभाषैषणादान-निक्षेपोत्सर्गाः समितयः ।।५।। उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्मः ।।६।। अनित्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्त्रवसंवर-निर्जरा-लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षाः ।।७।।

मार्गाच्यवन-निर्जरार्थ परिषोढव्याः परीषहाः ।।८।। क्षुत्पिपासा-शीतोष्णदंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्या-क्रोशवध-याचनालाभ-रोग-तृण-स्पर्श-मल-सत्कार-पुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानाऽदर्शनानि ।।९।। सूक्ष्मसाम्पराय-छद्मस्थवीत-रागयोश्चतुर्दश ।।१०।। एकादश जिने ।।११।। बादर-साम्पराये सर्वे ।।१२।। ज्ञानावरणे प्रज्ञाऽज्ञाने ।।१३।। दर्शनमोहान्तराययोर-दर्शनाऽलाभौ ।।१४।। चारित्रमोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्याऽऽक्रोश-याचना-सत्कार-पुरस्काराः ।।१५।। वेदनीये शेषाः ।।१६।। एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नै-कोनविंशतेः ।।१७।। सामायिकच्छेदोपस्थापना परिहार-विशुद्धि-सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम् ।।१८।। अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रस-परित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं तपः ।।१९।। प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तरम् ।।२०।। नवचतुर्दश-पञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ।।२१।। आलोचन-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-व्युत्सर्ग-तपश्छेद-परिहारोपस्थापनाः ।।२२।। ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः ।।२३।। आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष-ग्लान-गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम् ।।२४।। वाचना-पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ।।२५।। बाह्याभ्यन्तरोमध्योः ।।२६।। उत्तम-संहननस्यैकाग्र-चिन्ता-निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ।।२७।। आर्त्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि ।।२८।। परे मोक्ष-हेतू ।।२९।।

आर्त्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति-समन्वाहारः ।।३०।। विपरीतं मनोज्ञस्य ।।३१।। वेदनायाश्च ।।३२।। निदानं च ।।३३।। तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ।।३४।। हिंसानृत-स्तेय-विषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-देश-विरतयोः ।।३५।। आज्ञाऽपाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ।।३६।। शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ।।३७।। परे केवलिनः ।।३८।। पृथक्त्वैकत्ववितर्क-सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरत-क्रियानिवर्तीनि ।।३९।। त्र्येकयोग-काययोगायोगानाम् ।।४०।। एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे ।।४१।। अवीचारं द्वितीयम् ।।४२।। वितर्कः श्रुतम् ।।४३।। वीचारोऽर्थ-व्यञ्जन योगसङ्क्रान्तिः ।।४४।। सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्त-वियोजक-दर्शनमोह-क्षपकोपशमकोप-शांतमोह-क्षपक-क्षीणमोह जिनाः क्रमशोऽसंख्येय-गुण-निर्जराः ।।४५।। पुलाक-बकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ।।४६।। संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिंग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः ।।४७।।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमोध्याय. ।।९।।

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम् ।।१।। बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ।।२।। औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ।।३।। अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ।।४।। तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्याऽऽ-

लोकान्तात् ।।५।। पूर्वप्रयोगाद-संगत्वाद् बन्धच्छेदात् तथा-गतिपरिणामाच्च ।।६।। आविद्धकुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपाऽ-लांबुवदेरण्ड-बीज-वदग्निशिखावच्च ।।७।। धर्मास्तिकाया-भावात् ।।८।। क्षेत्र-काल-गति-लिंग-तीर्थ-चारित्र-प्रत्येकबुद्धबोधित-ज्ञानाऽवगाहनान्तर-संख्याल्पबहुत्वतः साध्याः ।।९।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ।।१०।।

अक्षर-मात्र-पद-स्वरहीनं, व्यञ्जन-सन्धि-विवर्जित-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे।।१।।

दशाध्याय-परिच्छिन्ने, तत्त्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य, भाषितं मुनिपुङ्गवैः ।।२।।

तत्त्वार्थ-सूत्र-कर्त्तारं, गृद्धपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्र-संजातमुमास्वामि-मुनीश्वरम् ।।३।।

जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अजरामरं ठाणं ।।४।।

तवयरणं वयधरण, संजमसरणं च जीव-दया-करणं ।
अंते समाहिमरणं, चउविहदुक्खं णिवारेई ।।५।।

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम मोक्षशास्त्रं समाप्तम्

निर्वाणकाण्ड

[प्राकृत]

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज-जिणणाहो ।
उज्जंते णेमि-जिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ।।१।।

वीसं तु जिण-वरिंदा अमरासुर-वंदिदा धुद-किलेसा ।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।२।।

वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवर-णयरे ।
आहुट्ठ य कोडीओ णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।३।।

णेमि-सामी पज्जुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
बाहत्तरि-कोडीओ उज्जते सत्त-सया वंदे ।।४।।

राम-सुआ बिण्णि जणा लाड-णरिंदाण पंच कोडीओ ।
पावाए गिरि-सिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।५।।

पंडु-सुआ तिण्णि जणा दविड-णरिंदाण अट्ठ-कोडिओ ।
सत्तुंजय-गिरिसिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।६।।

सत्तेव य बलभद्दा जदुव-णरिंदाण अट्ठ-कोडीओ ।
गजपंथे गिरि-सिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।७।।

राम-हणू सुग्गीवो गवय गवक्खो य णील महणीलो ।
णवणवदी-कोडीओ तुंगीगिरि-णिव्वुदे वंदे ।।८।।

णगाणगकुमारा विक्खा-पचद्ध-कोडि-रिसिसहिया ।
सुवण्णगिरि-मत्थयत्थे णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।९।।

दहमुह-रायस्स सुआ कोडी-पंचद्ध-मुणिवरे सहिया।
रेवा-उहयम्मि तीरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१०।।

रेवा-णइए तीरे पच्छिम-भायम्मि सिद्धवर-कूडे।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठ य कोडि णिव्वुदे वंदे ।।११।।

बडवाणी-वर-णयरे दक्खिण-भायम्मि चूलगिरि-सिहरे।
इंदजिय-कुंभयण्णो णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१२।।

पावागिरि-वर-सिहरे सुवण्णभद्दाइ मुणिवरा चउरो।
चेलणा-णई तडग्गे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१३।।

फलहोडी-वर-गामे पच्छिम-भायम्मि दोणगिरि-सिहरे।
गुरुदत्ताइ-मुणिंदा णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१४।।

णायकुमार-मुणिंदो बालि महाबालि चेव अज्झेया।
अट्ठावय-गिरि-सिहरे-णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१५।।

अच्चलपुर-वर-णयरे ईसाणभाए मेढ्गिरि सिहरे।
आहुट्ठ य कोडीओ णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१६।।

बंसत्थलम्मिणयरे पच्छिम-भायम्मि कुंथुगिरि-सिहरे।
कुल-देसभूसण-मुणी णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१७।।

जसरह-रायस्स सुआ पंचसया कलिंग-देसम्मि।
कोडिसिलाए कोडि-मुणी णिव्वाण-गया णमो तेसिं।।१८।।

पासस्स समवसरणे गुरुदत्त-वरदत्त-पंच-रिसि-पमुहा।
रेस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१९।।

जे जिणु जित्थु तत्था जे दु गया णिव्वुदिं परमं ।
ते वंदामि य णिच्चं तिरयण-सुद्धो णमस्सामि ।।२०।।

सेसाणं तु रिसीणं णिव्वाणं जम्मि जम्मि ठाणम्मि ।
ते हं वंदे सव्वे दुक्खक्खय-कारणट्ठाए ।।२१।।

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे ।
अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ।।१।।

बाहूबलि तह वंदमि पोदनपुर-हस्तिनापुरे वंदे ।
संती कुन्थ व अरिहो वाराणसिए सुपास पासं च ।।२।।

महुराए अहिखित्ते वीरं पासं तहेव वंदामि ।
जंबु-मुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तो वि जंबुवणगहणे ।।३।।

पंचकल्लाणठाणइ जाणि वि संजाद-मच्चलोयम्मि ।
मण वयण-काय-सुद्धो सव्वे सिरसा णमस्सामि ।।४।।

अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवड-कुण्डली वंदे ।
पासं सिरिपुरि वंदमि लोहागिरि संखदीवम्मि ।।५।।

गोम्मटदेवं वंदमि पंचसयं धणुह देह उच्चं तं ।
देवा कुणंति वुट्ठी केसर कुसुमाण तस्स उवरिम्मि ।।६।।

णिव्वाण-ठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसये सहिया ।
संजाद-मिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ।।७।।

जो जण पठइ तियाणं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए ।
भुंजदि णर-सुर-सुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ।।८।।

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेडं इमम्मि अवसप्पिणीये, चउत्थसमयस्स पच्छिमे भाए, आउट्ठमासहीणे, वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि । पावाए णयरीए, कत्तियमासस्स किण्हचउदसिए । रत्तीए सादीए णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो तिसुवि लोएसु, भवणवासिय-वाण-विंतर जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण णिच्चकालं, अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति, परिणिव्वाण-महाकल्लाण-पुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

इति श्री निर्वाणकाण्ड [प्राकृतभाषामय]

वीतराग स्तोत्र

शिवं शुद्ध बुद्धं परं विश्वनाथं,
न देवो न बंधुर्न कर्मा न कर्त्ता ।
न अंगं न संगं न स्वेच्छा न कायं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।१।।
न बंधो न मोक्षो न रागादिदोषः,
न योगं न भोगं न व्याधिर्न शोकं ।

न कोपं न मानं न माया न लोभं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।२।।
न हस्तौ न पादौ न घ्राणं न जिह्वा,
न चक्षुर्न कर्णं न वक्त्रं न निद्रा ।
न स्वामी न भृत्यः न देवो न मर्त्यः,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।३।।
न जन्म न मृत्यु न मोहं न चिंता,
न क्षुद्रो न भीतो न कार्श्यं न तंद्रा ।
न स्वेदं न खेदं न वर्णं न मुद्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।४।।
त्रिदण्डे त्रिखण्डे हरे विश्वनाथं,
हृषीकेश विध्वस्त कर्मादिजालं ।
न पुण्यं न पापं न चाक्षादि गात्रं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।५।।
न बालो न वृद्धो न तुच्छो न मूढो,
न स्वेदं न भेदं न मूर्तिर्न स्नेहः ।
न कृष्णं न शुक्लं न मोहं न तन्द्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।६।।
न आद्यं न मध्यं न अंतं न मन्या,
न द्रव्यं न क्षेत्रं न कालो न भावः ।
न शिष्यो गुरूर्नापि हीनं न दीनं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।७।।

इदं ज्ञानरूपं स्वयं तत्त्व वेदी,
न पूर्ण न शून्यं न चैत्यंस्वरूपी ।
न चान्यो न भिन्नं न परमार्थमेकम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।८।।

आत्माराम गुणाकरं गुणनिधिं चैतन्य रत्नाकरं,
सर्वे भूतगता गते सुख दुःखे ज्ञाते त्वया सर्वगे ।
त्रैलोक्याधिपते स्वयं स्वमनसा ध्यायंति योगीश्वराः,
वंदे तं हरिवंश हर्ष हृदयं श्रीमान् हृदाभ्युद्यताम् ।।९।।

परमानन्द स्तोत्र

परमानन्दसंयुक्तं निर्विकारं निरामयम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यवस्थितम् ।।१।।

अनंतसुखसम्पन्नं, ज्ञानामृतपयोधरम् ।
अनंतवीर्यसम्पन्नं, दर्शनं परमात्मनः ।।२।।

निर्विकारं निराबाधं, सर्वसंगविवर्जितम् ।
परमानन्दसम्पन्नं, शुद्धचैतन्यलक्षणम् ।।३।।

उत्तमा स्वात्मचिंतास्यान्मोहचिंता च मध्यमा ।
अधमा कामचिंता स्यात्, परचिंताऽधमाधमा ।।४।।

निर्विकल्पसमुत्पन्नं ज्ञानमेव सुधारसम् ।
विवेकमंजुलिं कृत्वा, तत्पिबंति तपस्विनः ।।५।।

सदानन्दमयं जीवं, यो जानाति स पण्डितः ।
स सेवते निजात्मानं, परमानन्दकारणम् ।।६।।

नलिन्यां च यथा नीरं, भिन्नं तिष्ठति सर्वदा ।
अयमात्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति निर्मलः ।।७।।

द्रव्यकर्ममलैर्मुक्तं, भावकर्मविवर्जितम् ।
नोकर्मरहितं विद्धि, निश्चयेन चिदात्मनः ।।८।।

आनन्दं ब्रह्मणोरूपं, निजदेहे व्यवस्थितम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, जात्यन्धा इव भास्करम् ।।९।।

तद्ध्यानं क्रियते भव्यै, र्मनोयेन विलीयते ।
तत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, चिच्चमत्कारलक्षणम् ।।१०।।

ये ध्यानशीला मुनयः प्रधाना-
स्तेदुःखहीना नियमाद्भवन्ति ।
सम्प्राप्य शीघ्रं परमात्मतत्त्वम्,
व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेकमेव ।।११।।

आनन्दरूपं परमात्मतत्त्वम्,
समस्तसंकल्पविकल्पमुक्तम् ।
स्वभावलीना निवसन्ति नित्यम्,
जानानि योगी स्वयमेव तत्त्वम् ।।१२।।

परमात्म स्वरूप

चिदानन्दमयं शुद्धं, निराकारं निरामयं ।
अनन्तसुखसम्पन्नं, सर्वसंगविवर्जितम् ।।१३।।
लोकमात्रप्रमाणोऽयं, निश्चये न हि संशयः ।
व्यवहारे तनूमात्रः कथितः परमेश्वरैः ।।१४।।
यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षण गतविभ्रमः ।
स्वस्थचित्तः स्थिरीभूत्वा, निर्विकल्प समाधितः ।।१५।।
स एव परमं ब्रह्म, स एव जिनपुंगवः ।
स एव परमं तत्त्वं, स ए परमो गुरुः ।।१६।।
स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः ।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमात्मकः ।।१७।।
स एव सर्व कल्याणं, स एरसुखभाजनं ।
स एव शुद्धचिद्रूपं, स एव परमंशिवः ।।१८।।
स एव परमानंदः, स एव सुखदायकः ।
स एव परमज्ञानं, स एवगुणसागरः ।।१९।।
परमाह्लादसंपन्नं, रागद्वेषविवर्जितम् ।
सोऽहं तं देहमध्येषु, यो जानाति स पंडितः ।।२०।।
आकाररहितं शुद्ध, स्व स्वरूपे व्यवस्थितम् ।
सिद्धमष्टगुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनं ।।२१।।
तत्सदृशं निजात्मानं, यो जानाति स पंडितः ।
सहजानन्दचैतन्य, प्रकाशाय महीयसे ।।२२।।

पाषाणेषु यथा हेम, दुग्धमध्ये यथा घृतम् ।
तिलमध्ये यथा तैलं, देहमध्ये यथा शिवः ।।२३।।

काष्ठमध्ये यथा वह्निः, शक्ति रूपेण तिष्ठति ।
अयमात्मा शरीरेषु, यो जानाति स पण्डितः ।।२४।।

अथ कल्याणालोचना

परमप्पइ वङ्कमदिं परमेट्ठीणं करोमि णवकार ।
सगपर सिद्धिणिमित्तं कल्लाणालोयणा वोच्छे ।।१।।

रे जीवा-णंत-भवे संसारे संसरंत बहुवारं ।
पत्तो ण बोहिलाहो मिच्छत्तविजंभपयडीहिं ।।२।।

संसारभमणगमणं कुणंत आराहिदो ण जिणधम्मो ।
तेणविणा वरं दुक्खं पत्तोसि अणंतवाराइं ।।३।।

संसारे णिवसंता अणंतमरणाइ पाओसि तुमं ।
केवलिणा विण तेसिं संखापज्जत्ति णो हवदि ।।४।।

तिण्णिसखा छत्तीसा छावट्ठिसहस्सवार मरणाइं ।
अंतोमुहुत्तमज्झे पत्तोसि णिगोयमज्झम्मि ।।५।।

वियलिंदिये असीदी सट्ठी चालीसमेव जाणेहिं ।
पंचेंदिय चउवीसं खुद्दभवंतोमुहुत्तस्स ।।६।।

अण्णोण्णं खज्जंता जीवा पावंति दारुणं दुक्खं ।
णहु तेसिं पज्जत्ती कहपावइ धम्ममदिसुण्णो ।।७।।

मायापिया कुडुंबो सुजणजण कोवि णायदि सत्थे ।
एगागी भमदि सदा णहि वीओ अत्थि संसारे ।।८।।

आउक्खएवि पत्ते ण समत्थो कोवि आउदाणेय।
देवेंदो ण णरेंदो मणिओसह मंतजालाई ।।९।।

संपडि जिणवरधम्मो लद्धोसि तुमं विसुद्धजोएण।
खामसु जीवा सव्वे पत्तेसमये पयत्तेण ।।१०।।

तिण्णिसया तेसट्ठि मिच्छत्ता दंसणस्स पडिवक्खा।
अण्णाणे सद्दहिया मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।११।।

महुमज्जमंसजूआपभिदीवसणाइ सत्तभेयाइं।
णियमो ण कथं च तेसिं मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१२।।

अणुवयमहव्वया जे जमणियमासीलसहगुरुदिण्णा।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१३।।

णिच्चिदरधादुसत्तय तरुदसवियलिंदिएसु छच्चेव।
सुरणरयतिरियचउरो चउदस माणुए सदसहस्सा ।।१४।।

एदे सव्वे जीवा चउरासीलक्खजोणिवसि पत्ता।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१५।।

पुढवीजलग्गिवाओ तेओवि वणप्फदी य वियलतया।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१६।।

मल सत्तरा जिणुत्ता वयविसये जा विराहणा विविहा।
सामइया खमइया खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१७।।

फलफुल्लछल्लिवल्लि अणगल ण्हाणं च धोवणादिहिं।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१८।।

णो शीलं णेव खमा विणओ तवो ण संजमोवासा ।
ण कदा ण भाविकदा मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१९।।

कंदफलमूलबीया सचित्तरयणीयभोयणाहारा ।
अण्णाणे जे वि कदा मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२०।।

णो पूया जिणचरणे ण पत्तदाणं न चेइयागमणं ।
ण कदा ण भाविद मये मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२१।।

बंभारंभपरिग्गह सावज्जा बहु पमाददोसेण ।
जीवा विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२२।।

सत्तातिसदखेत्तभवा तीदाणागदसुवट्टमाणजिणा ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२३।।

अरूहासिद्धाइरिया उवझाया साहु पञ्चपरमेट्ठी ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२४।।

जिणवयणधम्मचेदियजिणपडिमा किट्टियाअकिट्टिमया ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२५।।

दंसणणाणचरित्ते दोसा अट्ठट्ठपञ्चभेयाइं ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२६।।

मदिसुदओहीमणपज्जयं तहा केवलं च पंचमयं ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२७।।

आयारादी अंगा पुव्वपइण्णा जिणेहिं पण्णत्ता ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२८।।

पंच महव्वदजुत्ताअट्ठादससहस्ससीलकदसोहा ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२९।।

लोए पियरसमाणा रिद्धिपवण्णा महागणवइया ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३०।।

णिग्गंथ अज्जियाओ सड्ढा सड्ढी य चउविहो संघो ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३१।।

देवा सुरा मणुस्सा णेरइयातिरियजोणिगदजीवा ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३२।।

कोहो माणो माया लोहो एदेय रायदोसाइं ।
अण्णाणे जे वि कदा मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३३।।

परवत्थं परमहिला पमादजोगेण अज्जियं पावं ।
अण्णावि अकरणीया मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३४।।

एगो सहावसिद्धो सोहं अप्पा वियप्पपरिमुक्को ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३५।।

अरस अरूव अगंधो अव्वावाहो अणंतणाणमओ ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३६।।

णेयपमाणं णाणं समए एगेण हुंति ससहावे ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३७।।

एयाणेयवियप्पप्पसाहणे सयसहावसुद्धगदी ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३८।।

देहपमाणो णिच्चो लोयपमाणो वि धम्मदो होदि।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३९।।

केवलदंसणणाणं समये एगेण दुण्णिउवओगा।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४०।।

सगरूव सहजसिद्धो विहावगुणमुक्ककम्मवावारो।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४१।।

सुण्णो णेय असुण्णो णोकम्मो कम्मवज्जिओ णाणं।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरण सो एग परमप्पा ।।४२।।

णाणाउजोण भिण्णो वियप्पभिण्णो सहावसुक्खमओ ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४३।।

अच्छिण्णोवच्छिण्णो पमेय रूवत्त गुरूलहू चेव।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४४।।

सुहअसुहभावविगओ सुद्धसहावेण तम्मयं पत्तो।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४५।।

णो इत्थी ण णाउंसो णो पुंसो णेव पुण्णपावमओ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४६।।

ते को ण होदि सुजणो त कस्स ण बधवो ण सुजणो वा।
अप्पा हवेह अप्पा एगागी जाणगो सुद्धो ।।४७।।

जिणदेवो होदु सदा मई सु जिणसासणे सया होऊ।
सण्णासेण य मरणं भवे भवे मज्झ सपदओ ।।४८।।

जिणो देवो जिणो देवो जिणो देवो जिणो जिणो ।
दयाधम्मो दयाधम्मो दयाधम्मो दया सदा ।।४९।।

महासाहू महासाहू महासाहू दिगंबरा ।
एवं तच्च सया हुज्ज जावण्णो मुत्तिसंगमो ।।५०।।

एवमेव गओकालो अणंतो दुक्खसंगमे ।
जिणोवदिट्ठसण्णासे ण यतारोहणा कया ।।५१।।

संपइ एव संपत्ताराहणा जिणदेसिया ।
किं किं ण जायदे मज्झ सिद्धिसंदोहसंपई ।।५२।।

अहो धम्ममहो धम्मं अहो मे लद्धि णिम्मला ।
संजादा संपया सारा जेण सुक्खमणूपमं ।।५३।।

एवं आराहंतो आलोयणवंदणापडिक्कमणं ।
पावइ फलं च तेसिं णिद्दिट्ठं अजियवम्मेण ।।५४।।

।। इति कल्याणालोचना ।।

ऋषिमंडल-स्तोत्रम्

आद्य ताक्षरसंलक्ष्यमक्षरं व्याप्य यस्थितम्
अग्निज्वालासम नादं बिन्दुरेखा समन्वितं ॥१॥
अग्निज्वालासमाक्रान्तं मनोमलविशोधनम् ।
देदीप्यमानं हृत्पद्मे तत्पदं नौमि निर्मलम् ॥युग्मम्॥२॥
ॐ नमोऽर्हद्भ्यः ईशेभ्यः ॐ सिद्धेभ्यो नमो नमः ।
ॐ नमः सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्यः ॐ नमः ॥३॥
ॐ नम. सर्वसाधुभ्यः तत्वदृष्टिभ्यः ॐ नमः ।
ॐ नम शुद्धबोधेभ्यश्चारित्रेभ्यो नमो नमः ॥४॥
श्रेयसेस्तु श्रीयेस्त्वेनदर्हदाद्यष्टकं शुभं ।
स्थानेष्वष्टसु संन्यस्त पृथग्बीजसमन्वितम् ॥५॥
आद्यं पद शिरो रक्षेत् परं रक्षतु मस्तकम् ।
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे तुर्यं रक्षेच्च नासिकाम् ॥६॥
पञ्चम तु मुखं रक्षेत् षष्ठं रक्षतु घंटिकाम् ।
सप्तमं रक्षेन्नाभ्यंतं पादांतं चाष्टमं पुन. ॥७॥युग्मम्
पूर्वं प्रणवतः सातः सरेफो द्वित्रिपञ्चषान् ।
सप्ताष्टदशसूर्यांकान् श्रितो बिदुस्वरान् पृथक् ॥८॥
पूज्यनामाक्षराद्यस्तु पञ्चदर्शनबोधकम् ।
चरित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्रीं सांतसमलकृतम् ॥९॥
जबूवृक्षधरो द्वीप क्षीरोदधि-समावृत. ।
अर्हदाद्यष्टकैरष्टकाष्ठाधिष्ठैरलंकृत. ॥१०॥
तन्मध्ये संगतो मेरुः कूटलक्षैरलंकृत ।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तार–तारामडल–मंडितः ॥११॥
तस्योपरि सकारात बीजमध्यास्य सर्वग ।
नमामि बिम्बमार्हत्य ललाटस्थ निरञ्जन ॥१२॥ विशेषकं

अक्षयं निर्मलं शांतं बहुलं जाड्यतोज्झितम् ।
निरीहं निरहंकारं सारं सारतरं घनम् ।।१३।।
अनुद्धमूतं शुभं स्फीतं सात्विकं राजसं मतम् ।
तामसं विरसं बुद्धं तैजसं शर्बरीसमम् ।।१४।।
साकारं च निराकारं सरसं विरसं परम् ।
परापरं परातीतं परं परमपरापरम् ।।१५।।
सकलं निष्कलं तुष्टं निभृतं भ्रांतिवर्जितम् ।
निरञ्जनं निराकांक्षं निर्लेपं वीतसंशयम् ।।१६।।
ब्रह्माणमीश्वरं बुद्धं शुद्धं सिद्धमभंगुरम् ।
ज्योतिरूपं महादेवं लोकालोकप्रकाशक ।।१७।। कुलकं ।।
अर्हदाख्यः सवर्णान्तः सरेफो बिंदुमंडितः ।
तूर्यस्वरसमायुक्तो बहुध्यानादिमालितः ।।१८।।
एकवर्णं द्विवर्णं च त्रिवर्णं तुर्यवर्णकम् ।
पञ्चवर्णं महावर्णं सपर च परापर ।।१९।। युग्मं ।।
अस्मिन् बीजे स्थिताः सर्वे ऋषभाद्या जिनोत्तमाः ।
वर्णैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र संगताः ।।२०।।
नादश्चंद्रसमाकारो बिंदुर्नीलसमप्रभः ।
कलारुणसमा सांतः स्वर्णाभः सर्वतोमुखः ।।२१।।
शिरःसंलीन ईकारो विलीनो वर्णतः स्मृतः ।
वर्णानुशारिसंलीनं तीर्थकृन्मंडल नमः ।।२२।।
चन्द्रप्रभपुष्पवन्तौ नादस्थितिसमाश्रितौ ।
बिन्दुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ।।२३।।
पद्मप्रभवासुपूज्यौ कलापदमधिश्रितौ ।
शिर स्थितिसंलीनौ सुपार्श्वपाश्वौ जिनोत्तमौ ।।२४।।
शेषास्तीर्थङ्कराः सर्वे रहःस्थाने नियोजिताः ।
मायाबीजाक्षरं प्राप्तश्चतुर्विंशतिरर्हताम् ।।२५।।

गतरागद्वेषमोहाः सर्वपापविवर्जिताः ।
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवन्तु जिनोत्तमा ॥२६॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वाङ्गं मां मा हिंसतु पन्नगाः ॥२७॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वाङ्गं मा मा हिंसतु नागनी ॥२८॥
देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वाङ्गं मा मा हिंसतु गौनसा. ॥२९॥
देवदेवस्य . मा हिंसतु वृश्चिकाः ॥३०॥
देवदेवस्य . मा हिंसतु काकिनी ॥३१॥
देवदेवस्य.. . मा हिंसतु डाकिनी ॥३२॥
देवदेवस्य. . मा हिंसतु साकिनी ॥३३॥
देवदेलस्य .. मा हिंसतु राकिनी ॥३४॥
देवदेवस्य. मा हिंसतु लाकिनी ॥३५॥
देवदेवस्य . .. मा हिंसतु शाकिनी ॥३६॥
देलदेवस्य मा हिंसतु हाकिनी ॥३७॥
देवदेवस्य . . मा हिंसतु राक्षसाः ॥३८॥
देवदेवस्य . .मा हिंसतु व्यंतरा ॥३९॥
देवदेवस्य . मा हिंसतु भेकसा ॥४०॥
देवदेवस्य . ..मा हिंसतु ते ग्रहाः ॥४१॥
देवदेवस्य .. .मा हिंसतु तस्करा ॥४२॥
देवदेवस्य .. मा हिंसतु वह्नय ॥४३॥
देवदेवस्य . मा हिंसतु भृंगिराः ॥४४॥

---

* नोट — २९वे श्लोक के बाद ३०वे मे भी २९वे श्लोक की भांति पाठ पढते हुए अन्त मे 'गोनसा' के स्थान पर वृश्चिका तथा ३१ व ३२, ३३ आदि मे क्रमश काकिनी, डाकिनी, साकिनी आदि बोलना चाहिए ।

देवदेवस्य .. मा हिंसतु दंष्ट्रिणः ॥४५॥
देवदेवस्य.. .मा हिंसतु रेलपाः ॥४६॥
देवदेवस्य... ..मा हिंसतु पक्षिणः ॥४७॥
देवदेवस्य.... .मा हिंसतु मुद्गलाः ॥४८॥
देवदेवस्य... ..मा हिंसतु जृंभकाः ॥४९॥
देवदेवस्य.... .मा हिंसतु तोयदाः ॥५०॥
देवदेवस्य.. . मा हिंसतु सिंहकाः ॥५१॥
देवदेवस्य..... मा हिंसतु शूकराः ॥५२॥
देवदेवस्य..... मा हिंसतु चित्रकाः ॥५३॥
देवदेवस्य.. . मा हिंसतु हस्तिनः ॥५४॥
देवदेवस्य .. मा हिंसतु भूमिपाः ॥५५॥
देवदेवस्य . . मा हिंसतु शत्रवः ॥५६॥
देवदेवस्य......मा हिंसतु ग्रामीणः ॥५७॥
देवदेवस्य.. . मा हिंसतु दुर्जनाः ॥५८॥
देवदेवस्य..... मा हिंसतु व्याधयः ॥५९॥

श्रीगौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुवि लब्धयः ।
ताभिरभ्यधिक ज्योतिरर्हः सर्वनिधीश्वरः ॥६०॥

पातालवासिनो देवा देवा भूपीठवासिनः ।
स्व.स्वर्गवासिनो देवाः सर्वे रक्षंतु मामितः ॥६१॥

येऽवधिलब्धयः ये तु परमावधिलब्धयः ।
ते सर्वे मुनयो दिव्या मा सरक्षन्तु सर्वतः ॥६२॥

ॐ श्रीं ह्रीश्च धृतिर्लक्ष्मी गौरी चंडी सरस्वती ।
जया व विजया क्लिन्नाऽजिता नित्या मदद्रवा ॥६३॥

कामांगा कामवाणा च सानंदा नंदमालिनी ।
माया मायाविनी रौद्री कला काली कलिप्रिया ॥६४॥

एताः सर्वा महादेव्यो वर्तते या जगत्त्रये ।
मम सर्वाः प्रयच्छतु कान्ति लक्ष्मीं धृति मति ।।६५।।
दुर्जना भूतवेताला· पिशाचा मुद्गलास्तथा ।
ते सर्वे उपशाम्यंतु देवदेवप्रभावतः ।।६६।।
दिव्यो गोप्यः सुदुष्प्राप्यः श्री ऋषिमंडलस्तवः ।
भाषितस्तीर्थनाथेन जगत्त्राणकृतोऽनघः ।।६७।।
रणे राजकुले वह्नौ जले दुर्गे गजेहरौ ।
श्मशाने विपिने घोरे स्मृतो रक्षति मानवं ।।६८।।
राज्यभ्रष्टा निजं राज्य पदभ्रष्टा निजं पद ।
लक्ष्मीभ्रष्टा निज लक्ष्मीं प्राप्नुवति न संशयः ।।६९।।
भार्यार्थी लभते भार्या पुत्रार्थी लभते सुतं ।
धनार्थी लभते वित्त नरः स्मरणमात्रत. ।।७०।।
स्वर्णे रूप्येऽथवा कांस्ये लिखित्वा यस्तु पूजयेत् ।
तस्यैवेष्टमहासिद्धिर्गृहे वसति शाश्वति ।।७१।।
भूर्जपत्रे लिखित्वेद गलके मूर्ध्नि वा भुजे ।
धारित सर्वदा दिव्यं सर्वभीतिविनाशिनं ।।७२।।
भूतैः प्रेतग्रहैर्यक्षैः पिशाचैर्मुद्गलैस्तथा ।
वातापित्तकफोद्रेको मुच्यते नात्र संशयः ।।७३।।
भूर्भुव. स्वस्त्रयीपीठवर्त्तिनः शाश्वता जिना. ।
तै· स्तुतैर्वदितैर्दृष्टैर्यत्फलं तत्फलं स्मृतेः ।।७४।।
एतद्गोप्यं महास्तोत्र न देयं यस्य कस्यचित् ।
मिथ्यात्ववासिनो देये बालहत्या पदे पदे ।।७५।।
आचाम्लादितपः कृत्वा पूजयित्वा जिनावलि ।
अष्टसाहस्त्रिको जाप्यः कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ।।७६।।
शतमष्टोत्तरं प्रातर्ये पठन्ति दिने दिने ।
तेषां न व्याधयो देहे प्रभवंति च सम्पदः ।।७७।।

अष्टमासावधि यावत् प्रातः प्रातस्तु यः पठेत् ।
स्तोत्रमेतन्महातेजस्त्वर्हद्बिंबं स पश्यति ।।७८।।
दृष्टे सत्यार्हते बिंबे भवे सप्तमके ध्रुवं ।
पदं प्राप्नोति विश्वस्तं परमानन्दसम्पदा ।।७९।।युग्मं।।
इदं स्तोत्रं महास्तोत्रं स्तुतीनाममुत्तमं परं ।
पठनात्स्मरणाज्जाप्यात् सर्वदोषैर्विमुच्यते ।।८०।।

वज्रपंजरस्तोत्रम्

परमेष्ठी नमस्कारं सारं नवपदात्मकम् ।
आत्म रक्षाकरं मंत्र पंजरं सस्मराम्यहम् ।।
ॐ णमो अर्हंतताणं शिर स्कन्ध शिरसंस्थितम् ।
ॐ णमो सिद्धाणं मुखे मुख पटंवरम् ।।
ॐ णमो आइरियाणं अंग रक्षाति सायिणीम् ।
ॐ णमो उवज्झायाणं आयुधं हस्तयोर्दृढम् ।।
ॐ णमो लोए सव्वसाहूण मोचके पादयोः शुभे ।
एसो पंच णमोयारो शिववज्रमयो तले ।।
सव्वपावप्पणासणो शिवज्रो वज्रमयो महो ।
मंगलाणं च सव्वेसिं खातिरागादि खातका ।।
स्वाहा पंच पदं ज्ञेयं पढमं हवइ मंगलम् ।
वज्रो परिवज्रमयं ज्ञेय विधान देहरक्षणे ।।
महाप्रभाव रक्षेयं क्षुद्रोपद्रव नाशिनी ।
परमेष्ठिपदोद्भूता कथितापूर्वं सूरिभिः ।।
यश्चैवं कुरुते रक्षा परमेष्ठि पदैः सदा ।
तस्य तस्माद् भयं व्याधिराधिश्चापिकदापि न ।।

श्री जैनरक्षा स्तोत्रम्

श्रीजिनं भक्तितो नत्वा त्रैलोक्याह्लादकारकम्
जैनरक्षामहं वक्ष्ये देहिनां देहरक्षकम् ।।१।।
ॐ ह्रीं आदीश्वरः पातु शिरसि सर्वदा मम ।
ॐ ह्रीं श्री अजितो देवो भालं रक्षतु सर्वदा ।।१।।
नेत्रयोः रक्षको भूयात् ॐ आं क्रौं सम्भवो जिनाः ।
रक्षेद् घ्राणेन्द्रिये ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं अभिनन्दनः ।।३।।
सुजिह्वे सुमुखे पातु सुमतिः प्रणवान्वितः ।
कर्णयोः पातु ॐ ह्रीं श्री रक्तः पद्मप्रभः प्रभुः ।।४।।
सुपार्श्वः सप्तमः पातु ग्रीवामां ह्रीं श्रियाश्रितः ।
पातु चन्द्रप्रभः श्रीं ह्री क्रीं (क्रो) पूर्वस्कन्धयोर्मम ।।५।।
सुविधिः शीतलो नाथो रक्षको करपंकजे ।
ॐ क्षां क्षीं क्षूं युतौ कामं चिदानन्दमयौ शुभौ ।।६।।
श्रेयांसो वासुपूज्यश्च हृदये सद्म सदा ।
भूयाद् रक्षाकरो वार वार श्री प्रणवान्वित. ।।७।।
विमलोऽनन्तनाथश्च मायाबीजसमन्वितौ ।
उदरे सुन्दरे शश्वद् रक्षायाः कारकौ मतौ ।।८।।
श्री धर्मशान्तिनाथौ च नाभिपकेरुहे सताम् ।
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं हं संयुक्तौ पुन. पाता पुनः पुनः ।।९।।
श्री कुन्थु-अरनाथौ तु सुगुरु सुकटीतटे ।
भवेतामवकौ भूरि ॐ ह्रीं क्लीं सहितौ जिनौ ।।१०।।
मे पातां चारु जंघायां श्री मल्लिमुनिसुव्रतौ ।
ॐ ह्रां ह्रौं ह्रूँ ततो ह्रः ब्लूं क्लीं श्रीं युक्तौ कृपाकरौ।।११।
यत्नतो रक्षकौ जानू श्री नमिनेमिनाथकौ ।
राजराजीमतीमुक्तौ प्रणवाक्षरपूर्वकौ ।।१२।।

श्री पार्श्वेशमहावीरौ पातां मां ह्रौं सुमानवौ ।
ॐ ह्रीं श्रीं च तथा भ्रूं क्लीं ह्रां ह्रः श्रां श्रः युतौ जिनौ।१३।
रक्षाकरा यथास्थाने भवन्तु जिननायकाः ।
कर्मक्षयकरा ध्याता भीतानां भयवारकाः ।।१४।।
जैनरक्षां लिखित्वेमां मस्तके यस्तु धारयेत् ।
रविवद् दीप्यते लोके श्रीमान् विश्वप्रियो भवेत् ।।१५।।
तस्योग्ररोगवेतालाः शाकिनीभूतराक्षसाः ।
एते दोषा न दृश्यन्ते रक्षकाश्च भवन्त्यमी ।।१६।।
अग्निसर्पभयोत्पाता भूपालाश्चोर विग्रहाः ।
एते दोषा प्रणश्यन्ति रक्षकाश्च भवन्त्यमी ।।१७।।
जैनरक्षामिमां भक्त्या प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
इच्छितान् लभते कामान् सम्पदश्च पदे पदे ।।१८।।
श्रावणे शुक्लगेऽष्टम्यां प्रारभ्य स्तोत्रमुत्तमम् ।
अभिषेकं जिनेन्द्राणा कुर्याच्च दिवसाष्टकम् ।।१९।।
ब्रह्मचर्यं विधातव्यमेकभुक्तं तथैव च ।
शुचिता शुभ्रवस्त्रेण वालंकारेण शोभनम् ।।२०।।
नरो वापि तथा नारी शुद्धभावयुतोऽपि सन् ।
दिनं दिनं तथा कुर्यात् जाप्यं सर्वार्थसिद्धये ।।२१।।
एकायां तु विधातव्यम् उद्यापनमहोत्सवम् ।
पूजाविधिसमायुक्तं कर्तव्यं सज्जनैर्जनैः ।।२२।।

।। इति जैन रक्षा स्तोत्रम् ।।

द्वितीय अध्याय समाप्त

तृतीय अध्याय

अनेक-अपूर्व-चैत्य-वन्दना-क्रिया-विधि

अपूर्व चैत्य वन्दना की जो विधि है वही विधि [१]अनेक-अपूर्व-चैत्यवन्दना की है ।

अथ श्रुतपञ्चमी-क्रिया-विधि

अथ श्रुतस्कन्ध-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

५६ पृ० *** पर देखे ।

यहाँ विधिवत् सामायिक दण्डक और चतुर्विंशतिस्तव पढकर वृहद् सिद्धभक्ति पढना चाहिए ।

अथ श्रुतस्कन्ध-प्रतिष्ठापन-क्रियायां... .... श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६७ पृ० *** पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक और चतुर्विंशतिस्तव पढकर वृहद श्रुतभक्ति पढना चाहिए ।

(इसके बाद श्रुतस्कन्ध की स्थापना कर श्रुतावतारका वर्णन करना चाहिए, पशचात् नीचे लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय आदि करना चाहिए ।)

अथ स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां............. श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६७ पृ० *** पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर वृहद् श्रुतभक्ति बोलना चाहिए ।

---

१ यदि अनेक अपूर्व प्रतिमाओ के दर्शनो का सौभाग्य प्राप्त हो जाय तो उन सब अपूर्व प्रतिमाओ मे से किसी एक अभिरुचित प्रतिमा के सन्मुख बैठकर जो क्रिया अपूर्वजिन चैत्य वन्दना विधि मे की जाती है, वही क्रिया करना चाहिए ।

अथ स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां............ श्री आचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

७६ पृ० ❀❀ पर देखे ।

(विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पश्चात् निम्नलिखित आचार्य भक्ति पढना चाहिए ।)

(पश्चात् यहाँ स्वाध्याय सम्पन्न करना चाहिए)

अथ स्वाध्याय-निष्ठापन-क्रियायां.............. श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६७ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर श्रुतभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ श्रुत-पञ्चमी-पर्व-क्रियायां.................. श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८२ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढना चाहिए ।

अथ श्रुतपञ्चमी-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति, श्रुतभक्ति, शांतिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर बृहद् समाधिभक्ति पढना चाहिए।

८७ पृ० ❀❀ पर देखे ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रिया-विधि

आष्टाह्निक पर्वों में अष्टमी के दिन सिद्धभक्ति के बाद और नन्दीश्वर भक्ति के पहिले श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति और चारित्रालोचना करना चाहिए तथा चतुर्दशी के दिन सिद्धभक्ति के बाद और नन्दीश्वर भक्ति के पूर्व चैत्यभक्ति एव श्रुतभक्ति करना चाहिए, शेष दिनों की विधि नीचे लिखी जा रही है ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां................ श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

५६ पृ० पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर बृहद् सिद्धभक्ति बोलना चाहिए ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां.................. श्री नन्दीश्वरभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६५ पृ० पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर नन्दीश्वर भक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां.................. श्री पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८० पृ० पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ आष्टान्हिक-पर्व--क्रियायां............... श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्हम् ।

८२ पृ० पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं भाव पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, श्री

सिद्धभक्तिं, नन्दीश्वरभक्तिं, पंचमहागुरुभक्तिं, शांतिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिक त्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक एव चतुर्विंशतिस्तव बोलकर वृहद् समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

मंगल-गोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रिया-विधि

नोट :—वर्षा योग धारण और समापन के प्रथम दिन अर्थात् आषाढशुक्ला और कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी के दिन मध्याह्न देव वन्दना निम्नलिखित विधि के अनुसार करना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्नवन्दना क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

५६ पृ० ❀❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक एवं चतुर्विंशति स्तव पढ़कर वृहद् सिद्धभक्ति पढना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्नवन्दना क्रियायां .... श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६० पृ० ❀❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर वृहद् चैत्यभक्ति पढना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्यान्ह-वन्दना-क्रियायां......... श्री पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८० पृ० ❀❀❀ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रियायां......... श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८२ पृ० ❀❀ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव-समेतं श्री सिद्ध-भक्ति-चैत्य-भक्ति, पञ्च-महागुरुभक्ति, शान्तिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि दोष विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

८७ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् दण्डक बोलकर समाधिभक्ति पढना चाहिए ।

अथ मंगल-गोचर-भक्तप्रत्याख्यान क्रिया-विधि

(नोट –मङ्गलगोचर-मध्याह्न-देववन्दना क्रिया के बाद सभी साधुओं को गुरु (आचार्य) के पास जाकर वर्षायोग धारण या समापन हेतु चतुर्दशी का उपवास ग्रहण करने के लिए निम्नलिखित वृहत् (बडी) प्रत्याख्यान विधि करना चाहिए ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यान-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

५६पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक नौ जाप्य और थोस्सामि करके वृहद्सिद्धभक्ति पढना चाहिए ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यानक्रियायां........... श्री योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

७४ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् दण्डक बोलकर एव कायोत्सर्ग कर वृहद् योगिभक्ति पढ़ें । पश्चात् गुरु साक्षी पूर्वक चतुर्विध आहार का त्याग करें ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यान एवं आचार्यवन्दना-क्रियायां.............. श्री आचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

७६ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, नौ जाप्य और थोस्सामि बोलकर वृहद् आचार्य भक्ति पढ़ें ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यान-क्रियायां............. श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८२ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-भक्त-प्रत्याख्यान-क्रियायां पूर्वा-चार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, योगिभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्म-पवित्री-करणार्थं श्री समाधिभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

८७ पृ० ❀❀ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक-कायोत्सर्ग और थोस्सामि करके बडी समाधिभक्ति पढ़ें ।

नोट .–यह सब उपर्युक्त क्रिया त्रयोदशी को की जायगी, पश्चात् सभी साधुओं को मिलकर आषाढ शुक्ला चतुर्दशी की पूर्वरात्रि में वर्षायोग प्रतिष्ठापन (धारण) हेतु तथा कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की अपर (पिछली) रात्रि में वर्षायोगनिष्ठापन (समापन) हेतु निम्नलिखित क्रिया करना चाहिये ।

वर्षायोग धारण-समापन-क्रिया-विधि

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तवसमेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि बोलकर बडी सिद्धभक्ति पढें ।

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां............ श्री योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

७४ पृ० २२४ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि बोलकर बडी सिद्धभक्ति पढें ।

पूर्व दिशा मे-

यावन्ति जिन चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

अथ वृषभजिन स्तोत्र

स्वयम्भुवा भूत-हितेन भूतले,
समञ्जस-ज्ञान-विभूति-चक्षुषा ।
विराजितं येन विधुन्वता तमः,
क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः ।।१।।

प्रजापति-र्यः प्रथमं जिजीविषुः,
शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।
प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो,
ममत्वतो निर्विविदे विदावर ।।२।।

विहाय यः सागर-वारि-वाससं,
वधू-मिवेमां वसुधा-वधूं सतीम् ।
मुमुक्ष-रिक्ष्वाकु-कुलादि-रात्मवान् ,
प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णु-रच्युतः ।।३।।

स्वदोष-मूलं स्वसमाधि-तेजसा,
निनाय यो निर्दय-भस्मसात्-क्रियाम् ।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेञ्जसा,
बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ।।४।।

स विश्व-चक्षु-र्वृषभोऽर्चितः सतां,
समग्र-विद्यात्म-वपु-र्निरञ्जनः ।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो,
जिनोऽजित-क्षुल्लक-वादि-शासनः ।।५।।

श्री अजित जिन स्तुति

यस्य प्रभावात् त्रिदिवच्युतस्य,
क्रीडास्वपि क्षीव-मुखारविन्दः ।
अजेय-शक्ति-र्भुवि बन्धुवर्ग-
श्चकार नामाजित इत्यबन्ध्यम् ।।६।।

अद्यापियस्याजित-शासनस्य,
सतां प्रणेतुः प्रति-मंगलार्थम् ।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं,
स्व-सिद्धि-कामेन जनेन लोके ।।७।।

य: प्रादु-रासीत्प्रभु-शक्ति-भूम्ना,
भव्याशया-लीन-कलंक-शान्त्यै ।
महामुनि-र्मुक्त-घनोपदेहो,
यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ।।८।।

येन प्रणीतं पृथु धर्मतीर्थं,
जेष्ठं जना: प्राप्य जयन्ति दु:खम् ।
गांगं ह्रदं चन्दन-पंक-शीतं,
गज-प्रवेका इव घर्मतप्ता ।।९।।

स ब्रह्मनिष्ठ: सम-मित्र-शत्रु-
र्विद्या-विनिर्वान्त-कषाय-दोष: ।
लब्धात्म-लक्ष्मी-रजितोऽजितात्मा,
जिन: श्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ।।१०।।

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां.. ....
श्री लघुचैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर निम्नलिखित चैत्यभक्ति पढे ।

अथ लघु-चैत्य-भक्ति

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु,
नन्दीश्वरे यानि च मन्दिरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके,
सर्वाणि वन्दे जिन-पुंगवानाम् ।।१।।

अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणाम् ,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां देव-राजार्चितानाम् ,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ।।२।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्द्ध-वसुधा-क्षेत्र त्रये ये भवाः,
चंद्राम्भोज-शिखण्डि-कण्ठ-कनक-प्रावृङ्घना-भा-जिनाः ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षण-धरा-दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।।३।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजन-गिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर रुचके कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेञ्जनाद्रौ दधिमुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योति-र्लोकेऽभिवन्दे भुवन-महितले यानि चैत्यालयानि ।।

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियङ्गु-प्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः सन्तप्त-हेम-प्रभा-
स्ते सज्ज्ञान-दिवाकराः सुर-नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।।

इच्छामि भंते ! चेइय-भत्ति काउस्सग्गो, कओ तस्सालोचेउं, अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि, जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण,

दिव्वेण दीवेण धूवेण, दिव्वेण वासेण णिच्चकालं अच्चति, पुज्जति, वंदंति, णमसंति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकाल अच्चेमि, पुज्जेमि वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमण, समाहि-मरण जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानह वन्दे ।।१।।

इति पूर्व दिक्वन्दना

दक्षिण दिशा मे-

यावन्ति जिन-चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

श्री सम्भव जिन स्तोत्रम्

त्व सम्भव सम्भव-तर्ष-रोगैः,
सन्तप्यमानस्य जनस्य लोके ।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो,
वैद्यो यथा-नाथ-रुजां प्रशान्त्यै ।।
अनित्य-मत्राण-महङ्क्रियाभिः,
प्रसक्त-मिथ्याध्यवसाय-दोषम् ।
इद जगज्जन्म-जरान्तकार्तं,
निरञ्जनां शान्ति-मजीगमस्त्वम् ।।२।।
शतह्रदोन्मेष-चल हि सौख्य,
तृष्णामयाप्यायन-मात्र-हेतुः ।

तृष्णाभिवृद्धिश्च तपत्यजस्त्रं,
तापस्तदायासयतीत्यवादीः ।।३।।

बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतु-
र्बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।
स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं,
नैकान्त-दृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ।।४।।

शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः,
स्तुत्यां प्रवत्तः किमु मादृशोऽज्ञः ।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो,
ममार्य देयाः शिताति-मुच्चैः ।।५।।

श्री अभिनन्दन जिन स्तोत्र

गुणाभिनन्दा-दभिनन्दनो भवान्
दयावधूं क्षान्ति-सखी-मशिश्रियत् ।
समाधितन्त्रास्तदुपोपपत्तये,
द्वयेन नैर्ग्रन्थ्यगुणेन चायुजत् ।।६।।
अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च,
ममेदमित्याभिनिवेशिकग्रहात् ।
प्रभङ्गुरे स्थावर-निश्चयेन च,
क्षतं जगत्तत्व-मजिग्रहद्-भवान् ।।७।।

क्षुधादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थिति-
र्न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाल्प-सौख्यतः ।

ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो-
रितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ॥८॥

जनोऽतिलोलोप्यनुबन्ध-दोषतो,
भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते ।
इहाप्यमुत्राप्यनुबन्ध-दोषवित्,
कथं सुखे संसजतीति चाब्रवीत् ॥९॥

स चानुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्,
तृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः ।
इति प्रभो ! लोकहितं यतो मत,
ततो भवानेन गतिः सतां मतः ॥१०॥

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री लघुचैत्यभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर "वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु" इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ना चाहिए ।

दक्षिण-दिग्-विदिगंतरे केवलि-जिन-सिद्ध साधुगण-देवाः।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ॥२॥

इति दक्षिण-दिग्-वन्दना

पश्चिम दिशा मे-

यावन्ति जिन-चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्तया त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ॥

श्री सुमतिनाथ जिन स्तोत्रम्

अन्वर्थ-संज्ञः सुमति-र्मुनिस्त्वं,
स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम् ।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति,
सर्व-क्रिया-कारक-तत्त्व-सिद्धिः ।।१।।

अनेक-मेकं च तदेव तत्त्वं,
भेदान्वय-ज्ञान-मिदं हि सत्यम् ।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे,
तच्छेष-लोपोऽति ततोनुपाख्यम् ।।२।।

सत· कथञ्चित्तदसत्त्व-शक्तिः,
खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।
सर्वस्वभाव-च्युत-मप्रमाणं,
स्ववाग्-विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ।।३।।

न सर्वथा नित्य-मुदेत्यपैति,
न च क्रिया-कारक-मत्र-युक्तम् ।
नैवासतो जन्म सतो न नाशो,
दीपस्तमः पुद्गल-भावतोऽस्ति ।।४।।

विधि-र्निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ,
विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं,
मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ।।५।।

श्री पद्मप्रभ जिन स्तोत्र

पद्मप्रभः पद्म-पलाश-लेश्यः,
पद्मालयालिंगित-चारु-मूर्तिः ।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणां,
पद्माकराणामिव पद्मबन्धुः ॥६॥

बभार पद्मां च सरस्वतीं च,
भवान्-पुरस्तात्-प्रतिमुक्ति-लक्ष्म्याः ।
सरस्वती-मेव समग्र-शोभां,
सर्वज्ञ-लक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ॥७॥

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते,
बालार्करश्मि-च्छविरालिलेप ।
नरामराकीर्ण-सभां प्रभाव-
च्छैलस्य पद्मा-भमणेः स्वसानुम् ॥८॥
नभस्तलं पल्लव-यन्निव त्वं ।
सहस्त्र पत्राम्बुज-गर्भचारैः
पादाम्बुजै. -पातित-मोह-दर्पो,
भूमौ प्रजानां विजहर्ष भूत्यै ॥९॥
गुणाम्बुधे-र्विप्रुष-मप्यजस्त्रं,
नाखण्डलस्तोतुमलं तवर्षे ।
प्रावेग मादृक्क्किमुताति-भक्ति-
र्मां बाल-मालापयतीद-मित्थम् ॥१०॥

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं................ श्री लघु-चैत्य-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६० पृ० ??? पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर "वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु" इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढना चाहिए ।

पश्चिम-दिग्-विदिगंतरे केवलि-जिन-सिद्ध साधुगण-देवाः
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ।।३।।

इति पश्चिम दिग्वन्दना

उत्तर दिशा मे-

यावन्ति जिन-चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

श्री सुपार्श्व जिन स्तोत्र

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिक-मेष पुंसां,
स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुरात्मा ।
तृषोनुषंगान्न च ताप-शान्ति-,
रितीदमाख्यद्-भगवान् सुपार्श्वः ।।१।।
अजंगमं जंगमनेय-यन्त्रं,
यथा तथा जीवधृतं शरीरम् ।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च,
स्नेहो वृथात्रेति हितं त्वमाख्यः ।।२।।
अलंघ्य-शक्ति-र्भवितव्यतेयं,
हेतु-द्वयाविष्कृत-कार्य-लिंगाः ।

अनीश्वरो जन्तु-रहंक्रियार्त्तः,
संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ।।३।।

विभेति मृत्यो-र्न ततोऽस्ति मोक्षो,
नित्यं शिवं वाञ्छति नास्य लाभः ।
तथापि बालो भय-काम-वश्यो,
वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ।।४।।

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान्-प्रमाता,
मातेव बालस्य हितानुशास्ता ।
गुणावलोकस्य जनस्य नेता,
मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य ।।५।।

श्री चन्द्रप्रभजिन स्तोत्र

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचि-गौरं,
चन्द्र-द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महता-मृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम् ।।६।।

यस्यांग-लक्ष्मी-परिवेश-भिन्नं,
तमस्तमोरेरिव रश्मि-भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च,
ध्यान-प्रदीपातिशयेन भिन्नम् ।।७।।

स्वपक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता,
वाक्-सिंहनादै-र्विमदा बभूवुः ।

प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगण्डा,
गजा यथा केशरिणो निनादैः ।।८।।
यः सर्वलोके परमेष्ठिताया:,
पदं बभूवाद्‌भुत-कर्म-तेजाः ।
अनन्त-धामाक्षर-विश्वचक्षुः,
समन्त-दुःख-क्षय-शासनस्य ।।९।।
स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषाऽभ्र-कलंक-लेप ।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात्-पवित्रो भगवान्-मनो मे ।।१०।।

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां...........
श्री लघुचैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

६० पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर "वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु" इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ना चाहिए ।

उत्तर-दिग्-विदिगंतरे केवलि-जिन-साधुगण-देवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ।।४।।

इति उत्तर दिग्-वन्दना

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां............
श्री पञ्चगुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८० पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि पढकर पञ्चमहागुरुभक्ति अञ्चलिका सहित पढें ।

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां........ ....
श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८२ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि पढकर शान्तिभक्ति पढना चाहिए ।

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थ, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, योगिभक्तिं, लघुचैत्यभक्तिं, पञ्चगुरुभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थ आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

८७ पृ० ❀❀ पर देखे ।

(विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर बडी समाधिभक्ति पढना चाहिए ।)

श्री वीर-निर्वाण-क्रिया-विधि

अथ श्री वीर-निर्वाण-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थ, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

७४ पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर बृहद्सिद्धभक्ति पढना चाहिए ।

अथ श्री वीर-निर्वाण-क्रियायां............... श्री निर्वाणभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

८० पृ० ❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि बोलकर पञ्चगुरुभक्ति पढना चाहिए ।

अथ वीर-निर्वाण-क्रियायां................ श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८२ पृ० ❀❀❀ पर देखे ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढना चाहिए ।

अथ वीर-निर्वाण-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, निर्वाणभक्तिं, पञ्चगुरुभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं, श्री समाधि-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

८७ पृ० ❀❀❀ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि बोलकर वृहद् समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए।

अथ लोच-करण-क्रिया-विधि

अथ लोच-प्रतिष्ठापन-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री लघु[१]-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

नौबार णमोकारमन्त्र का जाप

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।

---

१ (अ) लोचो द्वि-त्रि-चतुर्मासै र्वरो मध्यमोऽधमः क्रमात् ।
लघुप्राग्भक्तिभि कार्य. सोपवास-प्रतिक्रमः ।।८६।।
—अनगारधर्मामृत, नवम अध्याय ।

(ब) लघुसिद्धर्षिभक्त्यान्यः . . ।

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्मचारित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं अतीदा-णागद-वट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि, वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ लोच-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव-समेतं श्री लघुयोगिभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

नौबार णमोकारमन्त्र का जाप करना

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतित-सलिले वृक्षमूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रिमध्ये प्रति-विगत-भयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता गिरि-शिखर-गताः स्थान-कूटांतरस्था-
स्ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगण-वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ।।

गिम्हे गिरि-सिहरत्था-वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे वाहिर सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।२।।

नोट –उपर्युक्त लघुसिद्ध और लघुयोगिभक्ति पढकर लोच प्रारम्भ करना चाहिए तथा लोच समाप्त हो जानेपर निम्नलिखित भक्ति पढकर लोचक्रिया का निष्ठापन (समाप्त) करना चाहिए ।

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः।
पाणिपात्र-पुटाहारास्ते यांति परमां गतिम्॥३॥

इच्छामि भंते! योगिभक्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णा-रस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरास-णेक्कपास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइगमण समाहि समाहि-मरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं।

(नौ बार णमोकारमन्त्र का जाप करना)

अथ लोचनिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भाव पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री लघु-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्। ५६ पृ० ❀❀ पर देखे।

लिखी सम्मत्तणाण-दसण इत्यादि लघुसिद्ध-भक्ति पढना। तत्पश्चात् लोच सम्बन्धी प्रतिक्रमण करना चाहिए।

॥ इति नैमित्तिक क्रिया-विधि-समाप्त ॥

श्लोक

लोचो द्वित्रिचतुर्मासै, र्वरो मध्योऽधमः क्रमात्।
लघु प्राग्भक्तिभिः कार्यः सोपवासप्रतिक्रमः॥१॥

अथ लोच प्रतिष्ठापन क्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोमि। ७४ (पृ० २२७ पर देखिये।)

अथ लोच प्रतिष्ठापन क्रियायां-योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि (जातिजरोरुरोग) अनन्तरं स्वहस्तेन परहस्तेनापि वा लोचः कार्याः। ७२ (पृ० ❀❀ पर देखिये।)

अथ लोच निष्ठापन क्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोमि (तवसिद्धे इत्यादि) अनन्तरं प्रतिक्रमणं कर्तव्यम्।

कौन-कौन सी भक्ति कहाँ-कहाँ करनी चाहिए इसका स्पष्ट विवरण

कार्य	भक्ति
जिन प्रतिमावंदन	चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति
आचार्य वंदना (गवासन से)	लघु सिद्धभक्ति, लघुआचार्यभक्ति
सिद्धांतवेत्ता आचार्य की वंदना	सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्य भक्ति
साधारण मुनियो की वंदना	सिद्धभक्ति
सिद्धांतवेत्ता मुनियो की वंदना	सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति
स्वाध्याय का प्रारम्भ	लघुश्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति
स्वाध्याय की समाप्ति	लघु श्रुत भक्ति
आचार्य की अनुपस्थिति मे पहले दिन उपवास वा प्रत्याख्यान ग्रहण किया हो तो दूसरे दिन आहार के समय	सिद्ध भक्ति पढकर उसका त्याग वा आहार के लिये गमन
आहार की समाप्ति पर अगले दिन के उपवास वा प्रत्याख्यान का ग्रहण करने मे	सिद्धभक्ति
आचार्य की उपस्थिति मे आहार लिये जाने के पहले	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति
आहार के अनतर प्रत्याख्यान वा उपवास की प्रतिज्ञा के लिये	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति

चतुर्दशी के दिन त्रिकाल वंदना के लिये	चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंच-गुरुभक्ति अथवा सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरु भक्ति, शांतिभक्ति और समाधिभक्ति ।
नदीश्वर पर्व मे	सिद्धभक्ति, नंदीश्वरभक्ति, पचगुरुभक्ति, शातिभक्ति, समाधिभक्ति ।
सिद्धप्रतिमा के सामने	सिद्धभक्ति
तीर्थंकर के जन्म दिन	चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पच-गुरुभक्ति अथवा सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शान्तिभक्ति ।
अष्टमी-चतुर्दशी की क्रिया मे अपूर्व चैत्यवंदना वा त्रिकाल नित्यवदना के समय	चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शान्तिभक्ति ।
अभिषेक वंदना	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति
स्थिरबिंबप्रतिष्ठा	सिद्धभक्ति, शांतिभक्ति
चलबिंबप्रतिष्ठा	सिद्धभक्ति, शांतिभक्ति
चल बिंबप्रतिष्ठा के चतुर्थ अभिषेक मे	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पचमहागुरुभक्ति, शातिभक्ति

तीर्थंकरो के गर्भजन्मकल्याणक में	सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, शांतिभक्ति ।
दीक्षाकल्याणक	सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, योगि-भक्ति, शांतिभक्ति ।
ज्ञानकल्याणक	सिद्ध, श्रुत चारित्र, योगि, निर्वाण और शांति-भक्ति ।
निर्वाणकल्याणक	सिद्ध, श्रुत, चारित्र, योगि निर्वाण और शांति भक्ति ।
वीरनिर्वाण-सूर्योदय के समय	सिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, पचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति ।
श्रुतपंचमी	वृहत्सिद्धभक्ति, बृहत्‌श्रुतभक्ति श्रुतस्कंध की स्थापना, बृहत् वाचना, बृहत् श्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति पूर्वक स्वाध्याय, श्रुत भक्ति द्वारा स्वाध्याय की पूर्णता अत मे शांति भक्ति कर क्रिया की पूर्णता ।
श्रुतपचमी के दिन गृहस्थो को	सिद्ध, श्रुत, शांतिभक्ति ।
सिद्धांत वाचना	स्वाध्याय का प्रारंभ श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति द्वारा करके वाचना अंत मे श्रुत और शांति भक्ति।

यदि चतुर्दशी की क्रिया चतुर्दशी के दिन न हो सके तो पूर्णिमा वा अमावस्या के दिन अष्टमी की क्रिया करें अर्थात् सिद्ध, श्रुत, चारित्र और शातिभक्ति ।

गृहस्थों को संन्यास के प्रारंभ मे	सिद्ध, श्रुत, शान्तिभक्ति
गृहस्थो को संन्यासके अन्त मे	सिद्ध, श्रुत, शान्तिभक्ति ।
वर्षायोग धारण करते समय	सिद्ध, योगि, चैत्यभक्ति ।
वर्षायोग धारण की प्रदक्षिणा मे	यावंति जिनचैत्यानि, स्वयंभूस्तोत्र की स्तुति चैत्यभक्ति
वर्षायोग स्वीकार करते समय	गुरुभक्ति, शातिभक्ति
वर्षायोग की समाप्ति मे	वर्षायोग धारण करने की पूर्व विधि
आचार्यपद ग्रहण करते समय	सिद्ध, आचार्य, शातिभक्ति
प्रतिमायोग धारण करने वाले मुनि की वदना करते समय	सिद्ध, योगि, शांतिभक्ति
दीक्षा ग्रहण करते समय	बृहत्सिद्धभक्ति, योगिभक्ति
दीक्षा के अन्त मे	सिद्धभक्ति
केशलोच करते समय	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति
लोच के अन्त मे	सिद्धभक्ति
प्रतिक्रमण मे	सिद्ध, प्रतिक्रमण, वीरभक्ति, चतुर्विंशतितीर्थंकरभक्ति
रात्रियोग धारण	योगिभक्ति
रात्रियोग का त्याग	योगिभक्ति

देववदना मे दोष लगने पर	समाधिभक्ति
सामान्य ऋषि के स्वर्गवास होनेपर उनके शरीर और निषद्या की क्रिया मे	सिद्ध, योगि, शातिभक्ति
सिद्धान्तवेत्ता साधु के स्वर्गवास मे	सिद्ध, श्रुत, योगि, शांतिभक्ति
उत्तरगुणधारी सिद्धातवेत्ता साधु के स्वर्गवास पर	सिद्ध, चारित्र, योगि, शातिभक्ति।
आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, श्रुत, आचार्य, योगि, शाति भक्ति
सिद्धान्तवेत्ता आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, श्रुत, योगि, आचार्य, शान्ति भक्ति
उत्तर गुणधारी आचार्य के स्वर्गवास पर	सिद्ध, श्रुतयोगि, आचार्य, शान्ति भक्ति
उत्तर गुणधारी सिद्धान्तवेत्ता आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, चारित्र, योगि, आचार्य शान्तिभक्ति
पाक्षिक प्रतिक्रमण मे	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण, वीर भक्ति, चतुर्विंशति भक्ति, चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति ।

चतुर्मासिक प्रतिक्रमण मे	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण वीरभक्ति, चतुर्विंशति भक्ति चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति ।
वार्षिक प्रतिक्रमण में	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण वीरभक्ति, चतुर्विंशति भक्ति चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति ।

तृतीय अध्याय समाप्त

चतुर्थ अध्याय

दीक्षा-दृश्य

दीक्षा नक्षत्राणि

प्रणम्य शिरसा वीरं जिनेन्द्रममलव्रतम् ।
दीक्षा ऋक्षाणि वक्ष्यन्ते सतां शुभफलाप्तये ।।१।।

अमलवृत वीर जिनेन्द्र देव को शिरसा प्रणाम करके, सज्जनों को शुभफल प्राप्ति कराने के उद्देश्य से दीक्षा नक्षत्रो के बारे मे यहां कुछ कहा जाता है।

भरण्युत्तरफाल्गुन्यौ मघाचित्राविशाखिका: ।
पूर्वाभाद्रपदा भानि रेवती मुनि-दीक्षणे ।।२।।

मुनि दीक्षा के लिये भरणी, उत्तराफाल्गुनी, मघा, चित्रा, विशाखा, पूर्वा भाद्रपदा, रेवती ये नक्षत्र प्रशस्त होते हैं।

रोहिणी चोत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपत्तथा ।
स्वातिः कृतिकया सार्धं, वर्ज्यते मुनिदीक्षणे ।।३।।

मुनि दीक्षा प्रसग मे रोहिणी, उत्तराषादा, उत्तराभाद्रपदा, स्वाति, कृत्तिका ये नक्षत्र वर्ज्य है।

अश्विनी-पूर्वाफाल्गुन्यौ, हस्तस्वात्यनुराधिका: ।
मूलं तथोत्तराषाढा श्रवणः शतभिषक्तथा ।।४।।

उत्तराभाद्रपच्चापि दशेति विशदाशया:।
आर्यिकाणां व्रते योग्यान्युषन्ति शुभहेतवः ।।५।।

आर्यिका व्रतग्रहण के लिये योग्य नक्षत्र हैं अश्विनी, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, अनुराधा, मूल, उत्तराषाढा, श्रवण, शतभिष्यक्, उत्तराभाद्रपदा ये दस नक्षत्र आर्यिका दीक्षा ग्रहण के लिए शुभ है।

भरण्यां कृत्तिकायां च पुष्ये श्लेषार्द्रयोस्तथा।
पुनर्वसौ च नो दद्युरार्यिकाव्रतमुत्तमा: ।।६।।

भरणी, कृत्तिका, पुष्य, आश्लेषा, आर्द्रा, पुनर्वसू इन नक्षत्रों मे उत्तम गुरुगण आर्यिका व्रतदीक्षा नहीं देते हैं।

पूर्वाभाद्रपदा मूलं, घनिष्ठा च विशाखिका।
श्रवणश्चेषु दीक्ष्यन्ते क्षुल्लका: शल्यवर्जिता: ।।७।।

पूर्वाभाद्रपदा, मूल, धनिष्ठा, विशाखा, श्रवण इन नक्षत्रो में शल्य वर्जित क्षुल्लकदीक्षा होती है।

दीक्षा नक्षत्र फल

(आचार्य महावीर कीर्ति)

(१) अश्विनीनक्षत्रेदीक्षितः आचार्यो भवति,पंचपुरुषाणां दीक्षादायको मिष्ठान्नभुक्· अपमृत्युद्वयं तीर्त्वा चतुश्चत्वारिंद् वर्षाणि जीवति।

दीक्षा नक्षत्र फलादेश· अर्थात् किस नक्षत्र में दीक्षा लेने से क्या फल होता है।

अश्विनी नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह पांच लोगों को दीक्षा देने वाला, मिष्ठान्न भोजन करने वाला, दो बार अपमृत्यु से बचकर ४४ वर्ष जीवित रहता है।

(२) भरणीनक्षत्रे दीक्षितो अनशनादि तयः कारक· गुरुको, व्रतभ्रष्टो भूत्वा पुनर्व्रतं स्वीकृत्य द्विषष्टि वर्षाणि जीवति।

भरणी नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह अनशन आदि तप करने वाला, महान होकर, व्रतभ्रष्ट हो जाता है। लेकिन फिर से व्रत ग्रहण करके, ६२ वर्ष जीवित रहता है।

(३) रोहिण्या दिक्षित· मिष्ठान्नभोक्ता, विदेश परिभ्रमणशील·, अपमृत्युद्वयविमुक्त· व्रतभ्रष्टो भूत्वा, पुन· व्रतं स्वीकृत्य सप्तति वर्षाणि जीवति।

रोहिणी नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह मिष्ठान्न भोजन करने वाला, विदेश मे परिभ्रमण करने वाला होकर दो बार अपमृत्यु से बच जाता है। व्रतभ्रष्ट होकर, फिर व्रत ग्रहण करके, ७० साल जीवित रहता है।

(४) मृगशिरसि दीक्षितः आचार्यो भवति, द्वाविशंति पुरुषाणां दीक्षादायकः, समस्तसंधाधारो भूत्वा सप्तति वर्षाणि जीवति। (अतिउत्तम)

मृगशिरा नक्षत्र में जिस की दीक्षा होती है वह आचार्य होता है। २२ लोगों को दीक्षा देता है। समस्त सघ का आधार होकर ७० वर्ष जीवित रहता है। दीक्षा के लिए यह अतिउत्तम नक्षत्र है।

(५) आर्द्रायां दीक्षितो जितेंद्रियो द्वाषष्टि वर्षाणि जीवति (मध्यम)

आर्द्रा नक्षत्र मे जिसकी दीक्षा होती है वह ६२ वर्ष जीवित रहता है।

(६) पुनर्वसुदीक्षित. पंचवर्षानन्तर तपश्च्युत्वा भ्रष्टोभूत्वा पुनः व्रतं स्वीकृत्य तिस्रणामार्यकाणां दीक्षादायकः सप्तति वर्षाणि जीवति।

पुनर्वस् नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह ५ साल के बाद तपोभ्रष्ट होकर, फिर से व्रत ग्रहण करके, तीन आर्यिकाओं को दीक्षा देकर, ७० साल जीवित रहता है।

(७) पुष्य नक्षत्रे दीक्षित· तपः कृत्वा, आचार्य भवति पचपुरुषाणां दीक्षा दायकः, मेधावी, विंशतिशत वर्षाणि जीवति। (उत्तमातिउत्तम)

पुष्य नक्षत्र में नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह तप करके आचार्य बनता है, पांच लोगों को दीक्षा देता है।

मेधावी होती है। २० (१००) वर्ष जीवित रहता है (अत्युत्तम)

(८) मघायां दीक्षितो प्रशस्ताचारवान् विनीतः षष्टिवर्षाणि जीवति। (मध्यम)

मघा नक्षत्र में नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह प्रशस्त आचरण से युक्त होकर विनीत रहता है, ६० साल जीवित रहता है।

(९) आश्लेषायां दीक्षितो विदेशगामी दुःखित· गुरुविनीतो, व्रततपश्च्युतो भूत्वा षष्टि वर्षानन्तरं सर्पदष्टो म्रियते।

आश्लेषा नक्षत्र में नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह विदेश चला जाता है, दु·खी होता है अपने गुरु के साथ विनीत रहता है, व्रत से और तप से भ्रष्ट होकर ६० साल के बाद सांप से डसकर मर जाता है।

(१०) पूर्वाफल्गुन्या दीक्षितः पंचदशपुरुषाणां दीक्षादायकः व्रत भ्रष्टो भूत्वा पुन· व्रतं स्वीकृत्य नवति वर्षाणि जीवति।

पूर्वाफाल्गुनी में जिसकी दीक्षा होती वह १५ लोगों को दीक्षा देता है। व्रतभ्रष्ट होकर पुन· व्रत ग्रहण करता है। ६० साल जीवित रहता है।

(११) उत्तराफाल्गुन्यां दीक्षितः आचार्यो भवति अशीति वर्षाणि जीवति, मधुराहारभोजी।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह ८० साल जीवित रहता है। मुधर आहार का सेवन करता है।

(१२) हस्ते दीक्षितः आचार्यो भवति पंचस्त्रीणां पंचपुरुषाणां दीक्षागुरुर्भूत्वा शत वर्षाणि जीवति।

हस्त नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह पांच पुरुषों को और पांच स्त्रियों को दीक्षा देता है। और १०० साल जीवित रहता है।

(१३) स्वातो द्रीक्षितः षष्टि वर्षाणि जीवति।

स्वाती नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह ६० साल जीवित रहता है।

(१४) चित्रायां दीक्षितोऽशीति वर्षाणि जीवति (*)

चित्रा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह ८० साल जीवित रहता है। (*इस वाक्य का उत्तरार्ध अस्पष्ट)

(१५) विशाखायां दीक्षितो तपश्च्युत्वा अशीतिवर्षाणि जीवति।

विशाखा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह तपोभ्रष्ट होता है और ८० साल जीवित रहता हैं।

(१६) अनुराधायां दीक्षित. आचार्यो भवति सप्तति पुरुषाणां दीक्षागुरुर्भूत्वा नवति वर्षाणि जीवति, मिष्ठान्नभोजी। (आर्यिका)

अनुराधा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह आचार्य होता है। ७० लोगों का दीक्षा गुरु बनता हैं ६० साल जीतित रहता है। मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है। आर्यिका व्रत ग्रहण के लिये यह उत्तम है।

(१७) ज्येष्ठायां दीक्षितः एकाग्री, उग्रतपस्वी, षट्पंचाशत्

वर्षाणि जीवति। (मध्यम)

ज्येष्ठा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह एकाग्रचित्त, उग्र तपस्वी होता है। ५६ साल जीवित रहता है।

(१८) मूले दीक्षितो मिष्ठान्नभोक्ता, अपमृत्युत्रयविनिर्मुक्तः, नवति वर्षाणि जीवति।

मूल नक्षत्र मे जिसकी दीक्षा होती है वह मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है, तीन बार अपमृत्यु से बच जाता है। ६० साल जीवित रहता है।

(१६) पूर्वाषाढाया दीक्षितः उपसर्गत्रयसहिष्णु., तपश्च्युत्वा पुनर्व्रत स्वीकृत्य, अशीति वर्षाणि जीवति।

पूर्वाषाढा नक्षत्र मे जिसकी दीक्षा होती है वह तीन प्रकार के उपसर्गो को सहन करने वाला होता है। एक बार तपोभ्रष्ट होकर, पुन व्रत ग्रहण करके ८० साल जीवित रहता है।

(२०) उत्तराषाढाया दीक्षितो तपश्चयुत्वा,(*) पुरुषपंचकं च दीक्षियित्वा षष्टि वर्षाणि जीवति।

उत्तराषाढा नक्षत्र मे जिसकी दीक्षा होती है वह तपोभ्रष्ट होता है। (*) वह दो स्त्रियो और पांच पुरुषों को दीक्षा देता है। ६० साल जीवित रहता है।

(२१) श्रवणे दीक्षितः द्वादश पुरुषाणां गुरुः भवति, मिष्ठान्नभोक्ता, विंशत्युत्तरशत. वर्षाणि जीवति। अर्यिका (अतिउत्तम)

श्रवण नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह बारह लोगों का दीक्षागुरु होता है। मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है। १२० साल जीवित रहता है। (अत्युत्तम)

(२२) धनिष्ठायां दीक्षितः आचार्यः भवति, अशीति वर्षाणि जीवति। (उत्तम मध्यम)

घनिष्ठा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह आचार्य होकर ८० साल जीवित रहता है। (उत्तम, मध्यम)

(२३) शततारके दीक्षितः पंच पुरुषाणां दीक्षागुरुर्भूत्वा अशीति वर्षाणि जीवति। (मध्यम)

शततारा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह पाच पुरुषों का दीक्षा गुरु होता है। ६० साल जीवित रहता है।

(२४) पूर्वाभाद्रायां दीक्षितः द्वादश पुरुषाणां दीक्षागुरुः भवति, अशीति वर्षाणि जीवति। (मध्यम)

पूर्वाभाद्रा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है। वह १२ लोगों का दीक्षा गुरु होता है। ८० साल जीवित रहता है। (मध्यम)

(२५) उत्तराभाद्रायां दीक्षितः मिष्ठान्नभोजी, द्वादशपुरुषाणामार्यिर्थकाणां गुरुःभूत्वा, अशीतिवर्षाणि जीवति। आर्यिका (मध्यम)

उत्तराभाद्रा नक्षत्र मे जिसकी दीक्षा होती है वह मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है। बारह पुरुषों का और बारह स्त्रियों का दीक्षा गुरु होता है। ८० साल जीवित रहता है।

(२६) रेवत्यां दीक्षितो मिष्ठान्नभोजी आचार्यो भूत्वा विंशतिशत

वर्षाणि जीवति। (मध्यम)

रेवती नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह आचार्य होता है। मिष्ठान्न भोजन करने वाला होता है। २० वर्ष जीवित रहता है। (उत्तम)

(२७) कृत्तिष्कायां दीक्षितः आचार्यः भवति, पंचपुरुषाणां दीक्षा दायकः, भ्रष्ट व्रतवान्, षण्णवति वर्षाणि जीवति।

कृत्तिमा नक्षत्र में जिसकी दीक्षा होती है वह आचार्य होता है। पांच पुरुषों को दीक्षा देने वाला होता है। व्रतभ्रष्ट होता है। ९६ साल जीवित रहता है।

(आचार्य महावीर कीर्ति जी)

(*) इस चिन्हांकित स्थान पर उपलब्ध संदिग्ध पाठ को छोड दिया है।

नोट - जिस नक्षत्र के आगे 'आर्यिका' शब्द लिखा है उस नक्षत्र में आर्यिका दीक्षा, क्षुल्लकादीक्षा और मुनि, क्षुल्लक दीक्षा आदि सब दीक्षा हो कसती है। ये नक्षत्र स्त्री, पुरुष दोनों के लिए हैं।

दीक्षा का सामान

गंधोदक और थोडा दही, भस्म, १ नारियल, कपूर २ तोला, केशर १० ग्राम, ५ सुपाडी, ७ गोला, ५ किलो चावल, १ मीटर कपडा सफेद, १ पीछी, १ कमण्डलु, १ शास्त्र, दूर्वा। क्षुल्लिका दीक्षा के लिए १६-१६ हाथ की दो साडी, २।।-२।। मीटर के दो दुपट्टा, आर्यिका दीक्षा के लिए दो साडी। क्षुल्लक दीक्षा के लिए दो लंगोट, दो दुपट्टा, कटोरा। ५०० ग्राम द्राक्ष, ५० ग्राम लोंग, ५० ग्राम इलाइची, ५०० ग्राम छुहारा, ५०० ग्राम साबुत हल्दी, ५०० ग्राम सुपाडी।

दीक्षा मुहूर्त

मास· चैत्र, वैसाख, आश्विनि, कार्तिक, मार्गशीर्ष, माघ, फाल्गुन। (अधिक मास में नहीं)। नक्षत्र-आश्विनि, रोहिणी, उत्तराषाढा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, चित्रा, रेवती, अनुराधा, पुष्य, स्वाति, पुनर्वसु, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिसा। वार-(भद्रादि दोष रहित) रविवार, सोमवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार। तिथि-दोज, तीज, पंचमी, सप्तमी, दशमी, ग्यारस, वारस कृष्णपक्ष की पंचमी। शुद्धलग्न -२-३-४-५-६-७-९-१२ चन्द्र नक्षत्र की अनुकूलता। लग्न-लग्न से ३-६-११ मे पापग्रह, १-४-,५,७-९-१० में शुभग्रह। शुद्धि-गुरु, शुक्र के उदय में, अष्टमी सक्रांति में रविचद्र की उपरागता मे। वृषभ, सिह, वृश्चिक, कुंभ स्थिर लग्न उत्तम, मिथुन, कन्या, धनु, मीन द्विस्वभावी लग्न मध्यम, मेष, कर्क, तुला, मकर चरलग्न जघन्य है।

अथ दीक्षा ग्रहण क्रिया

श्लोक

सिद्धयोगि बृहद्भक्ति, पूर्वकं लिङ्गमर्प्यताम् ।
लुञ्चाख्यानाग्न्यपिच्छात्म, क्षम्यतां सिद्धभक्तितः ।।

गद्य--१. अथ दीक्षा ग्रहण क्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोमिः-('सिद्धानुद्धूत' इत्यादि यह भक्ति पृष्ठ २२७ से चालू है वहाँ से पढ़ लेनी चाहिये)

२. अथ दीक्षा ग्रहण क्रियायां-योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि (जातिजरोरुरोग इत्यादि पृष्ठ २४५ से चालू है वहाँ से पढ़ लेनी चाहिये)

अनंतर लोचकरणं, नाग्न्यप्रदान नामकरण, पिच्छ प्रदान, शास्त्र प्रदान, कमण्डलु, प्रदान च।

अथ दीक्षानिष्ठापनक्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहं । दीक्षा धारण करने के बाद सिद्धभक्ति कायोत्सर्ग करता हूँ । दीक्षादानोत्तर कर्तव्यम्-दीक्षा को ग्रहण करने के बाद की क्रिया । व्रतसमितीन्द्रियरोधाः पंच पृथक् क्षितिशयो रदाघर्षः स्थितीसकृदशनलुञ्चा, वश्यकषट्के विचेलताऽस्नानम् ।

इत्यष्टविंशति मूल गुणान् निक्षिप्य दीक्षिते ।
संक्षेपेण सशीलादीन्, गणी कुर्यात्प्रतिक्रमम् ।।

बृहद् दीक्षाविधि

गद्य--पूर्वदिने भोजनसमये भाजनादितिरस्कारविधिं विधाय, आहारं गृहीत्वा, चैत्यालये आगच्छेत् । ततो बृहत्प्रत्याख्यान-प्रतिष्ठापने सिद्धयोगिभक्ती पठित्वा गुरुपार्श्वे प्रत्याख्यानं सोपवासं गृहीत्वा आचार्य-शांति समाधिभक्ती: पठित्वा गुरो: प्रणामं कुर्यात् ।

अथ दीक्षादाने दीक्षादातृजना शांतिक, गणधरवलय-पूजादिकं यथाशक्ति: कारयेत् । अथ दाता तं स्नानादिकं कारयित्वा, यथायोग्यालङ्कारयुक्तं महामहोत्सवेन चैत्यालये समानयेत् । स देवशास्त्रगुरुपूजां विधाय वैराग्यभावनापर: सर्वै: सह क्षमां कृत्वा गुरोरग्रे तिष्ठेत् ।

ततो गुरोरग्रे संघस्याग्रे, दीक्षायै च यांचां कृत्वा, तदाज्ञया सौभाग्यवती स्त्री विहित स्वस्तिकोपरि श्वेतवस्त्रं प्रच्छाय तत्र पूर्वदिशाभिमुख: पर्यंकासनं कृत्वा आसते, गुरुश्चोत्तराभिमुखो भूत्वा संघाष्टकं संघं च परिपृच्छ्य लोचं कुर्यात् ।

अथ तद्विधि

गद्य--बृहद्दीक्षायां लोचस्वीकारक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकमुच्चार्य सिद्ध योगिभक्तिं कृत्वा-

मंत्र--ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषकल्मषाय दिव्यतेजो मूर्त्तये श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय, सर्वपरकृत-

क्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामडामरविनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अमुकस्य (दीक्षित व्यक्ति का नाम) सर्व शांतिं कुरु कुरु स्वाहा । इत्यनेन मंत्रेण गंधोदकादिकं त्रिवारं मंत्रयित्वा शिरसि निक्षिपेत् । शांतिमंत्रेण गंधोदकं त्रिःवारान् परिषिंच्य मस्तकं वामहस्तेन स्पृशेत् । ततो दध्यक्षतगोमय-दूर्वांकुरान् मस्तके वर्धमानमंत्रेण निक्षिपेत् ।

वर्धमान मंत्र

मंत्र--ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं, पायालं, लोयाणं, भूयाणं जये वा, विवादे वा, थंभणे वा, रणंगणे वा, रायंगणे वा मोहेण वा, सव्वजीवसत्ताणं, अपराजिदो भवदु रक्ख रक्ख स्वाहा ।

गद्य--ततः पवित्रभस्मंपात्रं गृहीत्वा "ॐ णमो अरहंताणं" रत्नत्रयपवित्रीकृत्तोत्तमांगाय, ज्योतिर्मयाय, मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानाय, अ सि आ उ सा स्वाहा इदं मंत्रं पठित्वा शिरसि कर्पूरमिश्रितं भस्म परिक्षिप्य "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा स्वाहा," अनेन प्रथमं केशोत्पाटनं कृत्वा पश्चात् ॐ ह्रां अर्हद्भ्यो नमः, ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः, ॐ ह्रूं सूरिभ्यो नमः, ॐ ह्रौं पाठकेभ्यो नमः, ॐ ह्रः सर्वसाधुभ्यो नमः इत्युच्चरन् गुरुः स्वहस्तेन पंचवारान् केशान् उत्पाटयेत् । पश्चादन्यः कोऽपि

लोचावसाने बृहद्दीक्षायां लोचनिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकं पठित्वा सिद्धभक्तिं कुर्यात् । ततः शीर्षं प्रक्षाल्य गुरुभक्तिं कृत्वा, वस्त्राभरणयज्ञोपवीतादिकं परित्यज्य तत्रैवावस्थाय दीक्षां याचयेत् । ततो गुरुः शिरसि श्रीकारं लिखित्वा "ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा ह्रीं स्वाहा" अनेन मंत्रेण जाप्यं १०८ दद्यात् । ततो गुरुस्तस्यांजलौ केशरकर्पूरश्रीखंडेन श्रीकारं कुर्यात् ।

गद्य--श्रीकारस्य चतुर्दिक्षु-

गाथा--रयणत्तयं च वंदे, चउवीसजिणं तहा वंदे ।
पंचगुरूणां वंदे, चारणचरणं तहा वंदे ।।

इति पठन् अंकान् लिखेत् । पूर्वे ३, दक्षिणे २४, पश्चिमे ५, उत्तरे २ इति लिखित्वा सम्यग्दर्शनाय नमः, सम्यग्ज्ञानाय नमः, सम्यक्चारित्राय नमः इति पठन् तदुलैरञ्जलिं पूर्यत्तदुपरि नालिकेर पूगीफलं च धृत्वा सिद्धचारित्रयोगभक्तिं पठित्वा व्रतादिकं दद्यात् ।

तथाहि–उसे ही निम्न गाथा द्वारा आचार्य प्रकट करते हैं:-

गाथा–वदसमिदिंदियरोधो, लोचावासयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं, ठिदिभोयणमेयभत्तं च ।।१।।

इति पठित्वा तद्व्याख्या विधेया-कालानुसारेणेतिनिरूप्य पंचमहाव्रतपंचसमित्यादि पठित्वा "सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते भवतु" इति त्रीन् वारान् उच्चार्य व्रतानि

दत्वा ततः शांतिभक्तिं पठेत् । ततः आशीः श्लोकं पठित्वा अंजलिस्थं तंदुलादिकं दात्रे दाययित्वा ।

अथ षोडशसंस्कारारोपण

१. अयं सम्यग्दर्शनसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

२. अयं सम्यग्ज्ञानसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

३. अयं सम्यक्चारित्रसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

४. अयं बाह्याभ्यंतरतपः संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

५. अयं चतुरंगवीर्यसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

६. अयं अष्टमातृकामंडलसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

७. अयं शुद्ध्यष्टकावष्टंभसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

८. अयं अशेषपरीषहजयसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

९. अयं त्रियोगासंगमनिवृत्तिशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।

१०. अयं त्रिकरणासंयमनिवृत्तिशीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु।

११. अयं दशासंयमनिवृत्तिशीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु।

१२. अयं चतुः संज्ञानिग्रहशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।

१३. अयं पंचेन्द्रिजयशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

१४. अयं दशधर्मधारणशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।

१५. अयं अष्टादशसहस्त्रशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।

१६. अयं चतुरशीतिलक्षणसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

गद्य--इति प्रत्येकमुच्चार्य शिरसि लवंगपुष्पाणि

क्षिपेत्। 'णमो अरहंताणं' इत्यादि ॐ परमहंसाय परमेष्ठिने हंस हंस **हं हां हिं हीं हुं हैं हौं हः** जिनाय नमः जिनं स्थापयामि संवौषट्, ऋषि मस्तके न्यसेत्। श्री मूल-संघे, कुन्दकन्दाम्नाये, बलात्कार-गणे, सेन-गच्छे, नन्दी-संघस्य परम्परायाम्, श्री आदिसागराचार्या जातास्तत् शिष्याः श्री-महावीरकीर्ति आचार्या-जातास्तत् शिष्याः श्रीविमलसागराचार्या तस्य शिष्यः सन्मतिसागराचार्या तस्य शिष्य· रयणसागराचार्यः तस्य शिष्यः चन्द्रसागराचार्यः जातास्तत् शिष्याः........ अहम् (अपना नाम बोलना) जम्बूवृक्षोपलक्षित जम्बूद्वीपे, भरतक्षेत्रे, आर्य-खण्डे, भारतदेशे, ...प्रान्ते, ...नगरे, १००८ श्री .... जिन-चैत्यालयमध्ये, अद्य, वीर निर्वाण सं०........ वि०सं० ....मासोत्तममासे .... मासे........ पक्षे........ शुभ तिथौ........ वासरे पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (आपराह्णिक) काले, घटिका-द्वय (४८ मि.) पर्यन्तं सर्व-सावद्य-योग-विरतोऽस्मि। अथ गुर्वावलीं पठित्वा, अमुकस्य अमुकनामा त्वं शिष्य इति कथयित्वा संयमाद्युपकरणानि दद्यात्।

पिच्छिकादान

१. ॐ णमो अरहंताणं भो अन्तेवासिन्। षड्जीवनिकायरक्षणाय मार्दवादिगुणोपेतमिदं पिच्छिकोपकरणं गृहाण गृहाणेति।

२. ॐ णमो अरहंताणं, मतिश्रुतवधिमनः पर्यय- केवलज्ञानाय द्वादशांगश्रुताय नमः। भो अन्तेवासिन्। इदं ज्ञानोपकरणं गृहाण गृहाणेति।

३. कमंडलुं वामहस्तेन उद्धृत्य ॐ णमो अरहंताणं रत्नत्रयपवित्रीकरणागाय बाह्यभ्यन्तर प्रलशुद्धाय नमः भो अन्तेवासिन् इद शौचोपकरणं । गृहाण गृहाणेति।

तत्पश्चात् समाधिभक्ति पठेत्। ततो नवदीक्षितो मुनिर्भक्त्या गुरुं प्रणम्य अन्यान् मुनीन् प्रणम्योपविशति यावद् व्रतारोपण न भवति तावदन्ये मुनयः प्रतिवंदनां न ददति। ततो दातृप्रमुखा. जनाः उत्तमफलानि अग्रे निधाय तस्मै नमोऽस्त्विति प्रणामं कुर्वन्ति।

ततस्तत्पक्षे द्वितीयपक्षे वा सुहूर्ते व्रतारोपणं कुर्यात्। तदा रत्नत्रयपूजां विधाय, पाक्षिकप्रतिक्रमणपाठः पठनीयः, तत्र पाक्षिकनियमग्रहणसमयात् पूर्व यदा वदसमिदीत्यादि पठ्यते तदा पूर्ववत्व्रतादि दद्यात्। नियमग्रहणसमये यथायोग्य एकं तपो दद्यात् (पल्यविधानादिक) दातृप्रभृति· श्रावकेभ्योऽपि एक-एकं तपो दद्यात् ततोऽन्ये मुनय· प्रतिवंदनां ददति।

अथ मुखशुद्धि मुक्तकरण विधि

त्रयोदशसु पंचसु त्रिषु वा कच्चोलिकासु लवग एलापूंगीफलादिक निक्षप्य ताः कच्चोलिकाः गुरोरग्रे स्थापयेत्। मुखशुद्धि मुक्तकरणंपाठक्रियायामित्याद्युच्चार्य सिद्ध-योगि आचार्यशांतिसमाधिभक्तिंविधाय ततः पश्चान्मुखशुद्धिं गृहणीयात्।

।। इति महाव्रतदीक्षाविधि ।।

क्षुल्लक दीक्षा विधि

अथ लघुदीक्षाया सिद्ध योगि-शाति-समाधि-भक्तिम् पठेत्। "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हम् नम·" अनेन मंत्रेण जाप्यं २१ अवरा १०८ बार दीयते।

अथोपाध्याय (पददान) विधि

शुभमुहूर्ते दाता गणधरवलय + अर्चनं द्वादशांङ्ग श्रुतार्चनं च कारयेत् । ततः श्रीखंडादिना छटान् दत्वा तंदुलैः स्वस्तिकं कृत्वा, तदुपरि पट्टकं संस्थाप्य तत्र पूर्वाभिमुखं तमुपाध्यायपदयोग्यं मुनिमासयेत् । अथोपाध्यायपदस्थापनं-क्रियायांपूर्वाचार्येत्याद्युच्चार्यसिद्ध श्रुतभक्तिं पठेत् । तत् आह्वानादि मंत्रानुच्चार्य शिरसि लवंग पुष्पाक्षतं क्षिपेत् तद्यथा–ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं, उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट् आह्वाननं, स्थापनं, सन्निधिकरणं । ततश्च ''ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं, उपाध्यायपरमेष्ठिने नमः '' इमं मंत्रं सहेंदुना चन्दनेन शिरसि न्यसेत् । ततश्च शांतिसमाधिभक्तिं पठेत् । ततः स उपाध्यायो गुरुभक्तिं दत्वा प्रणम्य दात्रे आशिष दद्यादिति ।

।। इत्युपाध्याय पददान विधि ।।

अथाचार्य पद स्थापन विधि

गद्य--सुमुहूर्ते दाता शांतिक गणधरवलयार्चनं च यथाशक्ति कारयेत् । ततः श्रीखंडादिना छटादिकं कृत्वा आचार्यपदयोग्यं मुनिमासयेत् । आचार्यपदप्रतिष्ठापनक्रियायां इत्याद्युच्चार्य सिद्धाचार्यभक्तिं पठेत् '' ॐ हूं परम सुरभिद्रव्य सन्दर्भ परिमलगर्भ तीर्थाम्बुसम्पूर्णसुवर्णकलश पंचकतोयेन परिषेचयामीति स्वाहा ।।'' इति पठित्वा कलशपंचकतोयेन पादौ परिषेचयेत् । ततः पंडिताचार्यो ''निर्वेद सौष्ठ'' इत्यादि महर्षिस्तवनं पठन् पादौ समंतात् परामृश्य गुणारोपणं कुर्यात्। ततः ओं हूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन्। अत्र एहि एहि संवौषट्, आह्वाननं, स्थापनं, सन्निधिकरणं। ततश्च '' ॐ हूं णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः। अनेन मंत्रेण सहेन्दुना चन्दनेन पादयोर्द्वयोस्तिलकं दद्यात्। तत· शांतिसमाधिभक्तिं कृत्वा, गुरुभक्त्या गुरुं प्रणम्य उपविशति। तत् उपासकास्तस्य पादयोरष्टतयिमिष्टि कुर्वन्ति। यतश्च गुरुभक्तिं दत्वा प्रणमति । स उपासकेभ्य आशीर्वाद दद्यात्।

।। इति आचार्य पददान विधि ।।

मंत्र--ॐ ह्रां ह्रीं श्रीं अर्हम् हं सः आचार्याय नमः । आचार्यवाचना मंत्र । अन्यच्च ।

मंत्र--ॐ ह्रीं श्रीं अर्हम् हं सः आचार्याय नम. । आचार्यमंत्र ।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

पंचम अध्याय

सिद्धान्तचक्रवर्ति श्री नेमिचन्द्राचार्यकृत

* द्रव्यसंग्रह *

जीवमजीव दव्व, जिरणवरवसहेरण जेरण णिद्दिट्ठं ।
देविंदविंदवंद वंदे त सव्वदा सिरसा ।।१।।
जीवो उवश्रोगमश्रो श्रमुत्तिकत्ता सदेहपरिमाणो ।
भोत्ता ससारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई ।।२।।
तिक्काले चदुपारणा इंदियबलमाउश्राणपाणो य ।
ववहारा सो जीवो रिणच्चयरणयदो दु चेदरणा जस्स ।।३।।
उवश्रोगो दुवियप्पो दसरण रणारण च दसरण चदुधा ।
चक्खु श्रचक्खु श्रोही दंसरणमध केवलं रणेयं ।।४।।
रणारणं श्रट्ठवियप्पं मदिसुदश्रोही श्ररणारणरणारणी ।
मरणपज्जयकेवलमवि पच्चक्ख परोक्खभेय च ।।५।।
श्रट्ठचदुणाणदसरण सामण्ण जीवलक्खरणं भरिणयं ।
ववहारा सुद्धरणया सुद्ध पुरण दंसरणं रणारणं ।।६।।
वण्ण रस पच गधा दो फासा श्रट्ठ रिणच्चया जीवे ।
रणो संति श्रमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बधादो ।।७।।
पोग्गलकम्मादीरण कत्ता ववहारदो दु रिणच्छयदो ।
चेदरणकम्माणादा सुद्धरणया सुद्धभावारणं ।।८।।
ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि ।
श्रादा रिणच्छयरणयदो चेदरणभावं खु श्रादस्स ।।९।।
श्रणुगुरूदेहपमाणो उवसंहारप्पसप्पदो चेदा ।
श्रसमुहदो ववहारा रिणच्छयरणयदो श्रसंखदेसो वा ।।१०।।
पुढविजलतेउवाउ वरणप्फदी विविहथावरेइंदी ।
विगतिगचदुपंचक्खा तस जीवा होंति संखादी ।।११।।

समणा अमणा णेया पंचिंदिय णिम्मणा परे सव्वे ।
बादरसुहुमेइंदी सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥१२॥
मग्गणगुणठाणेहिं य चउदसहिं हवंति तह असुद्धणया ।
विण्णेया संसारी सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥१३॥
णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा ।
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयेहिं संजुत्ता ॥१४॥
अज्जीवो पुण णेओ पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं ।
कालो पुग्गल मुत्तो रूवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥१५॥
सद्दो बंधो सुहमो थूलो संठाणभेदतमछाया ।
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥१६॥
गइपरिणयाण धम्मो पुग्गल जीवाण गमणसहयारी ।
तोयं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेई ॥१७॥
ठाणजुदाण अधम्मो पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी ।
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरई ॥१८॥
अवगासदाण जोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं ।
जेण्ह लोगागासं अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥१९॥
धम्मा धम्मा कालो पुग्गलजीवा य संति जावदिये ।
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्तो ॥२०॥
दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो ।
परिणामादिलक्खो वट्टणलक्खो य परमट्ठो ॥२१॥
लोयायासपदेसे इक्केक्के जे ठिया हु इक्केक्का ।
रयणाणं रासीमिव ते कालाणू असंखदव्वाणि ॥२२॥
एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं ।
उत्त काल विजुत्तं णायव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥२३॥

संति जदो तेणेदे अत्थीत्ति भणंति जिणवरा जम्हा ।
काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४॥

होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आयासे ।
मुत्ते तिविह् पदेसा कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥२५॥

एयपदेसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि ।
बहुदेसोउवयारा तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥२६॥

जावदियं आयास अविभागी पुग्गलाणुवट्ठद्धं ।
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥२७॥

आसवबंधणसावरणिज्जरमोक्खा सपुण्णपावा जे ।
जीवाजीव विसेसा तेवि समासेण पभणामो ॥२८॥

आसवदि जेण कम्म परिणामेणप्पणो स विण्णेयो ।
भावासवो जिणुत्तो कम्मासवणं परो होदि ॥२९॥

मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहादओथ विण्णेया ।
पण पण पणदह् तिय चदु कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥३०॥

णाणावरणादीण जोग्ग जं पोग्गलं समासवदि ।
दव्वासवो स णेओ अणेयभेयो जिणक्खादो ॥३१॥

बज्झदि कम्म जेणदु चेदणभावेण भावबधो सो ।
कम्मादपदेसाण अण्णोण्णपवेसणं इदरो ॥३२॥

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बंधो ।
जोगा पयडिपदेसा ठिदि अणुभागा कसायदो होंति ॥३३॥

चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ ।
सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो ॥३४॥

वदसमिदोगुत्तीओ धम्माणुपिहा परीसहजओ य ।
चारित्त बहुभेयं णायव्वा भावसंवरविसेसा ॥३५॥

जह कालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण ।
भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ।।३६।।

सव्वस्स कम्मणो जो खयहेदू अप्पणो हु परिणामो ।
णेओ स भावमोक्खो दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो ।।३७।।

सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा ।
सादं सुहाऊणामं गोद पुण्णं पराणि पावं च ।।३८।।

सम्मद्दंसण णाण चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे ।
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइयो णियो अप्पा ।।३६।।

रयणत्तयं ण वट्टइ, अप्पाणं मुयत्तु अण्णदवियम्हि ।
तम्हा तत्तियमइयो होदि हु मोक्खक्स कारणं आदा ।।४०।।

जीवदीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो त तु ।
दुरभिणिवेसविमुक्क णाणं सम्म खु होदि सदि जम्हि ।।४१।।

ससायविमोहविब्भम विवज्जियं अप्पपरसरूवस्स ।
गहणं सम्म णाण सायारमणेयमेयं च ।।४२।।

ज सामण्ण गहण भावाण णेव कट्टुमायार ।
अविसेसदूण अट्ठे दंसणमिदि भण्णए समये ।।४३।।

दसण पुव्व णाणं छदुमत्थाणं ण दुण्णि उवओगा ।
जुगवं जम्हा केवलि णाहे जुगवं तु ते दो वि ।।४४।।

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं ।
वदसमिदि गुत्ति रूवो ववहारणयादु जिणभणियं ।।४५।।

बहिरब्भतरकिरिया रोहो भवकारणप्पणा सट्ठं ।
णाणिस्स जं जिणुत्तं तं परमं सम्मचारित्तं ।।४६।।

दुविह पि मोक्खहेउ झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा ।
तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाण समब्भसह ।।४७।।

मा मुज्झह मा रज्जह मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु ।
थिरमिच्छह जइचित्तं विचित्त झाणप्पसिद्धीए ॥४८॥
पणतीस सोल छप्पण चदु दुग मेगं च जबह झाएह ।
परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेण ॥४९॥
णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमइयो ।
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ॥५०॥
णट्ठट्ठकम्मदेहो लोया लोयस्स जाणओ दट्ठा ।
पुरुसायागे अप्पा सिद्धो झाएह लोहसिहरत्थो ॥५१॥
दंसणणाणपहाणे वीरियचारित्त वरतवायारे ।
अप्पं परं च जुंजइ सो आइरियो मुणी णेओ ॥५२॥
जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो ।
सो उवझाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥५३॥
दंसणणाण समग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं ।
साधयति णिच्चसुद्धं साहू सो मुणी णमो तस्स ॥५४॥
जं किंचिवि चितंतो णिरीहवित्ती हवे जदा साहू ।
लद्धूणय एयत्तं तदा हु त तस्स णिच्चयं झाणं ॥५५॥
मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किं वि जेण होइ थिरो ।
अप्पा अप्पम्मि रओ इणमेव पर हवे झाणं ॥५६॥
तवसुदवदवं चेदा झाणरह धुरधरो हवे जम्हा ।
तम्हा तत्तियणिरदा तल्लद्धीए सादा होइ ॥५७॥
दव्वसगहमिणं मुणिणाहा दोससंचयचुदा सुद पुण्णा ।
सोधयंतु तणुसुत्तधरेण णेमिचदमुणिणा भणिय जं ॥५८॥

श्रीमत्स्वामिसमन्तभद्राचार्यविरचितो

रत्नकरण्ड–श्रावकाचारः

(अथ प्रथमोऽध्यायः)

मङ्गलाचरणम्

मङ्गलाचरणम्

नमः श्री वर्द्धमानाय निर्द्धूतकलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ।।१।।

धर्मोपदेशप्रतिज्ञा

देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणम् ।
ससारदुःखत. सत्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे ।।२।।

धर्मस्य लक्षणम्

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः ।
यदीय प्रत्यनीकानि भवन्ति भवपद्धतिः ।।३।।

सम्यग्दर्शन लक्षणम्

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम् ।
त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ।।४।।

आप्तलक्षणम्

आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना ।
भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ।।५।।

वीतरागकथनम्

क्षुत्पिपासाजरातङ्क–जन्मान्तक भयस्मयाः ।
न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः सः प्रकीर्त्यते ॥६॥

हितोपदेशिन कथनम्

परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती ।
सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥७॥

अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सतो हितम् ।
ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरजः किमपेक्षते ॥८॥

शास्त्रलक्षणम्

आप्तोपज्ञमनुल्लंघ्यमदृष्टेष्ट विरोधकम् ।
तत्वोपदेशकृत्सार्वं शास्त्र कापथघट्टनम् ॥९॥

गुरुलक्षणम्

विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः ।
ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स॰ प्रशस्यते ॥१०॥

सम्यक्त्वस्याष्टाङ्गानि

१ निःशाङ्कितांगम्

इदमेवेदृशमेव तत्त्व नान्यन्न चान्यथा ।
इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसंशया रुचि ॥११॥

२ निःकांक्षितांगम्

कर्मपरवशे सान्ते दुःखैरन्तरितोदये ।
पापबीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकांक्षणा स्मृता ॥१२॥

३ निर्विचिकित्सितांगम्

स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते ।
निर्जुगुप्सा गुणप्रीतिर्मता निर्विचिकित्सिता ॥१३॥

४ अमूढदृष्ट यङ्गम्

कापथे पथि दुःखाना कापथस्थेऽप्यसम्मति ।
असम्पृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा दृष्टिरुच्यते ॥१४॥

५ उपगूहनाङ्गम्

स्वय शुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयाम् ।
वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगूहनम् ॥१५॥

६ स्थितिकरणाङ्गम्

दर्शनाच्चरणाद्वापि चलता धर्मवत्सलैः ।
प्रत्यवस्थापन प्राज्ञै स्थितिकरणमुच्यते ॥१६॥

७ वात्सल्याङ्गम्

स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथाऽपेतकैतवा ।
प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं वात्सल्यमभिलप्यते ॥१७॥

८ प्रभावनाङ्गम्

अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम् ।
जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥१८॥

अष्टाङ्गधारिनामानि

तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनन्तमती स्मृता ।
उद्दायनस्तृतीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥१९॥
ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः ।
विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥२०॥

अङ्गहीन दर्शस्य व्यथत्वम्

नाङ्गहीनमलं छेत्तुं दर्शन जन्मसन्ततिम् ।
न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहन्ति विषवेदनाम् ॥२१॥

लोकमूढता

आपगासागरस्नानमुच्चयः सिकताश्मनाम् ।
गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढ निगद्यते ॥२२॥

देवमूढ़ता

वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसः ।
देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥२३॥

गुरुमूढ़ता

सग्रन्थारम्भहिंसाना संसारावर्तवर्तिनाम् ।
पाखण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम् ॥२४॥

अष्टमदनामानि

ज्ञान पूजां कुल जाति बलमृद्धि तपो वपुः ।
अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥२५॥

मदस्यानिष्टत्वम्

स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः ।
सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना ॥२६॥
यदि पापनिरोधोऽन्यसम्पदा किं प्रयोजनम् ।
अथ पापास्रवोऽस्त्यन्य सम्पदा किं प्रयोजनम् ॥२७॥

सम्यग्दर्शनमहिमा

सम्यग्दर्शनसम्पन्नमपि मातङ्गदेहजम् ।
देवा देव विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसम् ॥२८॥
श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकिल्विषात् ।
कापि नाम भवेदन्या सम्पद्धर्माच्छरीरिणाम् ॥२९॥
भयाशास्नेहलोभाच्च कुदेवागमलिङ्गिनाम् ।
प्रणामं विनयं चैव न कुर्युः शुद्धदृष्टयः ॥३०॥
दर्शनं ज्ञानचारित्रात्साधिमानमुपाश्नुते ।
दर्शन कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते ॥३१॥
विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः ।
न सन्त्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥३२॥

गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् ।
अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ।।३३।।
न सम्यक्त्वसमं किञ्चित् त्रैलोक्ये त्रिजगत्यपि ।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ।।३४।।

सम्यग्दृष्टेरनुत्पत्तिस्थानानि

सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ्—नपुंसक—स्त्रीत्वानि ।
दुष्कुलविकृताल्पायुदरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः ।।३५।।
ओजस्तेजोविद्या-वीर्ययशोवृद्धि विजय विभवसनाथाः ।
महाकुला महार्था मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूता. ।।३६।।
अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टा. प्रकृष्टशोभाजुष्टा· ।
अमराप्सरसा परिषदि चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्तः स्वर्गे ।।३७।।
नवनिधिसप्तद्वयरत्नाधीश· सर्व-भूमि-पतयश्चक्रम् ।
वर्तयितु प्रभवन्ति स्पष्टदृश· क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ।।३८।।
अमरासुरनरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजा ।
दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्या ।।३९।।
शिवमजररुजमक्षयमव्याबाध विशोकभयशङ्कम् ।
काष्टागतसुखविद्या विभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणा· ।।४०।।

देवेन्द्र चक्रमहिमानममेयमानम्
राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्र शिरोऽर्चनीयम् ।
धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकं
लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः ।।४१।।

(अथ द्वितीयोऽध्याय)

सम्यग्ज्ञानस्य लक्षणम्

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात् ।
निःसन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ।।४२।।

प्रथमानुयोगकथनम्

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यम् ।
बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः ।।४३।।

करणानुयोगकथनम्

लोकालोकविभक्तेः युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च ।
आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ।।४४।।

चरणानुयोगकथनम्

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम् ।
चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ।।४५।।

द्रव्यानुयोगकथनम्

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च ।
द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ।।४६।।

(अथ तृतीयोऽध्यायः)

चारित्रस्यावश्यकता

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्त–संज्ञानः ।
रागद्वेष निवृत्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ।।४७।।
रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादि निर्वतना कृता भवति ।
अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ।।४८।।

चारित्रकथनम्

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च ।
पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रम् ।।४९।।

चारित्रभेदौ

सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसङ्गविरतानाम् ।
अनगाराणां विकलं सागाराणां ससङ्गानाम् ।।५०।।

विकल (गृहस्थ) चारित्रभेदा

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणशिक्षाव्रतात्मक चरणम् ।
पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासंख्यमाख्यातम् ।।५१।।

अणुव्रतम्

प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्च्छेभ्यः ।
स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥५२॥

अहिंसाणुव्रतम्

सकल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान् ।
न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥५३॥

अहिंसाणुव्रतस्य पञ्चातीचारा

छेदनबन्धनपीडनमतिभारारोपण व्यतीचाराः ।
आहारवारणापि च स्थूलवधाद् व्युपरतेः पञ्च ॥५४॥

सत्याणुव्रतम्

स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे ।
यत्तद्वदन्ति सन्त· स्थूलमृषावाद वैरमणम् ॥५५॥

सत्याणुव्रतस्य पञ्चातिचार

परिवादरहोभ्याख्या पैशून्य कूटलेखकरण च ।
न्यासापहारितापि च व्यतिक्रम· पञ्च सत्यस्य ॥५६॥

अचौर्याणुव्रतम्

निहित वा पतित वा सुविस्मृत वा परस्वमविसृष्टम् ।
न हरति यन्न च दत्ते तदकृषचौर्यादुपारमणम् ॥५७॥

अचौर्याणुव्रतस्य पचातीचारा

चौरप्रयोग चौरार्थादान विलोप सदृश सन्मिश्रा· ।
हीनाधिकविनिमानं पञ्चास्तेये व्यतीपाताः ॥५८॥

ब्रह्मचर्याणुव्रतम्

न तु परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत् ।
सा परदारनिवृत्ति· स्वदारसन्तोष नामापि ॥५९॥

ब्रह्मचर्याणुव्रतस्य पञ्चातिचारा

अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषाः ।
इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पञ्च व्यतीचारा ॥६०॥

परिमित परिग्रहाणुव्रतम्

धनधान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता ।
परिमित–परिग्रहः स्यादिच्छा परिमाणनामापि ॥६१॥

परिमितपरिग्रहाणुव्रतस्य पञ्चातिचारा.

अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि ।
परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पञ्च कथ्यन्ते ॥६२॥

पञ्चाणुव्रत फलम्

पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकम् ।
यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥६३॥

पञ्चाणुव्रत प्रसिद्धाना नामानि

मातङ्गो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः ।
नीली जयश्च सम्प्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमम् ॥६४॥

हिंसादिपञ्चपापेसु प्रसिद्धाना नामानि

धनश्रीसत्यघोषौ च तापसारक्षकावपि ।
उपाख्येयास्तथा श्मश्रु नवनीतो यथाक्रमम् ॥६५॥

गृहमधिनामष्टौ मूलगुणा

मद्य–मांस–मधु–त्यागैः सहाणुव्रत–पञ्चकम् ।
अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥६६॥

त्रीणि गुणव्रतानि

दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणम् ।
अनुबृंहणाद् गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥६७॥

दिग्व्रतम्

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वाऽतोऽहं बहिर्न यास्यामि ।
इति सङ्कल्पो दिग्व्रतमामृत्यणु पापविनिवृत्यै ॥६८॥

दिग्व्रतस्य मर्यादा

मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः ।
प्राहुर्दिशा दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥६९॥

दिग्व्रतस्य माहात्म्यम्

अवधेर्बहिरणुपापप्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम् ।
पञ्चमहाव्रतपरिणतिमणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ॥७०॥

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः ।
सत्वेन दुःखधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥७१॥

महाव्रतलक्षणम्

पञ्चाना पापानां हिंसादीना मनोवच.कायैः ।
कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रत महताम् ॥७२॥

दिग्व्रतस्यातिचारा

ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनाम् ।
विस्मरण दिग्विरतेरत्याशा. पञ्च मन्यन्ते ॥७३॥

अनर्थदण्डव्रतम्

अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः ।
विरमणमनर्थदण्डव्रत च विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥७४॥

अनर्थदण्डस्य भेदा

पापोपदेश हिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पञ्च ।
प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः ॥७५॥

पापोपदेश

तिर्यक्क्लेषवणिज्या हिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम् ।
कथाप्रसङ्गप्रसवः स्मर्तव्यः पाप–उपदेशः ॥७६॥

हिंसादानम्

परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधश्रृङ्गश्रृङ्खलादीनाम् ।
वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥७७॥

अपध्यानम्

बधबन्धच्छेदादेद्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः ।
आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥७८॥

दु श्रुति

आरम्भसङ्गसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः ।
चेतः कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥७९॥

प्रमादचर्य्या

क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदम् ।
सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥८०॥

अनर्थदण्डव्रतस्यातिचारा

कन्दर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च ।
असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥८१॥

भोगोपभोग परिमाणव्रतम्

अक्षार्थाना परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् ।
अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥८२॥

भोगोपभोगभेदौ

भुक्त्वा परिहातव्यो भागो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः ।
उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिपञ्चेन्द्रियो विषयः ॥८३॥

मधु-मास-मद्यनिषेध

त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये ।
मद्य च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥८४॥

अल्पफल–बहुविघात-निषेध

अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि ।
नवनीतनिम्बकुसुम कैतकमित्येवमवहेयम् ॥८५॥

यदनिष्ट तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात् ।
अभिसन्धिकृताविरतिर्विषयाद्योग्याद्व्रत भवति ॥८६॥

यमनियमकथनम्

नियमो यमश्च विहितौ द्वेधा भोगोपभोगसहारे ।
नियमः परिमितिकालो यावज्जीव यमो ध्रियते ॥८७॥

नियमविधि

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु ।
ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसङ्गीतगीतेषु ॥८८॥

अद्य दिवा रजनीं वा पक्षो मासस्तथर्तु रयन वा ।
इतिकालपरिच्छित्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियम (युग्म)॥८९॥

भोगोपभोग परिमाणव्रतातिचारा.

विषयविषतोऽनुपेक्षानुस्मृतिरति लौल्यमतितृषानुभवो ।
भोगोपभोगपरमाव्यतिक्रमा पञ्च कथ्यन्ते ॥९०॥

चत्वारि शिक्षाव्रतानि

देशावकाशिकं वा सामयिक प्रोषधोपवासो वा ।
वैय्यावृत्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥९१॥

देशावकाशिक शिक्षाव्रतम्

देशावकाशिक स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य ।
प्रत्यहमणुव्रताना प्रतिसंहारो विशालस्य ॥९२॥

देशावकाशिकव्रतस्य क्षेत्रमर्यादा

गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनाना च ।
देशावकाशिकस्य स्मरन्ति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥९३॥

देशावकाशिकव्रतस्य कालमर्यादा

संवत्सरमृतुरयन मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च ।
देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधि प्राज्ञाः ॥९४॥

देशावकाशिकव्रतस्य सार्थकता

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपञ्चपापसंत्यागात् ।
देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥९५॥

देशावकाशिकव्रतस्य पञ्चातिचारा

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ ।
देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च ॥९६॥

सामायिकशिक्षाव्रतम्

आसमयमुक्तिमुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन ।
सर्वत्र च सामयिकाः सामयिकं नाम शंसन्ति ॥९७॥

सामायिकविधि

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि ।
स्थानमुपवेशनं वा समय जानन्ति समयज्ञाः ॥९८॥

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च ।
चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥९९॥

व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्त्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या ।
सामयिक बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा ॥१००॥

सामयिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यम् ।
व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन ॥१०१॥

सामयिकशिक्षाव्रतस्य सार्थकता

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि ।
चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावम् ॥१०२॥

सामायिके परीषहसहनम्

शीतोष्णदंशमशकपरिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः ।
सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥१०३॥

सामायिके किं विचार्यं

अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम् ।
मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥१०४॥

सामायिकस्य पञ्चातिचाराः

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे ।
सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्चभावेन ॥१०५॥

प्रोषधोपवासशिक्षाव्रतम्

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु ।
चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभिः ॥१०६॥

प्रोषधोपवासे किं त्याज्यं

पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणाम् ।
स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥१०७॥

उपवासे किं कर्त्तव्यं

धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान् ।
ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥१०८॥

प्रोषधोपवास

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः ।
स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥१०९॥

प्रोषधोपवासस्य पञ्चातिचाराः

ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे ।
यत्प्रोषधोपवासे व्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदम् ॥११०॥

वैयावृत्य शिक्षाव्रतम्

दानं वैयावृत्त्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये ।
अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ।।१११।।

पुनश्च

व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात् ।
वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम् ।।११२।।

पुनश्च

नवपुण्यैः प्रतिपत्ति सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन ।
अपसूनारम्भाणामार्याणामिष्यते दानम् ।।११३।।

दानफलम्

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम् ।
अतिथीनां प्रतिपूजा रुधिरमलं धावते वारि ।।११४।।
उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा ।
भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ।।११५।।
क्षितिगतमिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले ।
फलतिच्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ।।११६।।

दानभेदा

आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन ।
वैयावृत्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्रा ।।११७।।

दानफलस्य प्रसिद्धभोक्तार

श्रीषेणवृषभसेने कौण्डेशः शूकरश्च दृष्टान्ताः ।
वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ।।११८।।

वैयावृत्ये (दाने) जिनपूजाविधाम्

देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःख निर्हरणम् ।
कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यम् ।।११९।।

पूजाया फलस्य दृष्टान्त

अर्हच्चरणसपर्या-महानुभावं महात्मनामवदत् ।
भेकः प्रमोदमत्तः कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥१२०॥

वैयावृत्यस्य पञ्चातिचारा

हरितपिधाननिधाने ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि ।
वैयावृत्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥१२१॥

सल्लेखना लक्षणम्

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे ।
धर्माय तनुविमोचनमाहुः सल्लेखनामार्याः ॥१२२॥

सल्लेखनाया आवश्यकता

अन्तःक्रियाधिकरणं तपः फलं सकलदर्शिनः स्तुवते ।
तस्माद्यावद्विभवं समाधिमरणे प्रयतितव्यम् ॥१२३॥

समाधिमरणस्य विधि

स्नेह वैर सङ्ग परिग्रहं चापहाय शुद्धमना ।
स्वजनं परिजनमपि च क्षांत्वा क्षमयेत्प्रियैर्वचनैः ॥१२४॥

आलोच्य सर्वमेनः कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजम् ।
आरोपयेन्महाव्रतमामरणस्थायि निश्शेषम् ॥१२५॥

शोकं भयमवसादं क्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा ।
सत्त्वोत्साहमुदीर्य च मनः प्रसाद्य श्रुतैरमृतैः ॥१२६॥

आहारं परिहाप्य क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम् ।
स्निग्धं च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥१२७॥

खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
पञ्चनमस्कारमनास्तनुं त्यज्येत्सर्वयत्नेन ॥१२८॥

सल्लेखनाया पञ्चातिचारा

जीवितमरणाशंसे भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः ।
सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः ॥१२९॥

सल्लेखनाया फलम्

निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् ।
निःपिवति पीतधर्मा सर्वैर्दुःखैरनालीढः ॥१३०॥

मोक्षकथनम्

जन्मजरामयमरणैः शोकैर्दुःखैर्भयैश्च परिमुक्तम् ।
निर्वाण शुद्धसुख निःश्रेयसमिष्यते नित्यम् ॥१३१॥
विद्यादर्शनशक्तिस्वास्थ्य प्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः ।
निरतिशया निरवधयो निःश्रेयसमावसन्ति सुखम् ॥१३२॥
काले कल्पशतेऽपि च गते शिवाना न विक्रिया लक्षा ।
उत्पातोऽपि यदि स्यात्त्रिलोकसम्भ्रान्तिकरणपटु. ॥१३३॥
निःश्रेयसमधिपन्नास्त्रैलोक्यशिखामणिश्रियं दधते ।
निष्कीटकालिकाच्छविचामीकरभासुरात्मानः ॥१३४॥
पूजार्थाज्ञैश्वर्यैर्बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठैः ।
अतिशयितभुवनमद्भुतमभ्युदय फलति सद्धर्मः ॥१३५॥

श्रावकास्यैकादश प्रतिमा

श्रावकपदानि देवैरेकादश देशितानि येषु खलु ।
स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह सतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥१३६॥

१ दार्शनिक

सम्यग्दर्शनशुद्धः ससारशरीरभोगनिर्विण्णः ।
पञ्चगुरुचरणशरणो दार्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः ॥१३७॥

२ व्रतिक

निरतिक्रमणमणुव्रतपञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि ।
धारयते निःशल्यो योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः ॥१३८॥

३ सामयिक

चतुरावर्तत्रितयश्चतुः प्रणामस्थितो यथाजातः ।
सामयिको द्विनिषद्यस्त्रियोगशुद्धिस्त्रिसंन्ध्यमभिवन्दी ॥१३९॥

४ प्रोषधनियमविधायी

पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगुह्य ।
प्रोषधनियमविधायी प्रणधिपरः प्रोषधानशनः ॥१४०॥

५ सचित्तविरत

मूलफलशाकशाखाशरीरकन्दप्रसूनबीजानि ।
नामानि योऽत्ति सोऽयं सचित्तविरतो दयामूर्तिः ॥१४१॥

६ रात्रिभुक्तित्यागी

अन्नं पानं खाद्यं लेय नाश्नाति यो विभावर्याम् ।
स च रात्रिभुक्तिविरत. सत्त्वेष्वनुकम्पमानमना. ॥१४२॥

७ ब्रह्मचारी

मलबीजं मलयोनिं गलन्मल पूतगन्धिबीभत्सम् ।
पश्यन्नङ्गमनङ्गाद्विरमति यो ब्रह्मचारी सः ॥१४३॥

८ आरम्भत्यागी

सेवाकृषिवाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपारमति ।
प्राणातिपातहेतोर्योऽसावारम्भविनिवृत्तः ॥१४४॥

९ परि चित्तपरिग्रहत्यागी

बाह्येषु दशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्ममत्वरतः ।
स्वस्थ. सन्तोषपरः परिचित्तपरिग्रहाद्विरतः ॥१४५॥

१० अनुमतित्यागी

अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहिकेषु कर्मसु वा ।
नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स मन्तव्यः ।।१४६।।

११ उत्कृष्ट श्रावक

गृहतो मुनिवनमित्वा गुरूपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य ।
भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखण्डधरः ।।१४७।।

श्रेष्ठज्ञातुर्लक्षणम्

पापमरातिर्धर्मो बन्धुर्जीवस्य चेति निश्चिन्वन् ।
समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति ।।१४८।।

उपसंहार

येन स्वयं वीतकलङ्कविद्या दृष्टिः क्रियारत्नकरण्डभावम् ।
नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिषु विष्ठपेषु
।।१४९।।

अन्तमङ्गलम्

सुखयतु सुखभूमिः कामिन कामिनीव
सुतमिव जननी मा शुद्धशीला भुनक्तु ।
कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनीता-
ज्जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ।।१५०।।

धर्मात्माओ के उपदेश एक दृढ लाठी के समान हैं,
क्योकि जो उनके अनुसार कार्य करते हैं,
उन्हें वे गिरने से बचाते हैं ।

छहढाला

तीन भुवन मे सार, वीतराग विज्ञानता ।
शिवस्वरूप शिवकार, नमहुँ त्रियोग सम्हारिकै ।।

प्रथम ढाल

जे त्रिभुवन मे जीव अनन्त, सुख चाहै दुख तै भयवन्त ।
तातै दुःखहारी सुखकारि, कहै सीख गुरु करुणा धारि ।।१।।
ताहि सुनो भवि मन थिर आन, जो चाहो अपनो कल्याण ।
मोह महामद पियो अनादि, भूल आपकूँ भरमत वादि ।।२।।
तास भ्रमण की है बहु कथा, पै कछु कहूँ कही मुनि यथा ।
काल अनंत निगोद मँझार, बीत्यो एकेन्द्री तन धार ।।३।।
एक श्वास मे अठ-दस-बार, जन्म्यौ मरयो भरयो दुःख भार ।
निकसि भूमि जल पावक भयो, पवन प्रत्येक वनस्पति थयो ।।४।।
दुर्लभ लहि ज्यो चिन्तामणी, त्यो पर्याय लही त्रसतणी ।
लट-पिपीलि-अलि आदि शरीर, धरि धरि मरयो सही बहु पीर ।।५।।
कबहूँ पचेंद्रिय पशु भयो, मन बिन निपट अज्ञानी थयो ।
सिहादिक सैनी ह्वै क्रूर, निबल पशू हति खाये भूर ।।६।।
कबहू आप भयो बलहीन, सबलनि करि खायो अतिदीन ।
छेदन भेदन भूखरु प्यास, भार वहन हिम आतप त्रास ।।७।।
बध-बन्धन आदिक दुःख घने, कोटि जीभतै जात न भने ।
अति सक्लेश भावतै मरयो, घोर श्वभ्रसागर मे परयो ।।८।।
तहाँ भूमि परसत दुख इसो, बीछू सहस डसै नहि तिसो ।
तहाँ राध-शोणित वाहिनी, कृमि-कुल कलित देह दाहिनी ।।९।।
सेमर तरु जुत दल असिपत्र, असि ज्यो देह विदारें तत्र ।
मेरु समान लोह गलि जाय, ऐसी शीत उष्णता थाय ।।१०।।

तिल-तिल करें देह के खण्ड, असुर भिडावें दुष्ट प्रचण्ड ।
सिधु नीरतें प्यास न जाय, तो पण एक न बूंद लहाय ।।११।।
तीन लोक को नाज जु खाय, मिटे न भूख कणा न लहाय ।
ये दुख बहुसागर लो सहे, करम-जोगतें नरगति लहे ।।१२।।
जननी उदर बस्यो नव मास, अंग सकुचतें पाई त्रास ।
निकसत जे दुख पाये घोर, तिनको कहत न आवे ओर ।।१३।।
बालपने मे ज्ञान न लह्यौ, तरुण समय तरुणीरत रह्यौ ।
अर्द्धमृतक सम बूढापनो, कैसे रूप लखे आपनो ।।१४।।
कभी अकाम निर्जरा करै, भुवनत्रिक मे सुरतन धरै ।
विषयचाह-दावानल दह्यौ, मरत विलाप करत दुख सह्यौ ।।१५।।
जो विमानवासी हू थाय, सम्यग्दर्शन बिन दुःख पाय ।
तहँ त चय थावर-तन धरे, यो परिवर्तन पूरे करे ।।१६।।

द्वितीय ढाल

ऐसे मिथ्यादृगज्ञानचरणवश, भ्रमत भरत दुख जन्म-मरण ।
तातें इनको तजिये सुजान, सुन तिन सक्षेप कहूं बखान ।।१।।
जीवादि प्रयोजन भूततत्त्व, सरधें तिन माहिं विपर्ययत्त्व ।
चेतन को है उपयोगरूप, बिन मूरति चिनमूरति अनूप ।।२।।
पुद्गल नभ धर्म अधर्म काल, इनतें न्यारी है जीव चाल ।
ताको न जान विपरीत मान, करि करै देह मे निज पिछान ।।३।।
मै सुखी दुखी मै रंक राव, मेरे धन गृह गोधन प्रभाव ।
मेर सुत तिय मै सबल दीन, बेरूप सुभग मूरख प्रवीन ।।४।।
तन उपजत अपनी उपज जान, तन नशत आपको नाश मान ।
रागादि प्रगट जे दुःख दैन, तिनही को सेवत गिनत चैन ।।५।।

शुभ-अशुभ बंध के फल मँझार, रति अरति करै निजपद बिसार।
आतमहित हेतु विराग ज्ञान, ते लखै आपको कष्टदान ।।६।।
रोकी न चाह निज शक्ति खोय, शिवरूप निराकुलता न जोय ।
याही प्रतीतिजुत कछुक ज्ञान, सो दुःखदायक अज्ञान जान ।।७।।
इनजुत विषयनि मे जो प्रवृत्त, ताको जानों मिथ्याचरित्त ।
यो मिथ्यात्वादि निसर्ग जेह, अब जे गृहीत सुनिये सु तेह ।।८।।
जो कुगुरु कुदेव कुधर्म सेव, पोषें चिर-दर्शन मोह एव ।
अन्तर रागादिक धरैं जेह, बाहर धन अम्बर तै सनेह ।।९।।
धारैं कुलिंग लहि महत भाव, ते कुगुरु जन्म-जल उपलनाव ।
जे राग-द्वेष मलकरिमलीन, वनिता गदादिजुत चिह्न चीन्ह ।।१०।।
ते हैं कुदेव, तिनकीजु सेव शठ करत न तिन भव-भ्रमण छेव ।
रागादि भाव हिंसा समेत, दर्वित त्रस थावर मरण खेत ।।११।
जे क्रिया तिन्हें जानहु कुधर्म, तिन सरधै जीव लहै अशर्म ।
याकूँ गृहीत मिथ्यात्व जान, अब सुन गृहीत जो है अज्ञान ।।१२।।
एकान्तवाद-दूषित समस्त, विषयादिक पोषक अप्रशस्त ।
कपिलादिरचित श्रुत को अभ्यास, सो है कुबोध बहुदेन त्रास।।१३।।
जो ख्यातिलाभ पूजादि चाह, धरि करत विविध विधि देहदाह ।
आतम अनात्म के ज्ञानहीन, जे जे करनी तन करन छीन ।।१४।।
ते सब मिथ्याचारित्र त्याग, अब आतम के हित-पन्थ लाग ।
जगजाल-भ्रमणको देह त्याग,अब 'दौलत' निज आतम सुपाग ।।१५।।

तृतीय ढाल

आतम को हित है सुख, सो सुख आकुलता बिन कहिये ।
आकुलता शिव माँहि न तातै, शिव-मग लाग्यो चहिये ।

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरन शिव-मग सो दुविध विचारो।
जो सत्यारथ-रूप सो निश्चय, कारण सो व्यवहारो ॥१॥

परद्रव्यनि तें भिन्न आप में, रुचि सम्यक्त्व भला है।
आपरूप को जानपनो सो, सम्यक्ज्ञान कला है।
आपरूप में लीन रहे थिर, सम्यक्चारित सोई।
अब व्यवहार मोक्ष-मग सुनिये, हेतु नियत को होई ॥२॥

जीव अजीव तत्त्व अरु आस्रव, बंध रु संवर जानो।
निर्जर मोक्ष कहे जिन तिनको, ज्यों का त्यों सरधानो।
है सोई समकित व्यवहारी, अब इन रूप बखानो।
तिनको सुन सामान्य विशेषं, दृढ़ प्रतीति उर आनो ॥३॥

बहिरातम, अन्तरआतम, परमातम जीव त्रिधा है।
देह जीव को एक गिनें, बहिरातम तत्त्व मुधा है।
उत्तम मध्यम जघन त्रिविध के, अन्तर आतम ज्ञानी।
द्विविध संघ बिन शुद्ध-उपयोगी, मुनि उत्तम निज ध्यानी ॥४॥

मध्यम अन्तर आतम हैं जे, देशव्रती अनगारी।
जघन कहे अविरत समदृष्टी, तीनों शिवमगचारी।
सकल निकल परमातम द्वैविधि, तिन मे घाति निवारी।
श्री अरहंत सकल परमातम, लोकालोक निहारी ॥५॥

ज्ञानशरीरी त्रिविध कर्म-मल वर्जित सिद्ध महंता।
ते हैं निकल अमल परमातम, भोगें शर्म अनन्ता।
बहिरातमता हेय जानि तजि, अन्तर-आतम हूजै।
परमातम को ध्याय निरन्तर, जो नित आनन्द पूजै ॥६॥

चेतनता-बिन सो अजीव है, पंच भेद ताके हैं।
पुद्गल पंच बरन-रस, गन्ध-दो, फरस वसु जाके हैं।

जिय पुद्गल को चलन सहाई, धर्मद्रव्य अनरूपी।
तिष्ठत होय अधर्म सहाई, जिन बिनमूर्ति निरूपी ॥७॥

सकल द्रव्य को वास जास में, सो आकाश पिछानो।
नियत वर्तना निसदिन सो, व्यवहारकाल परिमानो।
यों अजीव अब आस्रव सुनिये, मन-वच-काय त्रियोगा।
मिथ्या अविरति अरु कषाय, परमाद सहित उपयोगा ॥८॥

ये ही आतम को दुःख कारण, तातें इनको तजिये।
जीव प्रदेश बंधे विधि सो सो, बंधन कबहुं न सजिये।
शम-दम तें जो कर्म न आवें, सो संवर आदरिये।
तपबल तें विधि-झरन निर्जरा, ताहि सदा आचरिये ॥९॥

सकलकर्म तें रहित अवस्था, सो शिव थिर सुखकारी।
इह विधि जो सरधा तत्त्वन की, सो समकित व्यवहारी।
देव जिनेन्द्र, गुरु परिग्रह बिन, धर्म दयाजुत सारो।
यहू मान समकित को कारण, अष्ट-अंगजुत धारो ॥१०॥

वसु मद टारि निवारि त्रिसठता षट् अनायतन त्यागो।
शंकादिक वसु दोष विना संवेगादिक चित पागो।
अष्ट अंग अरु दोष पचीसों तिन संक्षेपहुं कहिये।
बिन जाने तें दोष गुनन को कैसें तजिये गहिये ॥११॥

जिनवच में शंका न धारि वृष भव सुख वांछा भानै।
मुनि-तन मलिन न देख घिनावै तत्त्व कुतत्व पिछानै।
निज-गुन अरु पर-औगुन ढाके, वा निज धर्म बढ़ावै।
कामादिक कर वृषतैं चिगतै, निजपर को सु दिढावै ॥१२॥

धर्मी सो गउ-बच्छ-प्रीति-सम कर निज-धर्म दिपावै।
इन गुनतें विपरीत दोष वसु, तिनको सतत् खिपावै ॥

पिता भूप वा मातुल नृप जो, होय न तो मद ठानै ।
मद न रूप को, मद न ज्ञान को धन बल को मद भानै ।।१३।।

तप को मद न मद जु प्रभुता को, करै न सो निज जानै ।
मद धारै तो यही दोष वसु- समकित को मल ठानै ।
कुगुरु-कुदेव-कुवृष-सेवक की नहिं प्रशंस उचरै है ।
जिन मुनि, जिन श्रुत बिन कुगुरादिक तिन्हैं न नमन करै है
।।१४।।

दोषरहित गुणसहित सुधी जे सम्यक्दर्श सजे हैं ।
चरित मोहवश लेश न संजम, पै सुरनाथ जजे हैं ।।
गेही पै गृह में न रचै ज्यों जल तैं भिन्न कमल है ।
नगर नारी को प्यार यथा, कादे मे हेम अमल है ।।१५।।

प्रथम नरक बिन षट्-भू-ज्योतिष, वान भवन षड नारी ।
थावर विकलत्रय पशु में नहिं उपजत सम्यक् धारी ।।
तीनलोक तिहुं कालमांहि नहिं दर्शन सम सुखकारी ।
सकल धरम को मूल यही इस बिन करनी दुखकारी ।।१६।।
मोक्ष महल की प्रथम सीढ़ी, या बिन ज्ञान चरित्रा ।
सम्यकता न लहे, सो दर्शन, धारौ भव्य पवित्रा ।
'दौल' समझ सुन चेत सयाने, काल वृथा मत खोवै ।
यह नर भव फिर मिलन कठिन है, जो सम्यक् नहिं होवै ।।१७।

(चतुर्थ ढाल)

सम्यक् श्रद्धा धारि पुनि सेवहु सम्यक्ज्ञान ।
स्वपर अर्थ बहु धर्मजुत जो प्रगटावन भान ।।१।।

सम्यक् साथै ज्ञान होय पै भिन्न अराधौ ।
लक्षण श्रद्धा जानि दुहू में भेद अबाधौ ।

सम्यक् कारण ज्ञान ज्ञान कारज है सोई।
युगपत् होते हू प्रकाश दीपक तैं होई ।।२।।

तास भेद दो हैं परोक्ष परतछि तिनमांहीं।
मति श्रुत दोय परोक्ष अक्ष मनतैं उपजाहीं।
अवधिज्ञान मनपर्जय दो हैं देश प्रतच्छा।
द्रव्यक्षेत्र परिमाण लिये जानै जिय स्वच्छा ।।३।।

सकल द्रव्य के गुन अनंत परजाय अनन्ता।
जानै एकै काल प्रगट केवलि भगवन्ता।
ज्ञान समान न आन जगत मे सुख को कारण।
इहि परमामृत जन्म जरा मृतु रोग निवारण ।।४।।

कोटि जन्म तप तपै ज्ञान विन कर्म झरै जे।
ज्ञानी के छिनमांहि त्रिगुप्तितैं सहज टरैं ते।
मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो।
पै निज आतम ज्ञान विना सुख लेश न पायो ।।५।।

तातैं जिनवर कथित तत्त्व अभ्यास करीजै।
संशय विभ्रम मोहत्याग आपो लखि लीजै।
यह मानुष पर्याय सुकुल सुनिवो जिनवानी।
इह विधि गये न मिलै, सुमणि ज्यो उदधि समानी ।।६।।

धन समाज गज बाज राज तो काज न आवै।
ज्ञान आपको रूप भये फिर अचल रहावै।
तास ज्ञान को कारण स्वपर विवेक बखानो।
कोटि उपाय बनाय भव्य ताको उर आनो ।।७।।

जे पूरब शिव गये जाहिं अरु आगे जैहैं।
सो सब महिमा ज्ञानतनी मुनिनाथ कहै हैं।

विषय चाह दवदाह जगतजन ग्ररनि दझावै ।
तास उपाय न ग्रान, ज्ञान घनघान बुझावै ।।८।।

पुण्य पाप फलमांहि हरख बिलखो मैत भाई ।
यह पुद्गल परजाय उपजि विनसै थिर थाई ।
लाख बात की बात यही निश्चय उर लावो ।
तोरि सकल जग दंद फन्द निज ग्रातम ध्यावो ।।९।।

सम्यक्ज्ञानी होय बहुरि दृढ चारित लीजै ।
एकदेश ग्ररु सकल देश तसु भेद कहीजै ।
त्रसहिंसा को त्याग वृथा थावर न संघारै ।
पर वधकार कठोर निद्य नहि वयन उचारै ।।१०।।

जल मृतिका बिन ग्रौर नाहि कछु गहै ग्रदत्ता ।
निजवनिता बिन सकल नारिसौं रहै विरत्ता ।
ग्रपनी शक्ति विचार परिग्रह थोरो राखै ।
दश दिश गमन प्रमान ठान तसु सीम न नाखै ।।११।।

ताहू में फिर ग्राम गली गृह बाग बजारा ।
गमनागमन प्रमान ठान ग्रन सकल निवारा ।
काहू की धनहानि किसी जय हार न चिन्तै ।
देय न सो उपदेश होय ग्रघ बनिज कृषी तै ।।१२।।

कर प्रमाद जलभूमि वृक्ष पावक न विराधै ।
ग्रसिधनु हल हिंसोपकरण नहि दे यश लाधै ।
राग द्वेष करतार कथा कबहूं न सुनीजै ।
ग्रौरहु ग्रनरथदण्ड हेतु ग्रघ तिन्हें न कीजै ।।१३।।

धर उर समता भाव सदा सामायिक करिये ।
परब चतुष्टय मांहि पाप तज पोषध धरिये ।

भोग और उपभोग नियम करि ममत निवारै ।
मुनिको भोजन देय फेर निज करहिं अहारै ।।१४।।

बारह व्रत के अतीचार पन पन न लगावै ।
मरण समय संन्यास धारि तसु दोष नसावै ।
यों श्रावक व्रत पाल स्वर्ग सोलम उपजावै ।
तहंतै चय नर जन्म पाय मुनि ह्वै शिव जावै ।।१५।।

पंचम ढाल

मुनि सकलव्रती बड़भागी भवभोगन तैं वैरागी ।
वैराग्य उपावन माई चिन्तै अनुप्रेक्षा भाई ।।१।।
इन चिन्तत समसुख जागै जिमि ज्वलन पवन के लागै ।
जब ही जिय आतम जानै तबही जिय शिवसुखठानै ।।२।।

जोवन गृह गोधन नारी हय गय जन आज्ञाकारी ।
इन्द्रिय भोग छिन थाई सुरधनु चपला चपलाई ।।३।।
सुर असुर खगाधिप जेते मृग ज्यो हरि काल दले ते ।
मणि-मन्त्र-तन्त्र बहु होई मरतें न बचावै कोई ।।४।।
चहुँगति दुःख जीव भरे हैं परिवर्तन पंच करे हैं ।
सब विधि संसार असारा यामें सुख नाहिं लगारा ।।५।।
शुभ अशुभ करमफल जेते भोगै जिय एकहि तेते ।
सुत दारा होय न सीरी सब स्वारथ के हैं भीरी ।।६।।
जल पय ज्यों जिय तन मेला पै भिन्न २ नहीं भेला ।
तो प्रगट जुदे धनधामा क्यो ह्वै इक मिलि सुत रामा ।।७।।
पल रुधिर राधमलथैली, कीकस बसादितै मैली ।
नवद्वार बहैं घिनकारी अस देह करै किम यारी ।।८।।

जो योगन की चपलाई तातें ह्वै आश्रव भाई ।
आश्रव दुखकार घनेरे बुधिवन्त तिन्है निरवेरे ।।६।।
जिन पुण्यपाप नहिं कीना आतम अनुभव चित दीना ।
तिन ही विधि आवत रोके संवर लहि सुख अवलोके ।।१०।।
निज काल पाय विधि झरना तासों निज काज न सरना ।
तप करि जो कर्म खिपावै सोई शिवसुख दरसावै ।।११।।
किनहू न करौ न धरे को षट्द्रव्यमयी न हरे को ।
सो लोकमांहि बिन समता दुःख सहै जीव नित भ्रमता ।।१२।।
अन्तिम ग्रीवक लौं की हद पायो अनन्त बिरियां पद ।
पर सम्यकज्ञान न लाधौ दुर्लभ निज मे मुनि साधौ ।।१३।।
जो भाव मोहतें न्यारे दृग ज्ञान व्रतादिक सारे ।
सो धर्म जबै जिय धारै तबही सुख अचल निहारै ।।१४।।
सो धर्म मुनिन करि धरिये तिनकी करतूति उचरिये ।
ताको सुनिये भवि प्रानी अपनी अनुभूति पिछानी ।।१५।।

षष्ठम ढाल

षटकाय जीव न हनन तें सब विधि दरबहिंसा टरी ।
रागादि भाव निवार तें हिंसा न भावित अवतरी ।
जिनके न लेश मृषा न जल मृण हू बिना दीयौ गहै ।
अठदशसहस विधि शील धर चिदब्रह्म में नित रमि रहे ।।१।।
अन्तर चतुर्दश भेद बाहिर संग दशधा तें टलें ।
परमाद तजि चौकर मही लखि समिति ईर्या तें चलें ।
जग सुहितकर सब अहितहर श्रुति सुखद सब संशय हरें ।
भ्रमरोगहर जिनके वचन मुख चन्द्रतें अमृत झरें ।।२।।

छयालीस दोष बिना सुकुल श्रावक तनै घर असन को ।
लैं तप बढ़ावन हेतु नहि तन पोषतें तजि रसन को ।
शुचि ज्ञान सजम उपकरण लखि कै गहै लखि कै धरै ।
निर्जन्तु थान विलोक तन मलमूत्रश्लेषम् परिहरै ।।३।।

सम्यक् प्रकार निरोध मनवचकाय आतम ध्यावतै ।
तिन सुथिर मुद्रा देख मृगगण उपल खाज खुजावतै ।
रस रूप गंध तथा फरस अरु शब्द शुभ असुहावने ।
तिनमे न राग विरोध पंचेन्द्रिय जयन पद पावने ।।४।।

ममता सम्हारै थुति उचारै वन्दना जिनदेव को ।
नित करै श्रुतिरति करै प्रतिक्रम तजें तन अहमेव को ।
जिनके न न्हौन न दत धोवन लेश अम्बर आवरन ।
भू माहिं पिछली रयन मे कछु शयनि एकासन करन ।।५।।

इक बार दिन मे लै आहार खडे अलप निज पान मे ।
कचलोच करत न डरत परीषह सों लगे निज ध्यान मे ।
अरि मित्र महल मसान कंचन कांच निंदन थुतिकरन ।
अर्घावतारन असि प्रहारन में सदा समता धरन ।।६।।

तप तपै द्वादश धरै वृष दश रतनत्रय सेवै सदा ।
मुनि साथ मे वा एक विचरै चहै नहिं भव सुख कदा ।
यो है सकल सयमचरित सुनिये स्वरूपाचरन अब ।
जिस होथ प्रगटै आपनी निधि मिटै पर की प्रवृत्ति सब ।।७।।

जिन परमपैनी सुबुधि छैनी डारि अन्तर भेदिया ।
वरणादि अरु रागादि तै निज भाव को न्यारा किया।
निजमांहि निज के हेतु निज कर आपको आपौ गह्यौ ।
गुणगुणी ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मंझार कछु भेद न रह्यौ ।।८।।

जहँ ध्यानध्याताध्येय को न विकल्प वच भेद न जहा ।
चिद्भाव कर्म चिदेश करता चेतना किरिया तहां ।
तीनो अभिन्न अखिन्न शुध उपयोग की निश्चल दशा ।
प्रगटी जहां दृगज्ञानव्रत ये तीनधा ऐकै लसा ।।९।।
परमान नय निक्षेप को न उद्योत अनुभव में दिखै ।
दृग ज्ञान सुख बलमय सदा नहि आव भाव जु मो विखै ।
मैं साध्य साधक मैं अबाधक कर्म अरु तसु फलनि तैं ।
चिद्पिण्ड चण्ड अखण्ड सुगुन करण्ड च्युत पुनि कलनि तैं
।।१०।।
योचिन्त्य निज मे थिर भये तिन अकथ जो आनद लह्यौ।
सो इन्द्र नाग नरेन्द्र वा अहमिन्द्र के नाहीं कह्यौ ।
तबही सुकलध्यानाग्नि करि चउघाति विधि कानन दह्यौ।
सब लख्यो केवलज्ञान करि भविलोक को शिवमग कह्यौ।।११।।
पुनि घाति शेष अघाति विधि छिन मांहि अष्टम भू बसैं ।
वसु कर्म विनसैं सुगुन वसु सम्यक्त्व आदिक सब लसैं ।
संसार खार अपार पारावार तरि तीरहिं गये ।
अविकार अचल अरूप शुध चिद्रूप अविनाशी भये ।।१२।।
निज मांहि लोक अलोक गुण परजाय प्रतिबिम्बित भये ।
रहिहैं अनन्तानन्त काल यथा तथा शिव परिणये ।
धनि धन्य हैं जे जीव नरभव पाय यह कारज किया ।
तिनही अनादि भ्रमण पंच प्रकार तजि वर सुख लिया।।१३।।
मुख्योपचार दुभेद यो बड़भागि रतनत्रय धरैं ।
अरु धरेंगे ते शिव लहैं तिन सुयस जल जगमल हरैं ।
इमि जानि आलस हानि साहस ठानि यह सिख आदरौ ।
जबलौं न रोग जरा गहै तबलौं झटिति निजहित करो ।
।।१४।।

यह राग आग दहे सदा तातें समामृत सेइये ।
चिर भजे विषय कसाय अब तो त्याग निजपद बेइये ।
कहा रच्यो पर पद में न तेरो पद यहै क्यों दुःख सहै ।
अब दौल होउ सुखी स्वपद रचि दाव मत चूको यहै ।।१५।।

इक नव वसु इक वर्ष की तीज शुक्ल वैशाख ।
कर्यो तत्त्व उपदेश यह लखि बुधिजन की भाख ।
लघु धी तथा प्रमाद तैं शब्द अर्थ की भूल ।
सुधी सुधार पढो सदा जो पावो भवकूल ।।१६।।

जल के श्रोत को तुम जितना खोदोगे उतना ही अधिक पानी निकलेगा । ठीक उसी प्रकार तुम जितना ही अधिक सीखोगे उतनी ही तुम्हारी विद्या मे वृद्धि होगी । अतः, यद्यपि तुम्हे गुरु या शिक्षक के सामने उतना ही अपमानित और नीचा बनना पडे, जितना कि एक भिक्षुक को धनवान के समक्ष बनना पडता है, तथापि तुम विद्या सीखो क्योकि मनुष्यो में अधम वे ही हैं जो विद्या सीखने से विमुख होते हैं ।

श्रीमत्पूज्यपादस्वामिविरचितः

इष्टोपदेशः

यस्य स्वयं स्वभावाप्तिरभावे कृत्स्नकर्मणः ।
तस्मै संज्ञानरूपाय नमोऽस्तु परमात्मने ॥१॥

योग्योपादान योगेन दृषदः स्वर्णता मता ।
द्रव्यादिस्वादिसम्पत्तावात्मनोऽप्यात्मता मता ॥२॥

वरं व्रतैः पदं दैवं नाव्रतैर्बत नारकम् ।
छायातपस्थयोर्भेदः प्रतिपालयतोर्महान ॥३॥

यत्र भावः शिवं दत्ते द्यौः कियद्दूरवर्तिनी ।
यो नयत्याशु गव्यूतिं क्रोशार्द्धे किं स सीदती ॥४॥

हृषीकजमनातंक दीर्घकालोपलालितम् ।
नाके नाकौकसां सौख्यं नाके नाकौकसामिव ॥५॥

वासनामात्रमेवैतत्सुखं दुःखं च देहिनां ।
तथा ह्युद्वेजयंत्येते भोगा रोगा इवापदि ॥६॥

मोहेन संवृतं ज्ञानं स्वभावं लभते न हि ।
मत्तः पुमान्पादार्थानां यथा मदनकोद्रवैः ॥७॥

वपुर्गृहं धनं दाराः पुत्रा मित्राणि शत्रवः ।
सर्वथान्यस्वभावानि मूढ. स्वानि प्रपद्यते ॥८॥

दिग्देशेभ्यः खगा एत्य संवसंति नगे नगे ।
स्वस्वकार्यवशाद्यांति देशे दिक्षु प्रगे प्रगे ॥९॥

विराधकः कथ हंत्रे जनाय परिकुप्यति ।
त्र्यंगुलं पातयन्पंद्भ्यां स्वयं दंडेन पात्यते ॥१०॥

रागद्वेषद्वयीदीर्घनेत्राकर्षण कर्मणा ।
अज्ञानात्सुचिरं जोवः ससाराब्धौ भ्रमत्यसौ ॥११॥

विपद्भवपदावर्ते पदिके वातिबाह्यते ।
यावत्तावद्भवत्यन्याः प्रचुरा विपदः पुरः ॥१२॥

दुरर्ज्येनासुरक्षेण नश्वरेण धनादिना ।
स्वस्थमन्यो जनः कोऽपि ज्वरवानिव सर्पिषा ॥१३॥

विपत्तिमात्मनो मूढः परेषामिव नेक्षते ।
दह्यमानमृगाकीर्णवनातर तरुस्थवत् ॥१४॥

आयुर्वृद्धि क्षयोत्कर्षहेतु कालस्य निर्गम ।
वांछता धनिनामिष्टं जीवितात्सुतरा धन ॥१५॥

त्यागाय श्रेयसे वित्तमवित्तः संचिनोति यः ।
स्वशरीरं स पंकेन स्नास्यामीति विलंपति ॥१६॥

आरभे तापकाण्प्राप्तावतृप्ति प्रतिपादकान् ।
अते सुदुस्त्यजान् कामान् काम क. सेवते सुधीः ॥१७॥

भवंति प्राप्य यत्सगमशुचीनि शुचीन्यपि ।
स काय. सततापायस्तदर्थं प्रार्थना वृथा ॥१८॥

यज्जीवस्योपकाराय तद्देहस्यापकारकं ।
यद्देहस्योपकाराय तज्जीवस्यापकारकं ॥१९॥

इतश्चिन्तामणिर्दिव्य इत. पिण्याकखडकं ।
ध्यानेन चेदुभे लभ्ये क्वाद्रियतां विवेकिनः ॥२०॥

स्वसवेदनसुव्यक्तस्तनुमात्रो निरत्ययः ।
अत्यंतसौख्यवानात्मा लोकालोकविलोकनः ॥२१॥

सयम्य करणग्राममेकाग्रत्वेन चेतसः ।
आत्मानमात्मवान्ध्यायेदात्मनैवात्मनि स्थितं ॥२२॥

अज्ञानोपास्तिरज्ञानं ज्ञानं ज्ञानि समाश्रयः ।
ददाति यत्तु यस्यास्ति सुप्रसिद्धमिदं वचः ॥२३॥

परीषहाद्यविज्ञानादात्रवस्य निरोधिनी ।
जायतेऽध्यात्मयोगेन कर्मणामाशु निर्जरा ॥२४॥

कटस्य कर्त्ताहमिति संबधः स्याद् द्वयोर्द्वयोः ।
ध्यानं ध्येयं यदात्मैव संबंधः कीदृशस्तदा ॥२५॥

बध्यते मुच्यते जीवः सममो निर्ममः क्रमात् ।
तस्मात्सर्व प्रयत्येन निर्ममत्वं विचिंतयेत् ॥२६॥

एकोऽहं निर्ममः शुद्धो ज्ञानी योगीन्द्र गोचरः ।
बाह्याः संयोगजा भावा मत्तः सर्वेऽपि सर्वथा ॥२७॥

दु.खसंदोहभागित्वं सयोगादिह देहिनाम् ।
त्यजाम्येन ततः सर्वं मनोवाक्कायकर्मभिः ॥२८॥

न मे मृत्युः कुतो भीतिर्न मे व्याधिः कुतो व्यथा ।
नाहं बालो न वृद्धोऽहं न युवैतानि पुद्गले ॥२९॥

भुक्तोज्झिता मुहुर्मोहान्मया सर्वेऽपि पुद्गलाः ।
उच्छिष्टेष्विव तेष्वद्य मम विज्ञस्य का स्पृहा ॥३०॥

कर्म कर्महिताबन्धि जीवो जीवहितस्पृहः ।
स्वस्वप्रभावभूयस्त्वे स्वार्थं को वा न वंछति ॥३१॥

परोपकृतिमुत्सृज्य स्वोपकारपरो भव ।
उपकुर्वन्परस्याज्ञो दृश्यमानस्य लोकवत् ॥३२॥

गुरुपदेशादभ्यासात्संवित्तेः स्वपरांतरं ।
जानाति य. स जानाति मोक्षसौख्यं निरंतरम् ॥३३॥

ष्वस्मिन्सद भिलाषित्वाद भीष्टज्ञापकत्वतः ।
स्वयं हितप्रयोक्तृत्वादात्मैव गुरुरात्मनः ।।३४।।

नाज्ञो विज्ञत्वमायाति विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति ।
निमित्तमात्र मन्यस्तु गतेर्धर्मास्तिकायवत् ।।३५।।

अभवच्चित्तविक्षेप एकांते तत्त्वसंस्थितिः ।
अभ्यस्येदभियोगेन योगी तत्वं निजात्मनः ।।३६।।

यथा यथा समायाति संवित्तौ तत्त्वमुत्तमम् ।
तथा तथा न रोचंते विषया. सुलभा अपि ।।३७।।

यथा यथा न रोचंते विषयाः सुलभा अपि ।
तथा तथा समायाति संवित्तौ तत्वमुत्तमम् ।।३८।।

निशामयति नि.शेसमिंद्रजालोपमं जगत् ।
स्पृहयत्यात्मलाभाय गत्वान्यत्रानुतप्यते ।।३९।।

इच्छत्येकातसंवासं निर्जनंजनितादरः ।
निजकार्यवशात्किंचिदुक्त्वा विस्मरति द्रुतं ।।४०।।

ब्रुवन्नापि हि न ब्रूते गच्छन्नपि न गच्छति ।
स्थिरीकृतात्मातत्त्वस्तु पश्यनपि न पश्यति ।।४१।।

किमिदं कीदृशं कस्य कस्मात्क्वेत्य विशेषयन् ।
स्वदेहमपि नावैति योगी योगपरायण ।।४२।।

यो यत्र निवसन्नास्ते स तत्र कुरुते रतिं ।
यो यत्र रमते तस्मादन्यत्र स न गच्छति ।।४३।।

अगच्छंस्तद्विशेषणामनभिज्ञश्च जायते ।
अज्ञाततद्विशेषस्तु बद्धयते न विमुच्यते ।।४४।।

पर. परस्ततो दुःखमात्मैवात्मा ततः सुखं ।
अत एव महात्मानस्तन्निमित्तं कृतोद्यमाः ।।४५।।

अविद्वान्पुद्गलद्रव्यं योऽभिनदति तस्य तत् ।
न जातु जंतोः सामीप्यं चतुर्गतिषु मुंचति ।।४६।।

आत्मानुष्ठाननिष्ठस्य व्यवहारबहिःस्थितेः ।
जायते परमानंदः कश्चिद्योगेन योगिनः ।।४७।।

आनंदो निर्दहत्युद्ध कर्मेन्धनमनारतं ।
न चासौ खिद्यते योगीर्बहिर्दुःखेष्वचेतनः ।।४८।।

अविद्याभिदुरं ज्योतिः परं ज्ञानमयं महत् ।
प्रष्टव्यतदेष्टव्यं तदद्रष्टव्यं मुमुक्षुभिः ।।४९।।

जीवोऽन्यः पुग्दलश्चान्य इत्यसौ तत्त्वसंग्रहः ।
यदन्यदुच्यतेकिंचित्सोऽस्तु तस्यैव विस्तरः ।।५०।।

इष्टोपदेशमिति सम्यगधीत्य धीमान्
मानापमानसमतां स्वमताद्वितन्य ।
मुक्ताग्रहो विनिवसन्सजने वने वा
मुक्तिश्रियं निपपमामुपयाति भव्यः ।।५१।।

।। इति श्रीइष्टोपदेशः समाप्तः ।।